अप्रैल - सितंबर 2019
वर्ष - 17 अंक - 2

सुगन्ध

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड
की गृह-पत्रिका

राजभाषा के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु संगठन को राजभाषा कीर्ति पुरस्कार (प्रथम)

राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन हेतु संगठन को राजभाषा गौरव सम्मान (प्रथम)

अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक
राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड,
विशाखपट्टणम

संदेश

राष्ट्रीय इस्पात निगम की हिंदी गृह पत्रिका 'सुगंध' में प्राय: तकनीकी व सामयिक मुद्दों पर चर्चा करने की परंपरा रही है। मुझे प्रसन्नता है कि 'सुगंध' के सितंबर अंक को दक्षिण भारत की कला-संस्कृति, लोक-जीवनशैली एवं आचार-व्यवहार विषय को समर्पित किया गया है और अंक की सार्थकता सिद्ध करने के लिए विषय विशेषज्ञों की रचनाओं को इसमें जगह दी जा रही है, ताकि सुधी पाठकों को इसका पूरा लाभ मिल सके।

यह माना जाता है कि हिंदी ने उत्तर और दक्षिण को एकजुट करने में जितना सहयोग दिया है, उतना शायद कहीं और से सहयोग नहीं मिला होगा। बदलती परिस्थितियों एवं प्रौद्योगिकी मैत्री ई-टूल्स विकसित होने से भाषाओं के प्रचार-प्रसार के कार्य को काफी बल मिला है और इससे हमारी एकता और अखंडता सुदृढ़ हुई है। इन सबके बीच 'सुगंध' द्वारा किए जा रहे प्रयासों से भाषा, विशेष रूप से हिंदी के विकास को समुचित गति मिलेगी। आशा है यह अंक पठनीय एवं संग्रहणीय होगा।

इस अभिनव प्रयास के लिए राजभाषा विभाग को बधाई।

प्रदीप रथ

(प्रदोष कुमार रथ)

दिनांक: 30.09.2019

निदेशक (कार्मिक)
राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड
विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र

संदेश

'सुगंध' पत्रिका के नवीनतम अंक का दक्षिण भारत की कला-संस्कृति, जीवनशैली व आचार-व्यवहार आदि विषय पर समर्पित किया जाना बहुत उत्तम व अनुकरणीय है। भौगोलिक रूप से तेलुगुभाषी प्रदेश आंध्र व तेलंगाना उत्तर भारत और दक्षिण भारत के बीच एक मजबूत सेतु का काम करते हैं। स्वाधीनता संग्राम के साथ-साथ देश के सामासिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और भाषाई एकता में दक्षिण के राज्यों का बहुत उल्लेखनीय योगदान रहा है। लेकिन भाषाई अड़चनों एवं अन्य कतिपय कारणों से उपरोक्त विशेषताओं का प्रचार-प्रसार कम हुआ है। हालाँकि यह भी सच है कि भारत इतना विशाल व व्यापक संस्कृतियों वाला देश है कि इसे कम समय में समझ पाना आसान नहीं है।

मेरा मानना है कि भारत की विविधताओं, सांस्कृतिक विरासतों, जीवनशैली एवं लोकप्रथाओं को व्यापकता से रेखांकित किया जाना चाहिए एवं उनमें छिपे सभ्यता एवं संस्कृति के गूढ़तम तत्वों का अन्वेषण होना चाहिए। ऐसे अंकों के प्रकाशन से देश के अन्य भागों के पाठक विशेष रूप से लाभान्वित होंगे और भारतीय समाज की भाषाई व सामाजिक एकता सुदृढ़ होगी तथा भारत की एकता और अखंडता को बहुत लाभ होगा।

ऐसे अभिनव प्रयासों के लिए मैं राजभाषा विभाग को बधाई देता हूँ और 'सुगंध' के उत्तरोत्तर विकास की कामना करता हूँ।

(किशोर चंद्र दास)

दिनांक: 30.09.2019

हर एक व्यक्ति सिपाही हो...

इस बार विमर्श को एक ऐतिहासिक प्रसंग से जोड़ते हुए छेड़ता हूँ। 02 अक्टूबर, 1950 को लौह पुरुष सरदार वल्लभ भाई पटेल बापू के जन्मदिवस समारोह में शामिल होने के लिए इंदौर आए थे। अपने संबोधन में कहा, 'हमारे नेता पंडित जवाहर लाल नेहरू हैं। बापू ने अपने जीवनकाल में अपना उत्तराधिकारी नियुक्त किया और उसकी घोषणा कर दी। बापू के तमाम सिपाहियों का धर्म है कि वे बापू के आदेश का पालन करें, जो उस आदेश को हृदयपूर्वक उसी भावना से स्वीकार नहीं करता, वह ईश्वर के सामने पापी सिद्ध होगा। मैं बेवफा सिपाही नहीं हूँ। मैं जिस स्थान पर हूँ। इसका मुझे कोई ख्याल नहीं है। मैं इतना ही जानता हूँ, जहाँ बापू ने मुझे रखा था, अब भी मैं वहीं हूँ।'

सरदार पटेल के इस उद्‌गार के कई राजनीतिक व गैर-राजनीतिक अर्थ लगाए जा सकते हैं। क्योंकि हमारा मन देश-काल, परिस्थिति एवं अपने स्वयं के मनोभावों से जोड़कर भाव ग्रहण करता है और उस भाव में अपने प्रयोजन के अनुरूप आसान-सा व्यक्तिगत व्याख्याएँ ढूँढ़ लेता है। लेकिन सामाजिक धरातल पर जो व्याख्याएँ होती हैं, वे पूरे समाज पर अपना अहम प्रभाव छोड़ती हैं।

सरदार पटेल के इस कथन का सीधा व स्पष्ट अर्थ यह निकाला गया कि गाँधी जी ने उन्हें जो कार्य सौंपा था, वे उसे बखूबी निभा रहे थे। उनके मन में गाँधी जी के मनोभावों के अनुरूप देशसेवा करने का भाव था। उनका मानना था कि देश का हर नागरिक एक सैनिक की भाँति अपने कर्तव्यों का पालन निष्ठापूर्वक करे। गाँधीजी भी अक्सर यही कहा करते थे कि 'हमें हर विशेष स्थिति में अपना काम उपलब्ध सीमित संसाधनों से वैसे ही पूरा करना चाहिए, जैसा कि एक सिपाही करता है। सुविधाओं के अभाव का बहाना तो काम टालने का एक तरीका भी हो सकता है।'

मेरा मानना है कि सरदार पटेल की बातों में हिंदी के प्रति हमारी निष्ठा के लिए भी कुछ भाव हैं। वर्तमान माहौल में हिंदी का जो विकास हुआ है, उसके लिए हिंदी के अनेकानेक सिपाहियों ने अपने जीवन के अनमोल क्षण, धन व विवेक का निवेश किया है। अपनी सुख-सुविधाओं एवं आनंद का परित्याग किया है या फिर यूँ कहें कि अपने सुख-सुविधाओं की तलाश भी हिंदी की सेवा में ही की है।

हालाँकि आज भी राजभाषा के रूप में हिंदी की हालत न तो बहुत सम्मानजनक है और न ही इसके लिए विशेष मनोयोग से प्रयास हो रहे हैं। वो तो भला हो, भारत की विशाल ग्रामीण जनसंख्या की, अर्द्ध शिक्षित जनता की, अभावग्रस्त लोगों व हिंदी सेवियों की, जिन्होंने अपनी बोलियों व सांस्कृतिक विरासतों के माध्यम से हिंदी के यश को देश-विदेश तक फैलने का असीमित आकाश प्रदान किया है। वरना संवैधानिक दायरे में रहकर कार्यालयीन हिंदी के विस्तार व प्रसार के दायित्व का बोझ तो सरकार व उसके अमला के ओहदेदारों पर भरपूर डाला गया है, फिर भी अभी तक आशा व अभिलाषा के अनुरूप परिणाम नहीं मिल पाए हैं।

वैश्वीकरण का विमर्श आने के बाद से बोलचाल की हिंदी के विस्तार में भारी बढ़ोत्तरी हुई है। हिंदी बाजार की भाषा भी बनी। संपर्क भाषा व राष्ट्रभाषा की कल्पनाओं के दायरे में आज हिंदी पहुँच रही है या फिर विश्व भाषा की अवधारणाओं में शुमार होने के लिए आज हिंदी व्यग्र भी है। तकनीक और विज्ञान की भाषा बनने की राह पर भी तेजी से बढ़ी है, पर राजभाषा के लिए मलाल अभी भी है। ऐसे में जब हम लक्ष्य से पिछड़ रहे हों तो सिपाही बनकर दायित्व निभाने हेतु गाँधी जी के विचार और भी प्रासंगिक होकर हमें अभिप्रेरित करने लगते हैं।

विश्व आज गाँधी जी की 150वीं जयंती मना रहा है, देश चंद्रयान-2 मिशन पूरा करने वाला है और राजभाषा हिंदी भी अपनी 70वीं वर्षगांठ मना रही है। दुनिया की सबसे बड़ी व महत्वपूर्ण पंचायत संयुक्त राष्ट्र संघ में बार-बार हिंदी गूँजने लगी है। मेरी समझ से इससे बेहतर अभिप्रेरण का समय और क्या हो सकता है? यह तो पुन: जागरण का माहौल है, अपने खाते का लेखा-जोखा करने का वक्त है। अपने आपको तौलने का वक्त है। सांस्कृतिक विरासत में कुछ और चटक रंग भरने का वक्त है अर्थात गाँधी जी के 'सिपाहियाना अंदाज' अपनाने का वक्त है।

इन्हीं शब्दों के साथ प्यार व आत्मीयता से पगी 'सुगंध' का यह दक्षिण भारत की विशाल व उन्नत संस्कृतियों एवं विरासतों की जानकारियों से भरा विशेषांक आपके समक्ष प्रस्तुत है। आशा है 'सुगंध' का यह वय:संधि वाला अंक-2, वर्ष-17 (सुगंध 17 वर्ष पूरा करके 18 वें वर्ष में प्रवेश कर रही है।) आपकी भावनाओं पर अपना प्रभाव अवश्य छोड़ेगा। मैं राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड, सुगंध के संपादक मंडल और स्वयं की ओर से भी सभी विद्वान रचनाकारों, पाठकों एवं अन्य सभी अंशधारकों के प्रति आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने सुगंध के इस प्रयाण को सफल बनाया है और प्यार व आत्मीयता से सजाया व संवारा है और साथ ही सहयोग देने हेतु विनम्र अपील भी करता हूँ।

संपादक

विषयसूची

सृजनात्मक स्तंभ

लेख

भारत की एकता एवं अखंडता...	डॉ भीम सिंह	7
दक्षिण के कुछ विशिष्ट व्यंजन	डॉ जे के एन नाथन	11
हिंदी के विकास में दक्षिण भारत का योगदान	डॉ सी जयशंकर बाबु	14
तेलंगाना में देवी पूजन की एक परंपरा: बोनालु	डॉ गुर्रमकोंडा नीरजा	18
बतुकम्मा	डॉ अनीता गांगुली	22
केरल का लोक रंग: एक परिचय	डॉ कृष्ण कुमार पासवान	24
आंध्र का लोकगीत साहित्य	डॉ डी सत्य लता	26
निजाम शासन: परिस्थितियाँ एवं स्वतंत्रता संग्राम	श्री विगुल्ल बाबु	30
लोक संस्कृति की विस्मृत नाट्य कृति नटकौरा	डॉ रश्मि शील	45
बात की बात (व्यंग्य)	श्रीमती सुधा गोयल	60
मंडूक	डॉ दादूराम शर्मा	65

कहानी

नजरिया (लघुकथा)	श्रीमती आशा शर्मा	21
प्रायश्चित्त प्रलाप	डॉ राजकुमार सिंह	42
प्रासंगिकता व उपयोगिता (लघुकथा)	श्रीमती आशा गुप्ता	44
कृष्णचूड़ा	श्रीमती रजनी शर्मा 'बस्तरिया'	48
ढोल की तान	श्री संदीप शर्मा	61
वृद्धाश्रम (लघुकथा)	श्री सीताराम गुप्ता	67

बाल-सुगन्ध

प्रदूषण नियंत्रण में वैयक्तिक भूमिका	सुश्री सना सिंह	58
स्वरोजगार हेतु सामर्थ्य विकास	सुश्री एन मल्लिका पद्मा	59

कविता

प्रोफेसर ऋषभदेव शर्मा की कविताएँ 54-55

श्री आनंद पाण्डेय 'तनहा' की गजलें 56-57

मानक स्तंभ

कार्य-कलाप 33-40

संगीत सरिता 41

वी एस पी के बढ़ते कदम

समस्या समाधान व सौंदर्य का अद्भुत संयोजन - कणिति जलाशय-2 51-52

अध्यात्म

सुख 53

आओ भाषा सीखें 68

जरा गौर करें 70

'सुगन्ध'

वी एस पी की त्रैमासिक गृह-पत्रिका

वर्ष-17 अंक-2 अप्रैल-सितंबर, 2019

संपादक

ललन कुमार

उप-संपादक

वी सुगुणा

गोपाल

प्रकाशन सहयोग

एम वी पडाल

जी आर ए नायुड

डॉ जे के एन नाथन

संपादकीय कार्यालय

राजभाषा विभाग

कमरा सं.245, पहला तल

मुख्य प्रशासनिक भवन

विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र

विशाखपट्टणम-530031

दूरभाष व फैक्स: 0891-2518471

मोबाइल: 9989317329 & 9989888457

ई-मेल: vspsugandh@gmail.com, vspsugandh@rediffmail.com

'सुगन्ध' में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचार लेखकों के अपने हैं एवं उनके प्रति 'विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र प्रबंधन' जिम्मेदार नहीं है।

'सुगंध' पत्रिका हमारे संगठन के वेबसाइट 'www.vizagsteel.com' के 'Publications' लिंक में भी उपलब्ध है।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की 137वीं बैठक का आयोजन

संगठन की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक 29 सितंबर, 2019 को संपन्न हुई। बैठक में समिति के समक्ष पिछली तिमाही के दौरान संगठन में संचालित राजभाषा गतिविधियों का विवरण प्रस्तुत किया गया। अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ एवं समिति के सदस्यों ने संगठन में राजभाषा के बेहतर कार्यान्वयन के लिए टिप्पणियों में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने हेतु सभी विभागाध्यक्षों का आह्वान किया। साथ ही संगठन को राजभाषा कीर्ति पुरस्कार (प्रथम) प्राप्त होने के उपलक्ष्य में आर आई एन एल समूह को बधाई दी। बैठक में निदेशक (वित्त) श्री वी वी वेणुगोपाल राव, निदेशक (वाणिज्य) श्री डी के मोहंती, कार्यपालक निदेशक गण तथा महाप्रबंधक गण उपस्थित थे। बैठक का संचालन समिति के सदस्य- सचिव एवं उप महाप्रबंधक (राजभाषा) श्री ललन कुमार ने किया।

भारत की एकता और अखंडता में दक्षिण भारत का योगदान

- डॉ भीम सिंह -

इस विषय पर बात करने से पूर्व हमारे लिए यह जानना जरूरी होगा कि भारत देश की संकल्पना कैसे अस्तित्व में आयी? भारत में 'उत्तरायण' और 'दक्षिणायण' की संकल्पना ने जन्म क्यों लिया? भारत की एकता और अखंडता के आधारभूत कारक कौन-कौन से हैं? इन सवालों और जिज्ञासाओं के संदर्भ में ही यह विषय अपने को प्रकट कर सकता है। भारत की भौगोलिक एकता के बारे में 'वायु पुराण' में लिखा है कि -

'उत्तर यत्समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणं।
वर्ष तद्भारतम नाम भारती यत्र संतति।।'

अर्थात् समुद्र से उत्तर और हिमालय से दक्षिण वाला भू-भाग यहाँ हमेशा से एक देश माना जाता रहा है। भारत की मोक्षदायिका नगरियों की सूची में भी उत्तर और दक्षिण दोनों भू-भागों के नगर सम्मिलित हैं, जिनका धार्मिक भाव से नामोच्चार उत्तर और दक्षिण दोनों भागों की जनता सदा करती रही है -

'अयोध्या-मथुरा-माया-काशी-कांची-अवंतिका।
पुरी द्वारावती चैव सप्तैते मोक्षदायिका।।'

कुबेरनाथ राय के अनुसार "भारत" शब्द की अनेक व्याख्याएँ हैं। यास्क के अनुसार, भरत का अर्थ आदित्य होता है और उससे उत्पन्न प्रजा भारती है। अत: भारत शब्द का सही और सच्चा अर्थ होता है सूर्य-संतान। अर्थात प्रकाश या तेज।"[1] भारत शब्द बहु-अर्थी है, जो भाषिक, सांस्कृतिक, प्राकृतिक और भौगोलिक अर्थ-संदर्भों से जुड़ा हुआ है। कालिदास ने इसे 'भरत-चक्रवर्ती' के रूप में प्रस्तुत किया था। भारत की एक छवि विदेशी यात्रियों ने बनाई, जिसमें से मेगास्थनीज ने 'इंडिका' लिखकर यूनान से इस महादेश का परिचय कराया। चीनी यात्रियों ने इस देश की भिन्न छवि प्रस्तुत की। अरब और फारस से आने वाले यात्रियों ने इसे 'हिंदुस्तान' के नाम से अभिहित किया। मध्यकाल में यूरोप से अनेक यात्री आये, जिन्होंने यहाँ की विविधता और समृद्धि को रेखांकित किया। वास्को-डि-गामा ने जल-मार्ग के द्वारा भारत की खोज करके दक्षिण भारत से यूरोप का परिचय कराया। इससे पूर्व प्राचीन काल से ही दक्षिण भारत का व्यापार अरब और यूरोप के साथ होता आया था। इसलिए "अरब कल्याणम" की अवधारणा का विकास केरल में हो चुका था। इससे भारत की उत्तर में स्थल-मार्ग और दक्षिण में जल-मार्ग द्वारा दुनिया से जुड़ने की वास्तविकता का परिचय होता है। आधुनिक काल में गुलाम भारत की छवि का निर्माण सर जॉन स्ट्रेची ने 'इंडिया' पुस्तक में वर्णित किया है। उनके अनुसार "हिंदुस्तान महज एक सुविधाजनक नाम था। यह एक विशाल क्षेत्र का नाम था, जिसमें कई सारे राष्ट्र साथ-साथ रह रहे थे।"[2] अर्थात् भारत की ऐतिहासिक स्थिति को नकारने की कोशिश ब्रिटिश हितों से जुड़े वर्ग की रही थी।

भारत बहुलतावादी जीवन-संस्कृतियों को अपने में आत्मसात किए हुए है। निषाद-द्रविड़-आर्य-किरात इन चारों महाकुलों से भारतीयता का निर्माण हुआ है। दक्षिण भारत की भौगोलिक पृथकता में विंध्याचल पर्वत की भूमिका को भी स्वीकार करना होगा। गोदावरी, कृष्णा और कावेरी के मध्य या किनारे पर दक्षिण की जीवन-संस्कृति का विकास हुआ है। उत्तर और दक्षिण के मध्य भौगोलिक सीमाओं ने उतनी दूरी नहीं पैदा की, जितनी कि सियासत ने। भारतीय जनमानस ने सांस्कृतिक-दृष्टि से एकात्मकता की ओर रुख किया है। सामाजिक बाधाओं के होते हुए भी यह विविधता में एकता या अनेकता में एकता को आत्मसात किए हुए है। इसी से इसकी भारतीयता विकसित हुई है। आधुनिक भारत में लोकतंत्र और संविधान के उदय ने इस एकता और अखंडता को पुख्ता किया है।

इस महादेश की एकता के निर्माण में दक्षिण या द्रविड़-संस्कृति ने किस रूप में भूमिका निभाई है, उसे हम बिंदुवार इस रूप में समझ सकते हैं।

1. भारतीय उपमहाद्वीप की सभ्यता के उद्घाटक:

भारत की सिंधु-घाटी सभ्यता के आदिपूर्वज द्रविड़ रहे हैं। इस मत की पुष्टि पुरातात्त्विक और ऐतिहासिक स्रोतों से अनुमानित हुई है। यह सभ्यता नगरीय स्वरूप के साथ व्यापार को प्राथमिकता देती थी। यह मातृसत्तात्मक व्यवस्था थी। पुरातत्त्ववेत्ता बृजमोहन पांडे का मानना है कि "इस सभ्यता की खूबी उसका सौंदर्य-बोध है, जो राज-पोषित या धर्म-पोषित न होकर समाज-पोषित था।"[3] यह सभ्यता पानी के निकास की दृष्टि से आज भी मानव सभ्यता की पथ-प्रदर्शक बनी हुई है। इस पर भारत के इतिहास की प्राचीन धरोहर खड़ी है। इतिहासकार के.ए. नीलकंठ शास्त्री ने भारत के इतिहास को नया परिप्रेक्ष्य प्रदान किया है।

> आधुनिक भारत के निर्माताओं ने विविध क्षेत्रों में भारत को आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से संबद्ध किया, जिनमें भौतिकी के क्षेत्र में सी.वी. रमन और एस. चंद्रशेखर, अभियांत्रिकी के क्षेत्र में मोक्षगुंडम विश्वेश्वरैया, गणित के क्षेत्र में एस. रामानुजम, इसरो और रक्षा अनुसंधान डी आर डी ओ में ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, कृषि क्षेत्र में एम.एस. स्वामिनाथन, दुग्ध के क्षेत्र में वर्गिस कुरियन आदि का नाम विशेष आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है।

2. दर्शन और धर्म के क्षेत्र में अवदान:

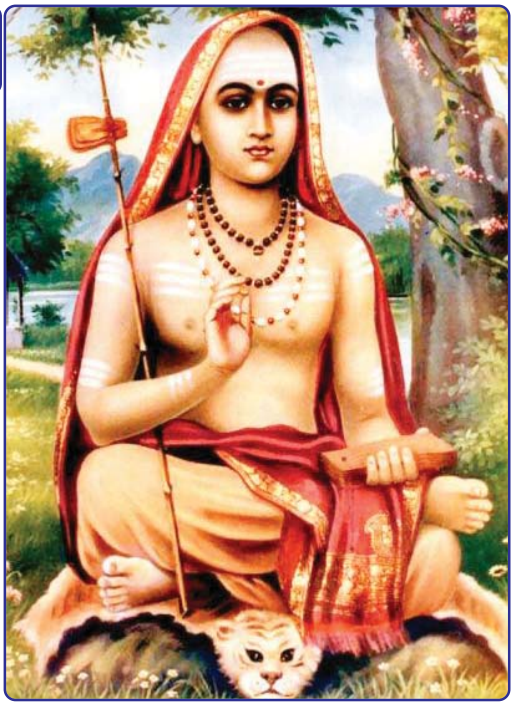

भारतीय चिंतन-परंपरा में चार पुरुषार्थों की चर्चा होती है, जिसमें से धर्म, अर्थ, काम विषयक चिंतन दक्षिण भारत में मिलता है। अंतिम पुरुषार्थ मोक्ष जैन और बौद्ध मत के प्रभाव से इस कड़ी का हिस्सा बनता है। इस बात की पुष्टि के दामोदरन की पुस्तक 'भारतीय चिंतन परंपरा' से होती है। अत: भारतीय जीवन-पद्धति के आधारभूत नियामकों में दक्षिण भारत की वैचारिक भूमिका रही है।

वेदांत की तीन प्रमुख चिंतन धाराओं - अद्वैत, विशिष्टाद्वैत और द्वैताद्वैत के प्रतिष्ठापक आदि शंकराचार्य (केरल), रामानुजाचार्य (तमिलनाडु) और माधवाचार्य (मध्वाचार्य) की जन्म-भूमि ही नहीं, प्रत्युत चिंतन-भूमि भी दक्षिण भारत थी। चार मठों की स्थापना (बदरिकाश्रम, श्रृंगेरी, द्वारिका और पुरी पीठ) ने भारत की सांस्कृतिक एकता और अखंडता को मजबूत आधार दिया। अनेक शैव और वैष्णव भक्तों ने तमिल भाषी प्रदेश में जन्म लिया। राम-भक्ति का प्रारंभिक पुष्ट प्रमाण दक्षिण के आलवार संतों में मिलता है।

तैलंग वल्लभाचार्य (1479-1531, तेलुगु) ने कृष्ण केंद्रित पुष्टि संप्रदाय की स्थापना की। यह मत, रुद्र-संप्रदाय या शुद्धाद्वैत-दर्शन से संबद्ध था। वल्लभाचार्य ने ब्रज-क्षेत्र को अपनी कर्म-भूमि बनाया और संगीत आधारित बाल कृष्ण के गीतों के लिए सूरदास और अन्य भक्त कवियों को प्रेरणा दी। ब्रज संस्कृति के निर्माण में विशेषकर कृष्ण भक्ति के क्षेत्र में इस मत के कीर्तनों ने लोक-प्रसिद्धि पाई है।

3. भक्ति-आंदोलन के उदय में दक्षिण भारत की भूमिका:

भारतीय जनता के मूल्य-निर्माण में स्वाधीनता-आंदोलन से इतर भक्ति-आंदोलन ने विशिष्ट भूमिका निभाई है। इस आंदोलन की जमीन दक्षिण में तैयार हुई। इस संबंध में एक उक्ति प्रचलित है -

'भक्ति द्राविड़ उपजी लाये रामानंद।'

भारतीय कविता का सर्वोत्तम साहित्य इस आंदोलन से प्रस्फुटित हुआ है। इस आंदोलन की वैचारिकी से लेकर इसकी अभिव्यक्ति में तमिल, कन्नड़, तेलुगु और मराठी भक्त कवियों-कवयित्रियों के अवदान को कैसे नजरंदाज किया जा सकता है। भारतीय परंपरा के दो प्रकार हैं। पहला 'मार्ग' और दूसरा 'देशी'। इनके मध्य निरंतर संवाद की प्रक्रिया रही है। इससे भारत की एकता और अखंडता मजबूत हुई है। इसे साधारण शब्दों में 'शास्त्र' और 'लोक' के नाम से भी जाना जाता है। तमिलनाडु के भक्त कवियों ने इस अलख को जगाया। शिल्पी, किसान और निम्न वर्ग के लोगों ने नयी देशी आधुनिकता का निर्माण किया, जिसमें जाति-पांति के बंधन भक्ति में स्वीकार नहीं किए गए। कन्नड़ में वासव-मार्ग की शुरुआत हुई, वचन-साहित्य ने मानव की गरिमा को महत्त्व दिया, अक्क महादेवी ने भक्ति की सामाजिकता की दिशा में पहल की। नामदेव, एकनाथ, ज्ञानेश्वर और तुकाराम ने अभंगों और भजनों के द्वारा जनता के विभिन्न तबकों के मध्य एकात्मकता के बीज-सूत्र बोये। त्यागराज ने कर्नाटक संगीत के आधार पर भारतीय शास्त्रीय संगीत को समृद्ध किया। त्यागराज ने राम की स्तुति में हजारों गीतों और पदों का सृजन तेलुगु में किया, जो आज भी भक्ति की अजस्र धारा के रूप में भारतीय जनता के मध्य सेतु का काम कर रहे हैं।

4. भारतीय साहित्य और लिपि में अनेकता के बावजूद एकता के सूत्र:

भारतीय साहित्य की अनेक भाषाएँ हैं, लेकिन उसका स्वर एक है। भारतीय साहित्य के उपजीव्य ग्रंथ 'रामायण' और 'महाभारत' की कहानी दक्षिण के बिना अधूरी है। 'बृहत्कथा' ने भारतीय कथा संसार ही नहीं, विश्व कथा जगत को प्रभावित किया। इसके रचनाकार गुणाढ्य को गोदावरी तट पर बसे प्रतिष्ठान का निवासी माना है और किसी सातवाहन राजा का कृपा पात्र बताया गया है। कंबोडिया के 875 ई. के एक शिलालेख में गुणाढ्य का नाम आया है। यह रचना आज उपलब्ध नहीं है, लेकिन इसके बारे में 'कथा-सरित्सागर' के प्रथम लंबक कथा-पीठ में उल्लेख हुआ है।

गुणाकर मुले ने 'भारतीय लिपियों की कहानी' लिखी है, जिसमें उन्होंने ब्राह्मी लिपि के दो प्रकार बताये हैं - उत्तरी ब्राह्मी और दक्षिणी ब्राह्मी। अर्थात भाषा-परिवार भले ही भिन्न हो, लेकिन भारतीय लिपियों का उद्गम एक है। इस रूप में हम एक हैं और अखंड भारत की संकल्पना के उत्तराधिकारी साझे तौर पर हैं। जैसे "हमारे देश की सारी लिपियाँ उर्दू को छोड़कर एक मूल लिपि ब्राह्मी से विकसित हुई हैं। आज दक्षिण भारत की लिपियाँ कुछ भिन्न दिखाई देती हैं, परंतु इनका विकास भी ब्राह्मी से ही हुआ है।"[4]

5. दक्खिनी हिंदी का क्षेत्र:

भारत की सर्वाधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा हिंदी के ऐतिहासिक और पूर्ववर्ती रूप का विकास दक्षिण में हुआ। इसे दक्खिनी हिंदी की उपाधि से नवाजा गया। खड़ी बोली पर आधारित आज की परिनिष्ठित हिंदी और उर्दू का पूर्व रूप ही दक्खिनी है, जिसका विकास ईसा की चौदहवीं शती से अठारहवीं शती तक दक्षिण के बहमनी, कुतुबशाही और आदिलशाही आदि राज्यों के सुल्तानों के संरक्षण में हुआ था। "गजेटियर ऑफ इंडिया में 'दकन' में ले जाई गई पुरानी हिंदी को ही दक्खिनी कहा गया है।"[5] भाषाविद सुनीतिकुमार चाटुर्ज्या और महापंडित राहुल सांकृत्यायन ने खड़ी बोली हिंदी के सर्वप्रथम कवि और आदि रूप को दक्खिनी से जोड़ा है। इस रूप में देखें तो आधुनिक खड़ी बोली हिंदी के उद्भव और विकास में दक्खिनी क्षेत्र और दक्खिनी भाषा का विशेष अवदान रहा है। दक्षिण भारत में हिंदी या हिंदुस्तानी के प्रचार-प्रसार में यहाँ के विभिन्न भाषा-भाषियों ने मिलकर समेकित रूप से इसे अपनाया। इनके अवदान से ही हिंदी की संपर्क भाषा के रूप में स्थिति मजबूत हुई। राज-भाषा और प्रादेशिक भाषाओं के मध्य एकता के सूत्र साहित्य के अनुवाद से सशक्त हुए। आजादी पूर्व और आजादी के पश्चात अनेक हिंदी सेवियों ने दोनों क्षेत्रों के मध्य की भाषायी खाई को पाटने का काम किया और कर रहे हैं।

6. भारतीय संगीत, नृत्य और चित्रकला को दक्षिण की देन:

भारतीय संगीत के मुख्यत: दो रूप हैं 1) कर्नाटक संगीत और 2) हिंदुस्तानी संगीत। इन दोनों के अलावा पश्चिमी संगीत भी है। भारतीय संगीत के विभिन्न रागों में कर्नाटक संगीत के अंतर्गत 254 रागों को समादृत किया गया है, जबकि हिंदुस्तानी संगीत के केवल 47 राग ही हैं। इस रूप में देखें तो भारतीय संगीत की राग माला दक्षिण भारतीय संगीत या कर्नाटक संगीत के बिना अधूरी है। भारतीय जनता को एकता और अखंडता में बांधने का कार्य संगीत ने भी किया है। इसकी सशक्त आधारभूमि कर्नाटक संगीत से निष्पन्न हुई है। भारत के सात स्वरों की गाथा कर्नाटक, हिंदुस्तानी और निषाद-किरात से संपन्न हुई है। यही राग पश्चिम में भी है। संगीत मनुष्य और प्रकृति की सच्ची प्रतिध्वनि है। कंठ अनेक हैं, रागों में एकता है। इसलिए एम.एस. सुब्बुलक्ष्मी का गायन और स्वर आज भी हमको जोड़ता है। यही स्थिति संगीतकार ए.आर. रहमान के संदर्भ में भी कही जा सकती है।

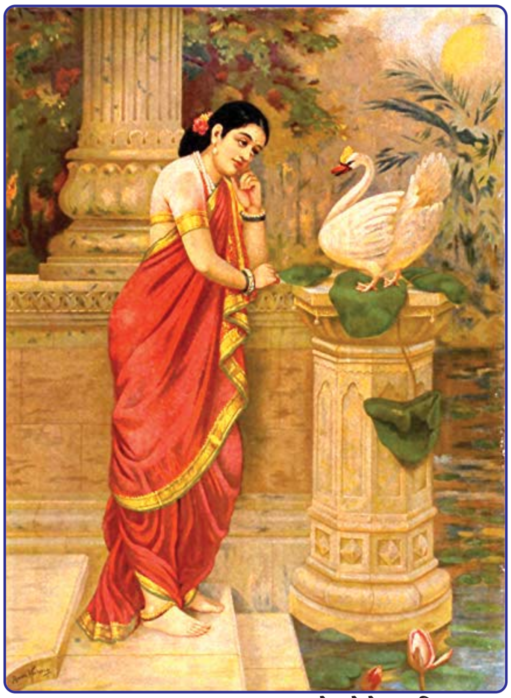

भारतीय शास्त्रीय नृत्य का पर्याय 'भरतनाट्यम' हो गया है। 'कूचिपुड़ी', 'कथकलि', 'मोहिनीअट्टम', 'यक्षगान' के बिना भारतीय नृत्य की छवि धूमिल दिखती है। इन सब का क्षेत्र दक्षिण भारत है। इस रूप में देखें तो नृत्य शारीरिक भंगिमाओं के साथ कथा से बद्ध होकर अपनी प्रभावपूर्ण उपस्थिति दर्ज करता है।

दक्षिण भारतीय कला मुख्यत: दो स्थानों पर विकसित हुई, तंजौर एवं मैसूर। इन दोनों नामों से तत्कालीन कला तंजौर एवं मैसूर शैली के नाम से उल्लेखित की जाने लगी। आधुनिक भारतीय चित्रकला के प्रवर्तक राजा रवि वर्मा (1848-1906, केरल) ने प्राचीन भारतीय परंपरा और यूरोप की आधुनिकता से भारत की चित्रकला को नया रूपाकार दिया। भारतीय साहित्य की रचनाओं से उन्होंने शकुंतला को निकाल कर नया सौंदर्य प्रदान किया। उनकी बनाई गयी तैलीय और जलीय चित्रात्मक छवियों ने देश और विदेश में प्रसिद्धि पाई। पौराणिक, ऐतिहासिक चित्रकला के क्षेत्र में संपूर्ण भारत उनका लोहा मानता है। भारतीय जनता को कम दाम में चित्र उपस्थित हो सके, इसके लिए उन्होंने भरसक प्रयास किये। भारतीय लोकप्रिय संस्कृति की एकात्मकता और कैलेंडर आर्ट की दिशा में राजा रवि वर्मा का अवदान विशिष्ट है। बॉलीवुड में 'रंग रसिया' फिल्म में रवि वर्मा की कला, जीवन और संस्कृति को देखने के लिए चित्रपट पर फिल्माया गया है।

7. भारत के राजनीतिक एकीकरण में दक्षिण का अवदान:

आधुनिक भारत की वास्तविक नींव प्रशासकों ने रखी है। भारत की देशी रियासतों को मिलाने में सरदार वल्लभभाई पटेल के साथ वी.पी. मेनन के ऐतिहासिक अवदान को नजरंदाज कर दिया जाता है। रामचंद्र गुहा ने भारतीय संघ में रजवाड़ों के एकीकरण की पहली पटकथा लिखने वाले और उसका पटाक्षेप करने वाले वी.पी. मेनन को वास्तविक हीरो माना है। आधुनिक भारत के राज्यों के एकीकरण के वे वास्तविक सूत्रधार थे। उन्होंने भारत के राज्यों के एकीकरण के संदर्भ में एक पुस्तक लिखी है 'इंटेग्रेशन ऑफ द इंडियन स्टेट'। उनका कथन है कि- "554 रियासतों को एक-एक कर उसे एक गणराज्य के रूप में ढालना, शुरुआती अराजकता को एक सुचारु व्यवस्था में बदलना और पुराने रजवाड़ों में प्रशासन का लोकतांत्रिकरण करना - ये ऐसे कठिन काम हैं, जो हमें जिंदगी के दूसरे क्षेत्रों में भी कामयाबी पाने के लिए मजबूती प्रदान करेंगे।"[6] दक्षिण भारत के क्रांतिकारियों, नवजागरण के सुधारकों और सी. राजगोपालाचारी के अवदान को भारतीय इतिहास में हमेशा याद किया जाता रहेगा।

8. विज्ञान, प्रौद्योगिकी और आर्थिकी के क्षेत्र में भी दक्षिण भारत का अवदान:

किसी भी देश और समाज की उन्नति में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की विशिष्ट भूमिका होती है। भारत की वैज्ञानिक और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उन्नति की रीढ़ है - दक्षिण भारत। आजादी पूर्व और आजादी के पश्चात विज्ञान और तकनीकी के क्षेत्र में इस देश की उन्नति में दक्षिण भारत की विशिष्ट भूमिका से इन्कार नहीं किया जा सकता। आधुनिक भारत के निर्माताओं ने विविध क्षेत्रों में भारत को आधुनिक ज्ञान-विज्ञान से संबद्ध किया, जिनमें भौतिकी के क्षेत्र में सी.वी. रमन और एस. चंद्रशेखर, अभियांत्रिकी (इंजीनियरिंग, 15 सितंबर को भारत का राष्ट्रीय इंजीनियर्स डे मनाया जाता है) के क्षेत्र में मोक्षगुंडम विश्वेश्वरैया, गणित के क्षेत्र में एस. रामानुजम, इसरो और डी आर डी ओ के क्षेत्र में ए.पी.जे. अब्दुल कलाम, कृषि क्षेत्र में एम.एस. स्वामिनाथन, दुग्ध के क्षेत्र में वर्गिस कुरियन आदि का नाम विशेष आदर और सम्मान के साथ लिया जाता है। इन महान विभूतियों ने भारत की एकता और अखंडता को एकाकार रूप देने में अभिनव कर्म किये। इन सबकी वजह से विश्व स्तर पर भारत की साख बढ़ी और यहाँ की जनता ने उन्हें अपनी लोकभावना से अंगीकार किया।

आज 'इसरो' जैसा संगठन विश्व स्तर पर नासा के बाद नई बुलंदियों को छू रहा है। साइबर सिटी हैदराबाद हो, आई टी सिटी बैंगलूर हो या चेन्नई शहर हो, ये सब समसामयिक दौर में भारतीय सूचना और प्रौद्योगिकी के सबसे बड़े देश के केंद्र हैं, जहाँ लाखों युवाओं को रोजगार उपलब्ध हो रहा है और नई तकनीक से देश की एकता और अखंडता की सुरक्षा की दिशा में सकारात्मक कदम उठाये जा रहे हैं। बहुराष्ट्रीय कंपनियों की पसंदीदा जगह देश के भीतर ये शहर बन रहे हैं। इनमें सेज और निवेश की संभावनाएँ, देश के युवाओं की आकांक्षाओं को पूरा करने का हौसला रखती है। सन् 1991 में भारत ने पी.वी. नरसिंहाराव के नेतृत्व में नई आर्थिकी को स्वीकार करके निजीकरण, उदारीकरण, भूमंडलीकरण के आधार पर बाजार आधारित व्यवस्था को अपनाया था। उसी कड़ी में वर्तमान सरकारें चल रही हैं। प्रतियोगिता के इस दौर में दक्षिण भारतीय राज्यों की अर्थव्यवस्था बीमारू भारतीय राज्यों को सहायता पहुँचा रही है। इन राज्यों की विकास दर अन्य राज्यों के लिए आदर्श है। इस संदर्भ में अंग्रेजी उपन्यासकार अरविंद अडिगा ने एक उपन्यास 'द वाइट टाइगर' लिखा है। विश्व को संचालित करने वाली राजनीति की जगह अब आर्थिक-विकास और व्यापार ने ले ली है। इस रूप में भारत और विश्व की आर्थिकी में दक्षिण भारतीय उद्यमियों ने नई पहचान बनाई है, जैसे माइक्रोसाफ्ट का सी ई ओ सत्या नडेला, गूगल का सी.ई.ओ सुंदर पिचाई और इनफोसिस के सह-संस्थापक एन.आर. नारायण मूर्ति इत्यादि।

9. भारतीय व्यंजन (भोजन/खान-पान) प्रणाली में दक्षिण भारत का अवदान:

भारतीय भोजन प्रणाली में दक्षिण भारत की थाली ने घर कर लिया है। इसलिए दक्षिण भारतीय व्यंजनों ने देश की एकता और अखंडता को मजबूत किया है। इडली, डोसा, सांबर, बड़ा और नारियल पानी ने देश के स्वाद को एकाकार किया है। भौतिक दूरियों को पाटा है। जीभ का स्वाद किसी भी राजनीतिक विचार से ऊपर होता है। इस रूप में भारतीय घरों में दक्षिण भारतीय और देशज व्यंजनों ने एकाधिकार कर लिया है। भारतीय देशज व्यंजनों के वैविध्य में दक्षिण भारत विकल्प प्रस्तुत करता है। यह विकल्प स्वस्थ-जीवन के लिए आवश्यक है।

इन सबके अलावा भारतीय खेल जगत में पी.टी. उषा, पी.वी. सिंधु, साइना नेहवाल, सानिया मिर्जा, विश्वनाथन आनंद, राहुल द्रविड़, वेंकटेश प्रसाद, अनिल कुंबले, श्रीकांत इत्यादि ने देश भावना को एकाकार करने में भूमिका निभाई है। यह भूमिका प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया द्वारा भी संभव हुई है। इन दोनों क्षेत्रों में अनेक समाचार-पत्र आज भी मानदंड बने हुए हैं। भारतीय इतिहास, समाज, संस्कृति, राजनीति में दक्षिण भारत के योगदान को भुलाया नहीं जा सकता है। नगर-सभ्यता, कला-शिल्प, ध्यान धारणा, भक्ति योग के पीछे द्रविड़ मन है। भावुकता, संचयवादी प्रवृत्ति, व्यापार और नगर-संस्कृति में द्रविड़-संस्कृति की विशिष्टता रही है।

- हिंदी विभाग, मानविकी संकाय
हैदराबाद विश्वविद्यालय
हैदराबाद-500046
मोबाइल: +91 9492024872

संदर्भ ग्रंथ:

1. कुबेरनाथ राय, मराल (2003), भारतीय ज्ञानपीठ, दिल्ली, पृष्ठ सं.64-65
2. रामचंद्र गुहा, भारत गांधी के बाद दुनिया के विशालतम लोकतंत्र का इतिहास (2014), हिंदी अनुवाद - सुशांत झा, पेंगुइन बुक्स और यात्रा बुक्स, इंडिया, पृष्ठ सं.11, प्रस्तावना से
3. ओम थानवी, मुअनजोदड़ो (2011), वाणी प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं.78
4. गुणाकर मुले, भारतीय लिपियों की कहानी (2014), राजकमल प्रकाशन, दिल्ली, पृष्ठ सं.08, अपनी बात से
5. परमानंद पांचाल (सं.), दक्खिनी हिंदी काव्य संचयन (2008), साहित्य अकादमी, दिल्ली, पृष्ठ सं.19
6. रामचंद्र गुहा, भारत गांधी के बाद दुनिया के विशालतम लोकतंत्र का इतिहास (2014), हिंदी अनुवाद - सुशांत झा, पेंगुइन बुक्स और यात्रा बुक्स, इंडिया, पृष्ठ सं.73

दक्षिण के कुछ विशिष्ट व्यंजन

- डॉ जे के एन नाथन -

भूमिका :

विश्व में भारत की भिन्नता में एकता की एक विशेष पहचान है। यहाँ धर्म, रहन-सहन, रंग-रूप, खान-पान, वेशभूषा सभी में विविधता झलकती है। खाद्य पदार्थों के संदर्भ में भी इसी प्रकार की विविधता पाई जाती है। किसी प्रदेश की खान-पान की आदतें वहाँ की भौगोलिक परिस्थितियों और उस प्रदेश में प्राप्त होनेवाले खाद्य पदार्थों पर निर्भर होती हैं। दक्षिण भारत के राज्यों में खान-पान की आदतों में लगभग समानता पाई जाती है। दक्षिण भारत के व्यंजन में षटरस की प्रधानता होती है, जो वैज्ञानिक एवं सांस्कृतिक रूप से यहाँ के जनसामान्य की आदतों के अनुकूल होती है।

यहाँ खाना परोसने की भी अलग पद्धति है। खाना केले के पत्ते पर परोसा जाता है और बहुत ही शुभ माना जाता है। यहाँ के लोगों के लिए भोजन में पप्पु, अर्थात दाल जैसे उप-पदार्थ का सेवन अनिवार्य है। यहाँ भोजन के पदार्थ पूर्ण रूप से पकाये जाते हैं। व्यंजनों में इमली, नमक, मिर्च व गुड़ का अधिक मात्रा में उपयोग होता है। यहाँ के खान-पान में दक्षिण भारतीय व्यंजन परंपरा के साथ तेलुगु, मुगलई, तुर्की, अरबी लोगों की मिश्रित संस्कृति देखी जा सकती है। विविध त्योहारों, वर्षगांठ, विवाह, षष्ठिपूर्ती, गृह-प्रवेश आदि मौकों पर विशेष प्रकार के व्यंजन तैयार किए जाते हैं। तटीय आंध्र के विशिष्ट खाद्य पदार्थ पुलिहोरा, दद्दोजनम्, चक्करपोंगली, पूर्णम्बूरेलु, बोब्बट्लु, अरिसेलु, काकिनाडा काजा, बंदरु लड्डु, आत्रेयपुरम पूतरेकुलु, रायलसीमा के वग्गानी, भक्ष्यालु, रागि संकटि, जोन्न रोट्टेलु, चिंततोक्कु पच्वडी और तेलंगाना के हैदराबाद में दमबिरियानी, चेक्किलालु आदि बहुत प्रचलित हैं। आइए, अब दक्षिण के विविध खाद्य पदार्थों का विस्तारपूर्वक परिचय प्राप्त करें:

पुलिहोरा :

पुलिहोरा त्योहारों एवं विशेष अवसरों पर बनाया जाता है। यह चावल से बनता है। इसमें इमली, नींबू, नारियल, कच्चा आम आदि का प्रयोग किया जाता है। लेकिन इमली से बननेवाला पुलिहोरा सर्वाधिक प्रचलित है। चावल को उबालने के पश्चात एक कड़ाई में पर्याप्त मात्रा में तेल लेकर चना दाल, उड़द दाल, सरसों, लालमिर्च, काजू, मूँगफली, करी पत्ता आदि के साथ तड़का लगाकर उसमें हरी मिर्च, अदरक और हींग भी मिलाते हैं। उसके बाद इमली का रस डालते हैं तथा पर्याप्त मात्रा में नमक, हल्दी के साथ गुड़ भी मिलाते हैं। इस मिश्रण को पुलिहोरा पुलुसु कहते हैं और गाढ़ा होने तक इसे उबालते हैं। उसके पश्चात एक चौड़ी थाली में उबाला हुआ चावल डालकर उसमें यह मिश्रण मिलाते हैं। पुलिहोरा के बिना आंध्र में विशेष भोज पूर्ण नहीं माना जाता। खासकर सुदूर यात्रा के दौरान इसे ले जाया जाता है, क्योंकि यह दो दिनों तक ठीक रहता है। कहा जाता है कि दूसरे दिन खाने से इसका स्वाद और भी बढ़ जाता है।

दद्दोजनम् :

यह चावल व दही के मिश्रण से बनाया जाता है। चावल के उबलने के पश्चात उसे ठंडा करके मलाई युक्त ताजा दही उसमें मिलाया जाता है। हरी मिर्च, अदरक और करी पत्ते के साथ तड़का लगाकर उसमें मिलाया जाता है। कुछ लोग इसमें काली मिर्च का चूर्ण भी मिलाते हैं। इसका स्वाद इसमें मिलाए जानेवाले दही के आधार पर निर्भर होता है।

पुलिहोरा एवं दद्दोजनम् जैसे खट्टे व्यंजनों के बाद आइए, अब कुछ मीठे व्यंजनों पर नजर डालते हैं।

चक्कर पोंगल :

चक्कर पोंगल भी चावल से ही बनाया जाता है। चावल के साथ इसमें मूँगदाल को भी उबाला जाता है। गुड़ अथवा चीनी की चाशनी में उबले हुए चावल एवं मूँगदाल को मिलाया जाता है। तत्पश्चात गरम घी में नारियल के टुकड़े, काजू, बादाम और किसमिस भूनकर चावल में मिला दिया जाता है। साथ ही इलायची और कुछ लोग पन्ना कपूर भी डालते हैं।

परमान्नम् :

इसके लिए गाय के दूध में चावल को उबालते हैं। उसके पश्चात पर्याप्त मात्रा में गुड़ व इलायची डालते हैं। घी में काजू, बादाम भूनकर उसमें मिला देते हैं। कुछ लोग स्वाद के लिए चावल में चना या मूँगदाल भी मिलाकर उबालते हैं। उबालते समय कच्चे नारियल के टुकड़े भी मिलाते हैं। गृह-प्रवेश व त्योहारों के अवसर पर यह व्यंजन अनिवार्य रूप से बनाया जाता है।

बंदरु लड्डु :

आंध्र प्रदेश का बंदरु लड्डु विदेशियों का भी पसंदीदा व्यंजन है। इसके बारे में अमेरीका के राजदूत काथरिन का कहना है कि आंध्र प्रदेश के ये लड्डु अपने आप में विशेष है। आंध्र प्रदेश के कृष्णा जिले के बंदरु के शिर्विशेट्टी सत्यनारायण उरफ ताताराव मिठाई दूकान और मल्लय्या मिठाई दूकान इसके लिए मशहूर हैं। कहा जाता है कि तेलुगु सिनेमा के प्रमुख अभिनेता एवं आंध्र प्रदेश के पूर्व मुख्यमंत्री एन टी रामाराव भी ये मिठाई पसंद करते थे।

इसके लिए बेसन को गूँथकर झरने के उपयोग से महीन सेव बनाते हैं, जिसे कारप्पूसा कहते हैं। फिर उसे चूर्ण बनाकर चीनी से बनी चाशनी में मिलाते हैं। घी में तले हुए काजू मिलाकर गोलाकार में लड्डु बनाते हैं। यह बहुत ही स्वादिष्ट व्यंजन है, जो देश-विदेश में मशहूर है।

काकिनाडा काजा (खाजा) :

वैसे काजा देश भर में मशहूर है। लेकिन काकिनाडा काजा की एक विशेष पहचान है। इसके लिए मैदा और थोड़ा सा बेसन गूँथकर दो घंटे तक रखा जाता है। उस आटे से खोखली लोई बनाई जाती है। फिर उसे तेल में तलकर चीनी से बनी चाशनी में डाला जाता है, जिससे लोई के बीच में बनी खोखली जगह में चाशनी भर जाती है। थोड़ी देर बाद चाशनी में से उसे निकाल दिया जाता है। यह बहुत ही स्वादिष्ट एवं खाने में मजेदार लगता है। पहली बार वर्ष 1930 में इसे तैयार किया गया और इसका पूरा श्रेय पोलिशेट्टी सत्ति राजु को जाता है। काकिनाडा की कोटय्या मिठाई दूकान इसके लिए मशहूर है।

पूतरेकुलु :

आंध्र प्रदेश के पूर्व गोदावरी जिले के आत्रेयपुरम मंडल का पूतरेकुलु पूरी दुनिया में मशहूर हैं। इसे पेपर स्वीट भी कहा जाता है। पूत, अर्थात लेपन और रेकु, अर्थात शीट है। रेकु बनाने का तरीका कठिन नहीं है, लेकिन अनुभव की जरूरत है। यह एक विशेष कला है। उड़द दाल और चावल के आटे को एक दिन पहले पानी में भिगोकर रखा जाता है। मिट्टी के घड़े को चूल्हे पर उल्टा चढ़ाया जाता है। आटे में कपड़ा भिगोकर उसे घड़े के एक ओर से दूसरी ओर सावधानी से खींचा जाता है। इससे पतले रेकु बनते हैं। फिर इसमें घी और चीनी का चूर्ण लगाकर मोड़ते हैं। आजकल मेवे का चूर्ण भी मिलाया जा रहा है। स्वास्थ्य की दृष्टि से चीनी की जगह गुड़ का भी उपयोग किया जा रहा है।

पूर्णम बूरेलु :

गृह-प्रवेश, विवाह या त्योहारों के समय इसे अनिवार्य रूप से बनाया जाता है। इसके लिए चने दाल को दो घंटे तक पानी में भिगोते हैं, फिर उसे उबालते हैं। बाद में उसे गुड़ के साथ मिलाकर पीसते हैं, जिसे पूर्णम (पूरन) कहा जाता है। कुछ लोग चना दाल उबालने के बाद उसे गुड़ की चाशनी में मिलाते हैं। उसके बाद लड्डू बनाकर उड़द दाल और चावल के आटे के लेई में डुबोकर तेल में तलते हैं।

बोब्बट्लु :

इसके लिए चने के दाल को उबालकर उसे गुड़ के साथ पीस लेते हैं। इसे भी पूर्णम् ही कहा जाता है। उसके बाद आटे से पेड़े बना कर बीच में पिसे हुए दाल और गुड़ का मिश्रण भरते हैं और फिर इसे रोटी की तरह बेलते हैं। फिर इसे हल्की आंच पर घी डालते हुए सेंकते हैं। यह बहुत स्वादिष्ट व्यंजन है, जिसे लोग बड़े चाव से खाते हैं। इसे ही आंध्र में बोब्बट्लु और रायलसीमा में भक्ष्यालु कहा जाता है।

आंध्र के खान-पान में मीठे व्यंजनों के साथ-साथ आवकाय एवं मागाय (अचारों) का भी विशेष स्थान है। आइए, इन पर एक नजर डालें।

आवकाय :

हिंदी में इसे अचार कहा जाता है। यह दक्षिण के भोजन का एक अनिवार्य अंग है। इसे चावल के साथ खाया जाता है। कच्चे आम को टुकड़ों में काट कर साफ किया जाता है। फिर उसमें लाल मिर्च पाउडर, सरसों का पाउडर, तेल और मेंथी के दानों को मिलाया जाता है। कुछ लोग इसमें लहसुन भी मिलाते हैं। मूँगदाल पीसकर भी उससे अचार बनाया जाता है।

कुछ लोग गुड़ मिलाकर मीठा अचार भी बनाते हैं। आजकल करेला, मुनगा, गोभी, बैंगन, सेम आदि के साथ अचार बनाये जा रहे हैं।

मागाय :

यह भी एक प्रकार का अचार ही है। इसके लिए छिले हुए आम के छोटे-छोटे टुकड़े बनाकर नमक और हल्दी के साथ तीन दिन तक रखा जाता है। चौथे दिन उसे रस से अलग करके धूप में सुखाया जाता है। फिर उसे रस में मिला दिया जाता है। ऐसे लगातार तीन दिन तक सुखाया जाता है, जिससे टुकड़े पूरी तरह रस को सोख लेते हैं। उसके बाद इसमें उपयुक्त मात्रा में लाल मिर्च व मेथी का पाउडर मिला दिया जाता है। फिर तेल में सरसों एवं हींग से तड़का लगाकर उसे इस मिश्रण में मिलाया जाता है। यह तटीय आंध्र का बहुत ही लोकप्रिय अचार है।

ऐसे ही कच्ची इमली को नमक और मेंथी के दानों के साथ पीसकर भी अचार बनाया जाता है। इसे जाड़े के मौसम में

तैयार किया जाता है। यह साल भर रखा जाता है। खाने से पहले इसमें टमाटर, बैंगन अथवा तुरई कोई भी सब्जी पीसकर चटनी बनाई जाती है। ऐसे नींबू, बड़ा नींबू (तेलुगु में दब्बकाय कहा जाता है) और आँवले के साथ भी अचार बनाया जाता है, जो बहुत ही चाव से खाया जाता है।

अचार के अलावा दक्षिण में कुछ चटनियाँ भी बनाई जाती हैं, जिन्हें 'पच्चडि' कहा जाता है। इनमें 'गोंगूर पच्चडि', अर्थात पटुए या पटसन की चटनी बहुत ही मशहूर है। इसके अलावा नारियल, तुरई, टमाटर, बैंगन आदि की भी चटनी बनाई जाती है। आइए इनमें से कुछ चटनियों पर गौर करें।

गोंगूर पच्चडी :

इसके लिए पटुए या पटसन की पत्तियों को तोड़कर साफ करके धीमी आँच पर लगभग ठोस होने तक पकाया जाता है और फिर थोड़ी सी इमली डालकर फिर इसे भुने हुए लाल मिर्च, हरी मिर्च, मेंथी के बीजों व सरसों के बीजों के साथ पीसा जाता है। फिर स्वाद के हिसाब से नमक मिलाया जाता है।

ऐसे ही पुदीना व धनिया पत्ते की भी चटनियाँ बनाई जाती है। नारियल की चटनी के लिए कच्चे नारियल को महीन पीसकर उसमें इमली मिलाई जाती है और साथ ही भुने हुए लाल मिर्च, हरी मिर्च, नमक और थोड़ी सी हल्दी के साथ पीस लिया जाता है। इसके बाद थोड़ा सा उड़द दाल, चना दाल, सरसों, जीरा और हींग के साथ तड़का लगाकर उसमें मिला दिया जाता है।

पोड़ि (चूरण) :

दक्षिण में कुछ चूरण भी बनाये जाते हैं, जिन्हें पोडि कहा जाता है। इनमें कारप्पोडि, कंदिपोडि, करिवेपाकु पोडि, कोव्वरि पोडि आदि मशहूर हैं। ये चूरण तरह-तरह के दालों से बनाये जाते हैं। कारप्पोडि के लिए धनिए के बीज, चना दाल, करी पत्ता और लाल मिर्च आदि को भूनते हैं। नमक और थोड़ा सा इमली मिलाकर पीसते हैं। यदि करी पत्ता की मात्रा ज्यादा हो तो उसे करी चूरण कहा जाता है। धनिए के चूरण के लिए धनिए के बीजों को लाल मिर्च और जीरे के साथ भूनकर पीसते हैं और उसमें नमक मिला लेते हैं। कंदिपोडि के लिए अरहर, थोड़ा सा चना दाल और मूँग दाल और लाल मिर्च को भूनकर पीसते हैं और उसमें नमक मिला लेते हैं। ऐसे तिल व नारियल का चूरण भी बनाया जाता है।

वग्गानी :

यह आंध्र के रायलसीमा का एक स्वादिष्ट अल्पाहार (नाश्ता) है, जिसे लोग चाव से खाते हैं। यह मुरी से बनाया जाता है। इसके लिए मुरी को पहले पानी से साफ कर किया जाता है। कड़ाई में थोड़ा सा तेल डालकर उसमें प्याज व हरी मिर्च के टुकड़े तल लिये जाते हैं। फिर सरसों, करी पत्ता व जीरा डालकर तड़का लगाया जाता है। थोड़ी सी हल्दी और टमाटर के टुकड़े भी मिलाये जाते हैं। इस मिश्रण के थोड़ा सा पकने के बाद उसमें मुरी मिलाकर धीमी आंच पर पीले रंग आने तक मिलाया जाता है। नींबू का रस छिड़ककर इसे मिर्च बज्जी के साथ खाया जाता है।

दक्षिण की जब बात हो रही है तो इन सब पकवानों के साथ अल्पाहार के अंतर्गत यदि इड्ली और सांबार का जिक्र नहीं किया जाता है तो यह आलेख पूर्ण नहीं माना जाएगा। क्योंकि इड्ली-सांबार दक्षिण का पसंदीदा अल्पाहार है। तो आइए, हम इस पर एक नजर डालें।

इड्ली-सांबार (सांभर) :

इड्ली के लिए उड़द दाल को 3-4 घंटे तक पानी में भिगोया जाता है। उसके बाद उसे पीसकर उसमें उड़द दाल के बराबर या उससे थोड़ा ज्यादा 'इड्ली रवा', अर्थात दरदरा पिसा हुआ चावल मिलाया जाता है। फिर उसमें नमक मिलाकर 3-4 घंटे के लिए छोड़ दिया जाता है। फिर धीमी आँच पर पकाने से इड्ली मुलायम बनती है।

सांबार में एक प्रकार का चूरण डाला जाता है, जो तूर दाल, चना दाल, धनिया, मेंथी, थोड़ी सी काली मिर्च और पर्याप्त लाल मिर्च भूनकर पिसा जाता है। इसके लिए लौकी, मुनगा, मूली, आलू, प्याज, टमाटर जैसी सब्जियों के टुकड़े धनिया पत्ता, नमक और हल्दी के साथ उबाले जाते हैं। फिर उबले हुए अरहर दाल और इमली का रस उसमें मिलाया जाता है। साथ ही स्वाद के हिसाब से एक-दो चम्मच सांबार चूरण मिलाया जाता है। उबलने के बाद सरसों, जीरा, लाल मिर्च, हींग और करी पत्ता के साथ तड़का लगाया जाता है।

ऐसे ही अल्पाहार के अंतर्गत दोसा (डोसा) का भी प्रमुख स्थान है। दोसा कई प्रकार से बनाये जाते हैं। चावल व उड़द दाल, हरी मूँग दाल से भी बनाये जाते हैं।

उपसंहार :

अंततः यह कहा जा सकता है कि स्वास्थ्य एवं स्वाद के अद्वितीय गुणता से संपन्न दक्षिण के भोजन में शारीरिक, मानसिक, बौद्धिक विकास के सारी संभावनाएँ मौजूद हैं। स्वास्थ्यवर्धक व्यंजन बनाने की पद्धतियाँ देश, काल एवं परिस्थिति के अनुरूप होती हैं। ऐसा यूँ ही नहीं होता, इसके लिए सदियां खप जाती हैं और पीढ़ियाँ मिट जाती हैं। हमारे पूर्वजों ने दक्षिण में खान-पान की जिन पद्धतियों को विकसित व पोषित किया है, वे अनमोल हैं।

- कनिष्ठ सहायक (राजभाषा)
राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड
विशाखपट्टणम
मोबाइल: +91 8008116262

हिंदी के विकास में दक्षिण भारत का योगदान

- डॉ सी जयशंकर बाबु -

देश के दक्षिणी भू-भाग को दक्षिण भारत की संज्ञा दी जाती है, जिसमें केरल, कर्नाटक, आंध्र, तेलंगाना एवं तमिलनाडु राज्य के साथ-साथ संघ शासित राज्य पुदुच्चेरी भी शामिल हैं। केरल में मलयालम, कर्नाटक में कन्नड़, आंध्र व तेलंगाना में तेलुगु और तमिलनाडु तथा पुदुच्चेरी में तमिल अधिक प्रचलित भाषाएँ हैं। ये चारों द्रविड़ परिवार की भाषाएँ हैं। इन चारों भाषा-भाषियों की संख्या भारत की आवादी में लगभग 25% है। इन चारों भाषाओं की अपनी-अपनी विशिष्ट लिपियाँ हैं। इस भाषा परिवार में लगभग तीस भाषाएँ व बोलियाँ हैं, जो दक्षिण के अलावा पूर्वी और उत्तर भारत के उड़ीसा, छत्तीसगढ़, पश्चिम बंगाल, झारखंड के कुछ इलाकों में प्रचलित हैं। द्रविड़ भाषाओं का अपना समृद्ध शब्द-भंडार है तथा व्याकरण के साथ-साथ समृद्ध साहित्यिक परंपरा भी। अपने प्रदेश विशेष की भाषा के प्रति लगाव के बावजूद अन्य प्रदेशों की भाषाओं के प्रति यहाँ की जनता में निस्संदेह आत्मीयता है।

दक्षिण भारत में हिंदी का प्रचलन:

धार्मिक, व्यापारिक और राजनीतिक कारणों से उत्तर व दक्षिण भारत के लोगों के बीच मेलजोल की परंपरा आरंभ होने के साथ ही दक्षिण में हिंदी का प्रवेश हुआ। चौदहवीं से अठारहवीं सदी के बीच दक्षिण में मुसलमान शासकों, मुख्यत: बहमनी, कुतुवशाही, आदिलशाही आदि के शासन में भाषा विशेष के रूप में दक्खिनी हिंदी प्रचलित हुई और बीजापुर, गोलकोंडा, गुलवर्गा, बीदर आदि क्षेत्रों पर इसका विशेष प्रभाव पड़ा।

दक्खिनी हिंदी का विकास एक जन भाषा के रूप में हुआ था। क्योंकि इसमें उत्तर-दक्षिण की कई बोलियों के शब्द जुड़े हैं। हैदरअली और टीपू सुल्तान के शासनकाल में कर्नाटक के मैसूर रियासत में, अर्काट नवाबों की शासनावधि में तमिलनाडु के तंजावूर प्रांत में, आंध्र के कुछ सीमावर्ती प्रांतों में मराठा शासकों के द्वारा भी यह काफी प्रचलित हुई। आगे चलकर दक्खिनी हिंदी में प्रचुर मात्रा में साहित्य का सृजन भी हुआ। यहाँ यह बात महत्वपूर्ण है कि हिंदी, हिंदुस्तानी, हिंदवी, उर्दू, दक्खिनी, दक्खिनी हिंदी आदि को एक ही मूल भाषा की विभिन्न शैलियों, बोलियों के रूप में मानकर चलने से यह कथन पुष्ट होता है कि दक्षिण भारत में इस भाषा का प्रसार शताब्दियों पूर्व ही हुआ था।

शताब्दियों पूर्व ही दक्षिण में हिंदी भाषा के प्रचलन के संबंध में एक और तथ्यात्मक उदाहरण केरल प्रांत से मिलता है। स्वाति तिरुनाल के नाम से सुविख्यात तिरुवितांकूर राजवंश के राजा राम वर्मा (1813-1846) न केवल हिंदी के निष्णात विद्वान थे, बल्कि स्वयं उन्होंने हिंदी में कई रचनाएँ की थीं। मिसाल के तौर पर उनके दो गीत यहाँ प्रस्तुत हैं-

'मैं तो नहीं जाऊँ जननी जमुना के तीर।
इतनी सुनके मात यशोदा पूछति मुरहर से,
क्यों नहिं जावत धेन चरावन बालक कह हमसे।
कहत हरि कब ग्वालिन मिल हम
मचित धन कुच से,
जब सब लाज भरी ब्रजवासिन कहे,
न कहो दृग से।
ऐसी लीला कोटि कियो कैसे जायो मधुवन से,
पद्मनाभ प्रभु दीन उधारण पालो सब दु:ख से।'

इसी प्रकार एक और गीत की बानगी देखिए-

'अवध सुखदाई अब बाजे बधाई
रतन सिंघासन के पर रघुपति
सीत सहित सुहायो।
राम भरत सुमित्रानंदन ठाढ़े
चामर चतुर डुलायो।।
मात कौसल्या करत आरती
निज मन वामछित पायो।
राम पद्मनाभ प्रभु फणि पर
शायी त्रिभुवन सुख करि आयो।'

स्वाति तिरुनाल के ये गीत दो सौ वर्ष पूर्व दक्षिण में हिंदी की सर्जना के श्रेष्ठ उदाहरण हैं।

आधुनिक काल अर्थात 19वीं, 20वीं शताब्दी के दौरान दक्षिण भारत में हिंदी का विकास अधिक व्यापकता एवं तीव्रता से हुआ। हिंदी को एकता की एक कड़ी मानते हुए कई विभूतियों ने इसे अपनी अभिव्यक्ति की भाषा बनाने की अपील की थी। आर्य समाज के संस्थापक महर्षि दयानंद सरस्वती ने हिंदी का प्रवल समर्थन किया था। उन्होंने हिंदी को 'आर्य भाषा' की संज्ञा देते हुए अपने ख्याति प्राप्त ग्रंथ 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना हिंदी में ही की थी। स्वामीजी द्वारा संस्थापित आर्य समाज ने देश में भारतीयता व राष्ट्रीयता के साथ-साथ हिंदी का भी प्रचार-प्रचार किया। आंध्र-प्रदेश में निजाम शासन के दौरान आर्य समाजियों ने चार हिंदी पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन किया था। हालाँकि शासन द्वारा आर्य समाजियों पर रोक के कारण इन्हें इन पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन राज्य की सीमा से सटे सोलापुर से करना पड़ा था।

भावात्मक एकता का माध्यम हिंदी:

स्वाधीनता आंदोलन के दिनों में भावात्मक एकता स्थापित करने में हिंदी को सशक्त माध्यम मानकर इसके प्रचार के लिए कई प्रयास किए गए। तमिल के सुविख्यात राष्ट्रकवि सुब्रह्मण्य भारती ने अपने संपादन में प्रकाशित तमिल पत्रिका 'इंडिया' के माध्यम से 1906 में ही जनता से हिंदी सीखने की अपील की थी एवं अपनी पत्रिका में हिंदी की सामग्री प्रकाशित करने हेतु कुछ पृष्ठ सुरक्षित रखने की घोषणा की थी। आगे भारती के ही नेतृत्व में 1907-1908 के बीच मद्रास के ट्रिप्लिकेन में जनसंघ के तत्वावधान में हिंदी कक्षाओं का संचालन आरंभ हुआ था, जिसकी सूचना श्री सुब्रह्मण्य भारती ने लोकमान्य तिलक को प्रेषित अपने पत्र (दि.29 मई, 1908) में दी थी। चेन्नई में तमिल के महाकवि सुब्रह्मण्य भारती ने हिंदी के प्रति जो स्नेहभाव दिखाया, वह परंपरा आगे भी चलती रही और तमिल, मलयालम व तेलुगु के अखबारों में हिंदी के प्रति लगाव बढ़ाने व भाषा सीखने हेतु विशेष स्तंभों का प्रकाशन लगातार होता रहा।

29 मार्च, 1918 को इंदौर में संपन्न हिंदी साहित्य सम्मेलन के अधिवेशन में सभापति के मंच से भाषण देते हुए गांधीजी ने कहा था कि 'जब तक हम हिंदी भाषा को राष्ट्रीय और अपनी-अपनी प्रांतीय भाषाओं को उनका उचित स्थान नहीं देते, तब तक स्वराज्य की बातें निरर्थक हैं।' आगे चलकर गांधीजी की संकल्पना से दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार का एक बड़ा अभियान शुरु हुआ। इस अभियान की संक्षिप्त पृष्ठभूमि के कुछ तथ्यों से अवगत होना भी यहाँ प्रासंगिक है। हिंदी साहित्य सम्मेलन के इंदौर अधिवेशन (मार्च, सन् 1918 ई.) के सभापति महात्मा गांधी चुने गए। इंदौर सम्मेलन का भाषण तैयार करने से पूर्व गांधीजी ने रवींद्रनाथ टैगोर, श्रीमती एनीबेसेंट, मदन मोहन मालवीय, लोकमान्य तिलक आदि देश के कुछ बड़े नेताओं से इस बारे में पत्र-व्यवहार द्वारा राय-मशविरा की, यथा:

1. क्या हिंदी कांग्रेस के आगामी अधिवेशनों में मुख्यत: उपयोग में लायी जानेवाली भाषा न होनी चाहिए?
2. क्या हमारे विद्यालयों, महाविद्यालयों में ऊँची शिक्षा देशी भाषाओं के माध्यम से देना वांछनीय और संभव नहीं है?, और
3. क्या हमें प्रारंभिक शिक्षा के बाद हिंदी को अपने विद्यालयों से अनिवार्यत: द्वितीय भाषा नहीं बना देना चाहिए?

'मैं महसूस करता हूँ कि यदि हमें जनसाधारण तक पहुँचना है और यदि राष्ट्रीय सेवकों को सारे भारतवर्ष के जनसाधारण से संपर्क करना है, तो उपर्युक्त प्रश्न तुरंत हल किए जाने चाहिए।'

(संपूर्ण गांधी वाङ्मय, खंड 14, पृ.149-50)

लगभग सभी नेताओं ने गांधीजी को अनुकूल उत्तर भेजे। इसके परिणामस्वरूप दक्षिण में हिंदी प्रचार के व्यवस्थित व योजनाबद्ध आंदोलन का सूत्रपात महात्मा गांधी के प्रयासों से संपन्न हुआ था। बड़ी संख्या में हिंदी प्रचारक और अन्य कार्यकर्त्ता सभा के उद्देश्यों की प्राप्ति के लिए कार्य करने लगे। आरंभिक समय के हिंदी प्रचारकों में बड़ी निष्ठा थी, और हिंदी प्रचार को देशभक्ति मानते हुए वे घर-घर जाकर बच्चे, बड़े-बूढ़े, सबको हिंदी सिखाते थे। गोरे शासक कभी हिंदी प्रचारकों को गिरफ्तार भी करवाते थे, किंतु ये प्रचारक बेहिचक और निडर होकर जेल से छूटते ही पुन: हिंदी प्रचार की गतिविधियों में जुड़ जाते थे। यहाँ तक कि वे जेलों में भी कैदियों को हिंदी पढ़ाते हुए हिंदी-प्रचार कार्य किया करते थे। इस बात की पुष्टि सभा के वरिष्ठ प्रचारक केरल के श्री पी नारायण के एक संस्मरणात्मक लेख से मिलती है। उन्होंने लिखा है, 'सभा द्वारा प्रशिक्षित प्रचारकों को गाँव-गाँव में पुलिस की यातनाएँ भी सहनी पड़ीं, कारावास भी भोगना पड़ा, मगर इतिहास बताता है कि आजादी के ये योद्धा किंचित भी विचलित नहीं हुए। दक्षिणी राज्यों के पुलिस थानों में हिंदी प्रचारकों की वीरगाथा की लंबी रिपोर्ट है। यदि उन्हें संचित की जाए तो सभा के इतिहास-लेखन में सहयोग मिल सकता है।

आजादी हासिल होने के बाद जब स्वतंत्र भारत के संविधान का निर्माण हो रहा था, तब भी गांधीजी के इन महत्वपूर्ण विचारों के अनुरूप ही भारत के संविधान में राष्ट्रीय राजकाज की भाषा के रूप में हिंदी को तथा देश के विभिन्न राज्यों में वहाँ की क्षेत्रीय भाषाओं को राजकाज की भाषाओं के रूप में मान्यता देने की चेष्टा की गई। गांधीजी के प्रयासों से 16 जून, 1918 को मद्रास में हिंदी वर्गों के आयोजन के साथ ही दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार के प्रयासों को हिंदी प्रचार आंदोलन के रूप में एक व्यवस्थित आधार मिला। अपनी संकल्पनाओं को साकार बनाने की दिशा में गांधीजी ने अपने सुपुत्र देवदास गांधी को मद्रास भेजा था।

गांधीजी से प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष प्रेरणा पाकर बिहार, उत्तर प्रदेश आदि प्रांतों के कई युवक दक्षिण पहुँचकर हिंदी प्रचार-प्रसार के कार्य में अपना योगदान सुनिश्चित करने लगे थे। उनसे हिंदी सीखने वाले हजारों हिंदी प्रेमी हिंदी प्रचारकों के रूप में निष्ठा एवं लगन के साथ दक्षिण के गाँवों में हिंदी का प्रचार करने लगे थे। भारत की एकता व अखंडता के विकास की दृष्टि से दक्षिण में हिंदी प्रचार का अभियान शुरु हुआ।

1918 में हिंदी साहित्य सम्मेलन का क्षेत्रीय कार्यालय, जो मद्रास में खुला था, वही आगे परिवर्धित होकर दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा के रूप में विख्यात हुआ। स्वाधीनता प्राप्ति के बाद जब गांधीजी द्वारा संस्थापित संस्थाओं को राष्ट्रीय संस्थाओं के रूप में घोषित करने की परंपरा शुरु हुई, उसी क्रम में 1964 में दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा भी राष्ट्रीय महत्व की संस्था घोषित

हुई। फिलहाल इस सभा के दक्षिण के चारों राज्यों में शाखाओं के अलावा उच्च शिक्षा शोध संस्थान भी हैं। सभा द्वारा हिंदी प्रचार कार्यक्रम के अंतर्गत विभिन्न हिंदी परीक्षाओं का संचालन किया जाता है। उच्च शिक्षा एवं शोध संस्थानों के माध्यम से उच्च शिक्षा एवं शोध की औपचारिक उपाधियाँ भी प्रदान की जा रही हैं। दक्षिण में हिंदी प्रचार के क्रम में ऐसी कई छोटी-बड़ी संस्थाएँ स्थापित हुई हैं, जैसे **1934** में केरल हिंदी प्रचार सभा, आंध्र में **1935** में मैसूर हिंदी सभा, हैदराबाद और कर्नाटक में **1939** में कर्नाटक हिंदी प्रचार समिति, **1943** में मैसूर हिंदी प्रचार परिषद तथा **1953** में कर्नाटक महिला हिंदी सेवा समिति की स्थापना हुई। ये संस्थाएँ हिंदी प्रचार कार्य में अपने ढंग से सक्रिय हैं। हर साल इन संस्थाओं द्वारा संचालित कक्षाओं में हिंदी सीखकर संस्था द्वारा संचालित परीक्षाओं में शामिल होने वाले छात्रों की संख्या लाखों में होती है। तमिलनाडु को छोड़ शेष तीनों राज्यों के स्कूलों में एक भाषा के रूप में हिंदी की पढ़ाई जारी है। तमिलनाडु में तथाकथित राजनीतिक विरोध के कारण भले ही सरकारी स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई नहीं हो रही हो, लेकिन निजी स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई जारी है। साथ ही यहाँ भी हिंदी प्रचार संस्थाओं की परीक्षाओं में बैठने वाले छात्रों की संख्या बहुत अधिक होती है। आज यह कोई आश्चर्य की बात नहीं है कि तमिलनाडु के हर छोटे-बड़े शहर की छोटी-बड़ी गलियों में हिंदी स्पीकिंग कोर्स के बोर्ड नजर आते हैं।

इसी क्रम में दक्षिण में हिंदी के प्रचार-प्रसार में योगदान देने वाले कई निजी प्रयास भी सामने आए हैं। नि:शुल्क हिंदी कक्षाओं का संचालन, लेखन, प्रकाशन, पत्रकारिता, गोष्ठियों का आयोजन आदि कई रूपों में हिंदी के प्रचार-प्रसार हेतु कई प्रयास किए जा रहे हैं। यहाँ हिंदी फिल्मों के प्रदर्शन की बड़ी माँग रहती है, इनके दर्शकों में अधिकांश हिंदीतर भाषी होते हैं। हिंदी गीतों की लोकप्रियता की बात तो अलग ही है। अंत्याक्षरी, गायन आदि कई रूपों में हिंदी गीत दक्षिण के सांस्कृतिक जीवन के अभिन्न अंग बन गए हैं। हिंदीतर भाषियों का हिंदी भाषा का अर्जित ज्ञान इतना परिमार्जित हुआ है कि यहाँ सैकड़ों की संख्या में हिंदी के लेखक उभर कर सामने आए हैं। परिनिष्ठित हिंदी में इनकी लेखनी से सृजित हजारों कृतियाँ हिंदी साहित्य की धरोहर बन गई हैं। दक्षिण से सैकड़ों की संख्या में हिंदी की पत्र-पत्रिकाएँ प्रकाशित हो रही हैं। इनमें हिंदीतर भाषियों द्वारा हिंदी प्रचार हेतु निजी प्रयासों से संचालित पत्रिकाएँ भी कई हैं।

हैदराबाद, बैंगलूर तथा चेन्नई से हिंदी के तीन बड़े अखबार प्रकाशित हो रहे हैं। कई छोटे अखबार भी इन नगरों के अलावा अन्य शहरों से भी प्रकाशित हो रहे हैं। अपने लेखन से हिंदी जगत में विख्यात होने वाले दक्षिण के हस्ताक्षरों में उपन्यासकार आरिगपूडि रमेश चौधरी, डॉ.बालशौरि रेडडी के नाम उल्लेखनीय हैं। डॉ बालशौरि रेड्डी जी दक्षिण में हिंदी के सेतु के रूप में प्रसिद्ध हैं। इनके अलावा कई अन्य रचनाकार भी हिंदी के विभिन्न विधाओं में मौलिक लेखन व अनुवाद में अनूठा योगदान दे रहे हैं। यहाँ की संस्थाएँ हिंदी साहित्यिक सम्मेलनों, संगोष्ठियों का निरंतर आयोजन करती रहती हैं। हिंदी पुस्तकों के प्रकाशन व्यवसाय में भी कई प्रकाशक सक्रिय हैं। दक्षिण भारत में हिंदी पत्रकारिता का सौ साल से भी अधिक का गौरवपूर्ण इतिहास है, जिसकी संक्षिप्त जानकारी निम्नवत है।

दक्षिण भारत में हिंदी पत्रकारिता का उदय:

दक्षिण भारत में हिंदी प्रचार आंदोलन आरंभ होने के समय से ही यहाँ हिंदी पत्रकारिता का युग आरंभ हो चुका है। दक्षिण में हिंदी पत्रकारिता के उदय एवं विकास संबंधी तथ्यों का आकलन स्वतंत्रता पूर्व तथा स्वातंत्र्योत्तर युग के परिप्रेक्ष्य में किया जा सकता है।

1. स्वतंत्रता पूर्व:

स्वाधीनता पूर्व भारत में पत्रकारिता का उदय शासकों द्वारा अपने प्रशासन की सुविधाओं हेतु स्थापित प्रेसिडेंसी केंद्रों में हुआ था। दक्षिण भारत में मद्रास महानगर भी ऐसा ही एक प्रेसिडेंसी केंद्र था, जहाँ अंग्रेजी के अलावा तमिल, तेलुगु आदि भाषाओं में पत्र-पत्रिकाओं का प्रकाशन आरंभ हुआ। स्वाधीनता आंदोलन के दौरान तिलक तथा गांधी युग के दौर में मद्रास को केंद्र बनाकर हिंदी प्रचार की गतिविधियाँ आरंभ होने के साथ ही दक्षिण में हिंदी पत्रकारिता का उदय हुआ।

भारत में औपनिवेशिक शासन के विरुद्ध जब स्वाधीनता आंदोलन का सूत्रपात हुआ, उन्हीं दिनों जन जागृति हेतु अनेक देशभक्तों ने देश के विभिन्न प्रांतों से भारतीय भाषाओं में समाचारपत्रों के प्रकाशन का कार्य आरंभ किया। इस दौरान दक्षिण भारत में भी स्वतंत्रता आंदोलन की गतिविधियों में तेजी लाने हेतु स्थानीय भाषाओं में समाचारपत्रों का प्रकाशन आरंभ हुआ। साथ ही आंदोलन की सफलता हेतु पूरे भारत में भावात्मक एकता जगाने की अनिवार्यता महसूस की गई और दक्षिण में हिंदी भाषा के प्रचार की आवश्यकता भी महसूस की गई तथा इसके लिए तत्परता से एक रूपरेखा भी बनाई गई। इसके परिणामस्वरूप यहाँ हिंदी पत्रकारिता का उद्भव व विकास भी संभव हो पाया।

आंदोलन के कार्यकर्त्ता के रूप में उत्तर भारत से आए श्री क्षेमानंद राहत के प्रयासों से साप्ताहिक 'भारत तिलक' के प्रकाशन के साथ ही दक्षिण भारत में हिंदी पत्रकारिता का उदय हुआ। सन् **1921** में मद्रास से ही दक्षिण भारत के प्रथम हिंदी पत्र का प्रकाशन हुआ। पूर्णत: हिंदी में प्रकाशित दक्षिण भारत का

पहला पत्र होने के कारण 'भारत तिलक' को ही दक्षिण भारत की हिंदी पत्रकारिता के इतिहास में पहला समाचार पत्र कहना समीचीन होगा। लगभग उन्हीं दिनों हिंदुस्तानी सेवा दल के मद्रास केंद्र की ओर से डॉ.एस.एन. हार्डिकर के संपादन में 'स्वयं सेवक' नाम से एक अंग्रेजी-हिंदी द्विभाषी पत्रिका का प्रकाशन आरंभ हुआ था। 1923 में हिंदी प्रचार आंदोलन की मुखपत्रिका के रूप में 'हिंदी प्रचारक' का प्रकाशन आरंभ हुआ, जिससे हिंदी प्रचार आंदोलन की गति सुनिश्चित हो सकी।

मद्रास प्रेसिडेंसी केंद्र से हिंदी पत्रकारिता के उदय के लगभग एक के बाद एक क्रमश: आंध्र, पांडिच्चेरी तथा केरल में भी हिंदी पत्रकारिता की नींव पड़ गई। कर्नाटक प्रांत में हिंदी पत्रकारिता का उदय स्वाधीनता प्राप्ति के बाद ही संभव हो पाया। इन प्रदेशों में हिंदी पत्रकारिता के उदय के कारण तथा उदय के दिनों की परिस्थितियों में विविधता व भिन्नता भी नजर आती है।

आंध्र में मुख्यत: हैदराबाद व उसके आस-पास के क्षेत्र निजाम शासन के अधीन थे। हैदराबाद का शासन आरंभ से ही विवाद मुक्त व आदर्श प्रदेश था। लेकिन निजाम के शासकों ने अंग्रेजों के साथ मैत्री संबंध बनाए रखने हेतु उनकी पराधीनता स्वीकार कर ली थी। इसी समय कतिपय कारणों से हैदराबाद में सांप्रदायिक विद्वेष फैल गया। हिंदुओं को भारी नुकसान हुआ। सनातन धर्मियों के समक्ष उत्पन्न खतरे को देखते हुए 1931 में श्री अर्जुन प्रसाद मिश्र 'कंटक' के प्रयासों से मासिक हिंदी पत्रिका 'भाग्योदय' का प्रकाशन आरंभ हुआ, जिसे आंध्र में हिंदी पत्रकारिता का उदय माना जाता है। आंध्र प्रांत से प्रकाशित होने वाली लगभग सभी पत्र-पत्रिकाएँ धार्मिक-राष्ट्रीय चेतना के फलस्वरूप ही प्रकाशित हुई थीं। आर्य समाज द्वारा प्रकाशित पत्रिका का उद्देश्य भी राष्ट्रीय चेतना का प्रचार ही था।

पांडिचेरी (पुदुच्चेरी) में स्वाधीनता आंदोलन के अध्यात्मिक नेता श्री अरविंद के आश्रम से चौथे दशक में हिंदी पत्रिका 'अदिति' का प्रकाशन आरंभ हुआ। श्री अरविंद की विचारधारा के प्रचारार्थ 'अदिति' का प्रकाशन हुआ था।

केरल में हिंदी प्रत्रकारिता के उदय का मूल कारण हिंदी-प्रचार आंदोलन ही रहा है। मलयालम भाषी हिंदी प्रेमी एवं हिंदी प्रचार के कर्मठ कार्यकर्त्ता श्री नीलकंठन नायर के प्रयासों से प्रकाशित 'हिंदी मित्र' से केरल में हिंदी पत्रकारिता का उदय माना जाता है। आजादी से पूर्व कर्नाटक में किसी हिंदी पत्रिका का प्रकाशन बेशक नहीं हुआ, लेकिन वहाँ हिंदी का प्रचार-प्रसार दक्षिण के बाकी राज्यों की भाँति ही चल रहा था। 1954 में प्रकाशित 'हिंदी वाणी' नामक पत्रिका से कर्नाटक में हिंदी पत्रिका का उदय माना जाता है।

दक्षिण भारत के सभी राज्यों में हिंदी पत्रकारिता के उदय के कारणों एवं पत्र-पत्रिकाओं के उद्देश्यों का अध्ययन करने से पता चलता है कि राष्ट्रीयता की प्रबल भावनाओं के कारण ही दक्षिण में हिंदी पत्रकारिता का उदय हुआ था। सन् 1921 से लेकर 1947 के बीच लगभग डेढ़ दर्जन पत्र-पत्रिकाएँ हिंदी में प्रकाशित हुई थीं। आधे दर्जन अन्य भाषाओं (तमिल व मलयालम) के समाचार पत्रों ने हिंदी सामग्री को स्थान देकर भाषाई सद्भावना दर्शायी थी।

वर्तमान परिदृश्य:

दक्षिण में हिंदी प्रचार-प्रसार के प्रयास से जो आंदोलन तेज गति से आगे बढ़ा था, उसकी वजह से यहाँ के पठन-पाठन के अलावा लेखन, पत्रकारिता, व्यवसाय, पर्यटन आदि कई क्षेत्रों पर उसका व्यापक प्रभाव पड़ा था। उसी के फलस्वरूप आज तमिलनाडु को छोड़कर बाकी के राज्यों में हिंदी एक अनिवार्य विषय के रूप हाई स्कूल स्तर तक पढ़ाई जा रही है।

हालाँकि तमिलनाडु में भले ही सरकारी स्कूलों में हिंदी की पढ़ाई की व्यवस्था नहीं है, मगर यहाँ के निजी स्कूलों में हिंदी की बड़ी माँग है। दक्षिण भारत के सभी हिंदी प्रचार सभाओं, अर्थात केरल, हैदराबाद, कर्नाटक के साथ-साथ महिला हिंदी सेवा समिति, कर्नाटक हिंदी प्रचार समिति, मैसूर हिंदी प्रचार परिषद आदि स्वैच्छिक हिंदी प्रचार संस्थाओं द्वारा आयोजित परीक्षाओं में लाखों विद्यार्थी शामिल होते हैं। दक्षिण के अनेक उच्चतर शैक्षिक संस्थानों में अध्ययन एवं शोध की सुविधा है। यहाँ तक कि तमिलनाडु के भारतीयार और मदुरै कामराज जैसे विश्वविद्यालयों में हिंदी विभागों के गठन न होने के बावजूद भी शोधार्थियों को हिंदी में शोध का अवसर दिया जा रहा है।

दक्षिण के वाणिज्यिक व व्यावसायिक क्षेत्रों में हिंदी का सहज प्रचलन है। यहाँ हिंदीतर भाषी धड़ल्ले से हिंदी बोलते हैं, तो हिंदीभाषी भी अपनी बातचीत में बेहिचक हिंदीतर भाषाओं के शब्दों का प्रयोग करते हैं। यहाँ के उच्च अभियांत्रिकी एवं प्रबंधकीय संस्थाओं में हिंदी में वार्तालाप करने हेतु प्रशिक्षण दिए जाते हैं। निजी शिक्षण संस्थाएँ भी 'तीस दिन में हिंदी बोलना सीखें' जैसे विज्ञापनों के माध्यम से लोगों को आकर्षित कर रही हैं। साथ ही इन संस्थाओं को पर्याप्त शिक्षार्थी भी मिल रहे हैं।

- संस्थापक संपादक, 'युगमानस' व
प्रधान संपादक, 'अंतर भारती', एवं
सहायक आचार्य एवं अध्यक्ष, हिंदी विभाग
पांडिच्चेरी विश्वविद्यालय
पुदुच्चेरी-605014
मोबाइल: +91 9442071407

तेलंगाना में देवी पूजन की एक परंपरा: बोनालु

- डॉ गुर्रमकोंडा नीरजा -

22 जून, 2014 को भारत के 29 वें राज्य के रूप में तेलंगाना राज्य का पुनर्गठन हुआ था। विविध लोकोत्सव इस राज्य को विशिष्ट निजी सांस्कृतिक पहचान प्रदान करते हैं। खासतौर से 'बोनालु' पर्व को तेलंगाना का सांस्कृतिक प्रतीक कहा जा सकता है, जिसका संबंध देवी पूजा से है।

विदित है कि देश भर में देवी पूजा की परंपरा है। तेलंगाना भी इसका अपवाद नहीं है। विशेष बात यह है कि तेलंगाना में ग्राम देवियों को अनेक नामों से पुकारा जाता है - एलम्मा, पोचम्मा, नल्लपोचम्मा, मैसम्मा, गंडिमैसम्मा, नांचारम्मा, नूकालम्मा, पोलेरम्मा, मारेम्मा, पेद्दम्मा, गंगालम्मा, मुत्यालम्मा, महंकालम्मा, अंकालम्मा आदि। लोकजीवन में इनकी पूजा-अर्चना की अनेक विधि व परिपाटी मिलती हैं। देवी पूजा की परिपाटी के उदाहरण के रूप में एडुपायला जातरा और समक्का-सारलम्मा जातरा का उल्लेख किया जा सकता है।

मेदक जिला के नागासनपल्लि ग्राम में स्थित एडुपायला सात नदियों का संगम स्थल है। एडुपायला वन दुर्गा भवानी का मंदिर तेलंगाना में सबसे प्रसिद्ध और शक्तिशाली मंदिरों में से एक है। इस मंदिर की विशेषता यह है कि यहाँ प्रवाहित नदी की सात धाराएँ सात ऋषियों के नामों से बनी हैं - जमदग्नि, अत्रि, कश्यप, विश्वामित्र, वशिष्ठ, भारद्वाज और गौतम। शिवरात्रि को यहाँ जातरा (मेला) का आयोजन होता है। एडुपायला जातरा के अवसर पर भेड़-बकरी और मुर्गियों की बलि दी जाती है। यह त्योहार शिवरात्रि के दिन से शुरु होकर तीन दिनों तक चलता है। आसपास के 32 गाँवों से सैकड़ों सजी-धजी बैलगाड़ियों की शोभायात्रा निकलती है। इसे 'बंडि उत्सवम' (गाड़ियों का उत्सव) कहा जाता है।

इसके बाद देवी माँ की रथयात्रा निकलती है। इसी प्रकार समक्का-सारलम्मा जातरा वरंगल जिला में स्थित कन्नापल्लि जंगल में शुरु होकर वरंगल से 90 किमी दूरी पर स्थित मुलुगु जिले के तड़वई मंडल के मेडारम में समाप्त होती है। इसलिए इसे मेडारम जातरा भी कहा जाता है। इस उत्सव में चार दिनों तक भक्त देवी माँ को सोना (गुड़) चढ़ाते हैं और सुख-समृद्धि की कामना करते हैं। कोया आदिवासियों का यह विशेष त्योहार एशिया का सबसे बड़ा जनजातीय त्योहार माना जाता है। ये दोनों प्रकार के मेले (जातरा) यह प्रतिपादित करने के लिए पर्याप्त हैं कि तेलंगाना का सामान्य लोक देवीपूजक लोक है।

इसी का परिणाम है कि विशेष रूप से हैदराबाद में मनाए जानेवाले देवीपूजा के पर्व बोनालु को लोकपर्व से राजपर्व की प्रतिष्ठा प्राप्त हुई है। तेलंगाना के राजकीय लोकपर्व बोनालु के जुलूस में महाकाली के विभिन्न अवतारों की अर्चना की जाती है। इसलिए इसे 'महाकाली जातरा' भी कहते हैं। पहले यह त्योहार मुख्य रूप से हिंदू समाज की हाशियाकृत जातियों में अधिक लोकप्रिय था। तेलंगाना के राजकीय पर्व के रूप में ख्याति अर्जित करने के बाद तो अब यह सबका पर्व हो चुका है।

इस पर्व की मुख्य रीति है कि मन्नत माँगकर स्त्रियाँ देवी माँ को बोनम (भोजन) समर्पित करती हैं। बोनम अर्थात देवताओं को समर्पित किया जाने वाला भोजन या नैवेद्य। 'बोनालु' को हैदराबादी बोलचाल की भाषा में 'बोनाल' कहा जाता है। 'बोनालु' शब्द 'भोजनालु' (भोजन) का बिगड़ा हुआ रूप है। आषाढ़ मास के पहले रविवार को शुरु होकर यह पर्व अंतिम रविवार को समाप्त होता है। अर्थात यह बोनालु पर्व लगभग एक महीने तक मनाया जाता है। त्योहार के पहले और अंतिम दिन गोलकोंडा एलम्मा की विशेष पूजा-अर्चना की जाती हैं। दो नए छोटे मटकों को हल्दी का लेप लगाकर कुमकुम से सजाया जाता है। नीम की टहनियाँ बांधी जाती हैं। उन मटकों में बोनम रखा जाता है। दोनों मटकों को एक के ऊपर एक रखा जाता है। ऊपर के मटके पर तेल का दीपक जलाया जाता है। इसे 'बोनाला ज्योति' (बोनालु की ज्योति) कहा जाता है। श्रद्धा और भक्ति भाव से सराबोर स्त्रियाँ समूहों में उन मटकों को सिर पर रखकर देवी माँ के मंदिर में बोनम चढ़ाने जाती हैं। वाद्ययंत्र बजाते हुए और भक्ति गीत गाते हुए पुरुष उनके साथ-साथ चलते हैं। बोनम के रूप में मुख्य रूप से मिष्ठान्न चढ़ाया जाता है, जो देवी माँ का अत्यंत प्रिय व्यंजन है। नमक और काली मिर्च के साथ पका हुआ चावल और दही चावल भी चढ़ाया जाता है। मंदिर में देवी माँ के समक्ष जो चावल का ढेर लग जाता है, उसे 'बल्लम गल्ला' कहा जाता है। बोनम के साथ माँ को 'कल्लु' (देशी शराब) और बलि भी चढ़ाने की परंपरा रही है। बहुत समय तक भैंसों की बलि दी जाती थी। परंतु बाद में धीरे-धीरे लोग भैंस के स्थान पर मुर्गी और बकरी की बलि चढ़ाने लगे। लेकिन अब अधिकतर प्रतीकात्मक बलि दी जाती है, अर्थात अब ज्यादातर कद्दू, पेठा, नींबू आदि की बलि दी जाती है। एक दुखद पहलू यह भी है कि दुश्मनी के कारण कभी-कभी किन्हीं गाँवों में नरबलि भी दे दी जाती थी। इसीलिए ऐसी हिंसक प्रथा को रोकने के लिए कद्दू, पेठा और नींबू आदि की बलि दी जाने लगी।

इसमें काई शक नहीं है कि तेलंगाना में मांसाहार का अत्याधिक प्रचलन है। लेकिन बोनालु त्योहार के एक महीने तक वे लोग मांसाहार से दूर रहते हैं। शायद इसीलिए अंतिम दिन देवी माँ के समक्ष मुर्गी और बकरी की बलि चढ़ाकर उस दिन मांसाहार का सेवन करते हैं।

बोनालु उत्सव आषाढ़ माह के चार सप्ताह के लिए क्रमश: गोलकोंडा, सिकंदराबाद, लाल दरवाजा और पुराने शहर में मनाया जाता है। सबसे पहले हैदराबाद के गोलकोंडा किले के भीतर मंगलावरम नामक पहाड़ी पर स्थित जगदंबिका मंदिर में इस त्योहार की शुरुआत होती है। आषाढ़ मास के प्रथम रविवार से तीन दिन पहले गोलकोंडा के पास स्थित लंगर हाउस से देवी की रथयात्रा शुरु होती है। रंगबिरंगे कागजों से बने ऊँचे बेंत के झूले में माँ की तस्वीर सजाकर ज्योति के साथ गोलकोंडा तक शोभायात्रा निकलती है। इसे 'तोट्टेल उत्सवम' (झूले का उत्सव) कहा जाता है। सरकार की ओर से भेंट स्वरूप माँ को रेशमी कपड़े और सुहागिन के सिंगार की वस्तुएँ समर्पित की जाती हैं।

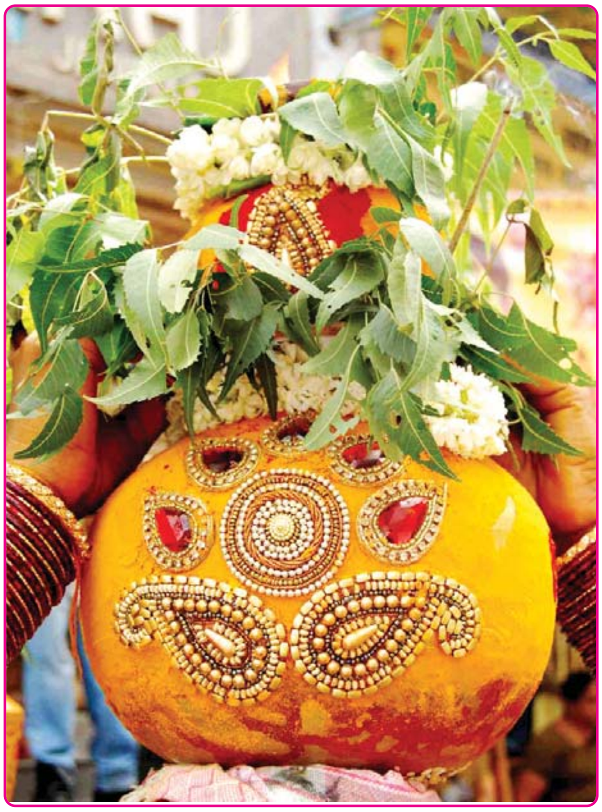

उसके बाद क्रमश: सिकंदराबाद उज्जैनी महाकाली मंदिर, बलकंपेट एल्लम्मा मंदिर, चिलकलगुड़ा पोचम्मा मंदिर और कट्टा मैसम्मा मंदिर, लाल दरवाजा सिंहवाहिनी श्रीमहाकाली मंदिर, हरिबावली अकन्ना मादन्ना मंदिर, शाह अली बंडा में स्थित मुत्यालम्मा मंदिर में बोनालु पर्व मनाया जाता है। फिर अन्य स्थानों में स्थित देवी माँ के मंदिरों में बोनम समर्पित किया जाता है। वापसी में गोलकोंडा के जगदंबिका मंदिर में अंतिम बोनम अर्पित करने के बाद ही यह उत्सव समाप्त होता है।

जैसाकि ऊपर उल्लेख किया गया है कि बोनालु का पर्व रविवार को शुरु होता है और अगले दिन सोमवार को रंगबिरंगे कागजों से बने बेंत से बने ऊँचे झूले में देवी को प्रतिष्ठित कर जुलूस निकाला जाता है। इस जुलूस का अर्थ है खुशी से माता को उनके मायके के लिए विदा करना। जैसे किसी सुहागिन को विदा कराकर ले जाने के लिए भाई आते हैं, उसी तरह देवी माँ की विदाई के लिए उनके भाई और अंगरक्षक 'पोतुराजु' आते हैं। नदी किनारे झूला और 'बल्लम गल्ला' रख दिए जाते हैं और नदी में दिया छोड़कर लोग वापस आ जाते हैं। यह लोक विश्वास है कि यह भोजन पाकर प्रेतात्माएँ तृप्त हो जाएँगी, अत: कोई अनिष्ट नहीं होगा और देवी माँ सबकी रक्षा करेंगी।

उल्लेखनीय है कि पोतुराजु को महाराष्ट्र में पोतराज, मरीआई अथवा कड़क लक्ष्मी के नाम से भी जाना जाता है। असल में पोतुराज इस अंचल की एक जनजाति का नाम है, जो निरंतर लुप्त होती जा रही है। पोतुराजु देवी माँ के उपासक होते हैं। पोतुराजु का वेश धारण करने वाला व्यक्ति लाल धोती को घुटनों के ऊपर तक कसकर बाँधता है। पैरों में घुंघरू, हाथ में चाबुक, पूरे शरीर में हल्दी का लेप, माथे पर कुमकुम का टीका और गले में नींबू की माला पहनकर वह ढोल-नगाड़ों की थाप पर नाचता रहता है और अपने हाथ में लिए हुए चाबुक से अपनी ही पीठ पर प्रहार करता रहता है। यह माना जाता है कि पोतुराजु स्वयं पर चाबुक के प्रहार से लोगों की विपत्तियों को दूर करता है, जिससे देवी माँ भक्तों पर कृपा करती हैं। पोतुराजु का वेश धारण करके नाचना भी एक जीवन-वृत्ति है। बच्चों को बहुत कम उम्र में जबरन इस वृत्ति का प्रशिक्षण दिया जाता है, ताकि वे बड़े होकर अपनी पीठ पर कोड़े सहते हुए नाच सकें।

बोनालु के अगले दिन 'रंगम' का भी आयोजन किया जाता है। रंगम अर्थात भविष्यवाणी। एक स्त्री 'गले' (जोगिनी, मातंगी) कच्ची मिट्टी के घड़े पर खड़ी होकर भविष्यवाणी करती है। वह भविष्य के संकटों के प्रति लोगों को जागरूक करती है। भविष्यवाणी करने वाली इस स्त्री को साक्षात देवी का स्वरूप माना जाता है। हैदराबाद-सिकंदराबाद बोनालु में जोगिनी श्यामला और रंगम स्वर्ण लता इस प्रक्रिया को संपन्न करती हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है यह शोभायात्रा गोलकोंडा के जगदंबिका मंदिर से शुरु होकर सिकंदराबाद के उज्जैनी महाकाली मंदिर और उसके बाद लाल दरवाजा सिंहवाहिनी श्रीमहाकाली मंदिर में जाकर समाप्त होती है। इसे लोक आस्था का प्रताप ही कहा जा सकता है कि सामान्य जनता ही नहीं, बल्कि तेलंगाना और आंध्र प्रदेश के राजनीतिज्ञ और स्वयं मुख्यमंत्री भी प्राय: इस आयोजन में भविष्यवाणी जानने के लिए उपस्थित होते हैं।

वर्तमान में धीरे-धीरे इस लोकपर्व का राजनीतिकरण भी होने लगा है। हैदराबाद और सिकंदराबाद के अलावा रंगारेड्डी जिले के लगभग 3 हजार मंदिरों को सरकार की ओर से आर्थिक सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। 2018 में तेलंगाना राष्ट्र समिति की सांसद के कविता ने माँ को 3.8 किलो सोने से बने बर्तन में बोनम समर्पित किया था। अब मिट्टी के मटकों के स्थान पर लोग अपनी पद-प्रतिष्ठा के अनुरूप या कहें कि कभी-कभी दिखावे के लिए सोने और चाँदी के बर्तनों में बोनम अर्पित करने लगे हैं। यह प्रवृत्ति भविष्य में इस पर्व के मूलभूत लोकचरित्र को क्षति पहुँचाने वाली सिद्ध हो सकती है।

रंगम के बाद घटम का जुलूस निकलता है। इसके लिए घटम (तांबे का बर्तन) को देवी के रूप में सजाया जाता है। बोनालु उत्सव के पहले दिन से लेकर अंतिम दिन तक घटम को जुलूस में ले जाया जाता है। अंतिम दिन इसे पानी में विसर्जित किया जाता है। घटम के विसर्जन के साथ उत्सव का समापन माना जाता है। हरिबावली के अक्कन्ना मादन्ना मंदिर से घटम को हाथी पर रखकर माँ की शोभायात्रा निकलती है तथा नयापुल के पास घटम का विसर्जन किया जाता है।

यह सब तो हुआ बोनालु के कर्मकांड का विवरण। अब जरा इसके इतिहास में भी झाँक लिया जाए। बोनालु पर्व की शुरुआत 19 वीं शताब्दी में हुई माना जाता है। इसकी कहानी हैदराबाद-सिकंदराबाद जुड़वा शहर के रेजिमेंटल बाजार से जुड़ी है। हैदराबाद-सिकंदराबाद के इतिहास से यह पता चलता है कि वर्ष 1813 में आषाढ़ मास अर्थात वर्षा आरंभ होते ही यहाँ प्लेग की भयानक महामारी फैल गई थी । इससे हजारों लोगों की मृत्यु हुई। संयोगवश इससे ठीक पहले हैदराबाद से एक सैन्य बटालियन को उज्जैन में तैनात किया गया था। जब इस हैदराबादी मिलिट्री बटालियन को महामारी के बारे में पता चला तो उन सिपाहियों ने उज्जैन के महाकाली मंदिर में देवी से प्रार्थना की कि वे हैदराबाद तथा सिकंदराबाद को इस महामारी से बचायें। उन्होंने यह मनौती भी मानी कि यदि देवी माँ ऐसा करेंगी तो यहाँ लौटने पर वे शहर में देवी महाकाली की मूर्ति स्थापित करेंगे। ऐसा माना जाता है कि महाकाली ने महामारी को नष्ट कर दिया। सैन्य बटालियन शहर लौट आई और यहाँ पर देवी की एक मूर्ति स्थापित की गई तथा भक्ति और श्रद्धा भाव से माँ को प्रसन्न करने के लिए पूजा, व्रत-त्योहार, मेला आदि का आयोजन किया गया, जो एक परंपरा बन गया।

लोकपर्वों के साथ लोककथाएँ भी जुड़ जाती हैं। बोनालु के साथ भी ऐसा ही है। लोक विश्वास है कि आषाढ़ मास के दौरान महाकाली अपने माता-पिता के घर आती हैं। अत: ससुराल से मायके आई हुई माँ के स्वागत में बोनालु पर्व मनाया जाता है। इस अवसर पर परिवार व समाज की सुख-समृद्धि के लिए माँ से प्रार्थना की जाती है।

आज भी यहाँ आषाढ़ में नई नवेली दुल्हन को एक महीने तक मायके भेज दिया जाता है। एक महीने के बाद श्रावण मास में माता-पिता बेटी को भेंट देकर ससुराल विदा करते हैं। उस समय भाई उसके अंगरक्षक बनकर उसको विदा कराने आते हैं। इसी लीला को हर वर्ष दोहराया जाता है।

लोक प्रथाएँ हमेशा केवल अंधविश्वास ही नहीं होतीं। उनमें भी कुछ न कुछ वैज्ञानिकता निहित होती है। इस दृष्टि से भी बोनालु उत्सव की सार्थकता असंदिग्ध है। आषाढ़ में बीमारियाँ फैलती हैं। इसलिए इस महीने में बोनालु उत्सव मनाया जाता है, जिसमें नीम और हल्दी की प्रचुरता रहती है। कहने की जरूरत नहीं कि नीम की पत्तियों और हल्दी में कीटनाशक तत्व निहित हैं। इसके अलावा बीमारियों को दूर करने के साथ-साथ यह त्योहार सारे समाज के भाईचारे का भी प्रतीक है।

बोनालु के अवसर पर लोग अपनी खुशियों को लोक गीतों विशेषकर भक्ति गीतों के माध्यम से व्यक्त करते हैं। उदाहरण के तौर पर दो गीतों के मुखड़े द्रष्टव्य हैं।

'सूर्युने बोट्टुगा पेट्टुकोनि
भल्लान्ने चेतिलो पट्टुकोनि
महामारि तलने नरिकिनावु पेद्दम्मा
कैलासम वद्दनि विडिचिनावु
कलियुगम लो माकै वच्चिनावु
माँ पिल्ललनी सल्लागा चूसिनावु मायम्मा
पुलिपै सवारी चेसिनावु ओ यम्मा
अंदुके नीकु बोनालु एत्तुतमु।'

हे माँ! तू ने सूरज को माथे की बिंदी बनाकर, भाला हाथ में लेकर महामारी का सिर कुचल डाला। दुष्टों को नरक भेज दिया। तू कैलाश छोड़कर, कलियुग में हमारे लिए यहाँ आकर हमारे बच्चों की रक्षा कर रही हो। हे माँ, सिंहवाहिनी! तेरे लिए हम नैवेद्य लाएंगे।

'पल्लेलु पट्नालन्नि पच्चगा चूसे तल्लि
ऊरि पोलिमेरलो उंडि ऊरंता कासे तल्लि
पोचम्मा, एल्लम्मा, मैसम्मा, मारेम्मा, महंकालम्मा, मुत्यालम्मा, पोलेरम्मा
एडुगुरू अक्का-चेल्लेल्लु नीकु
एडु अंतस्तुला बोनमे अम्मा।'

हे माँ! तू गाँवों और शहरों को हरा-भरा रखती हो और गाँव की सीमा पर रहकर गाँव की रक्षा करती हो। पोचम्मा,

एलम्मा, मैसम्मा, मारेम्मा, महंकालम्मा, मुत्यालम्मा, पोलेरम्मा तेरी सात बहनें हैं। सात मंजिल जितना बोनम लाई हैं।

इस महान लोक पर्व ने आधुनिक तेलुगु साहित्य में भी पर्याप्त जगह पाई है, जो इसकी व्यापक स्वीकृति का प्रतीक है। दाशरथी रंगाचार्य की कृति 'माया जलतारू' (मायाजरतार, 1973, विशालांध्रा पब्लिशिंग हाउस) में बोनालु का चित्रण मिलता है -

> 'चेंबु मीदा मरोका चेंबु पेट्टारू, अदि बोनम।
> आडुवारंता तललकु बोनालु एत्तुकोनि तयारूकागा
> मगवारू डप्पुलु तीसुकोनि बयलदेरारू।'

(मटके के ऊपर एक और मटका रख दिया। वही है बोनम। स्त्रियाँ बोनालु को सिर पर रखकर तैयार हुईं और पुरूष ढोल लेकर उनके साथ चल पड़े।)

तेलुगु के क्रांतिकारी कवि गद्दर (गुम्मडि विट्ठल राव, 1949) ने अपनी रचना 'प्रति पाटकु ओका कथा उंदा?' (हर गीत की एक कथा है क्या? 1991) में यह स्पष्ट किया है कि बोनालु त्योहार विशेष रूप से तेलंगाना के लोगों द्वारा मनाया जाता है। इस त्योहार का बहुत महत्व है। चाहे कुछ भी हो जाए, लोग कर्ज में डूबे रहने के बावजूद यह त्योहार मनाते हैं। क्योंकि तेलंगाना की जनता यह मानती है कि देवी माँ को संतुष्ट रखना जरूरी है, अन्यथा उनके क्रोध का शिकार होना पड़ेगा।

अपने आराध्य को प्रसन्न करने हेतु भोजन (नैवेद्य) अर्पित करना एक प्राचीन परंपरा है। यही कारण है कि ताल्लपाक अन्नमाचार्य के गीतों में भी बोनालु का उल्लेख मिलता है, 'विंदगु वेंकटा विभुनि प्रेमचे बोंदुगा बेट्टेनु बोनालु।' (श्री वेंकटेश्वर स्वामी को प्रेम से बोनालु समर्पित करें। अन्नमाचार्य, श्रृंगार संकीर्तन, तालपत्र-53) इस गीत से यह स्पष्ट होता है कि बोनालु की परंपरा सिर्फ तेलंगाना में ही नहीं, बल्कि संपूर्ण आंध्र प्रदेश में रही है। ननैया कृत 'आंध्र महाभारतम' और कृष्णदेवराय की 'आमुक्तमाल्यदा' में भी इसका उल्लेख मिलता है। वस्तुत: 'बोनालु' का अर्थ है श्रद्धा और भक्ति से देवी-देवताओं को भोजन समर्पित करना, ताकि हम पर उनकी कृपा बनी रहे। अत: आज भी लोक कल्याण की सामूहिक कामना ही इस पर्व का परम अभीष्ट है।

- सह संपादक 'स्रवंति' व सहायक आचार्य
उच्च शिक्षा और शोध संस्थान
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा
खैरताबाद, हैदराबाद-500004

नजरिया

- श्रीमती आशा शर्मा -

सुबह से ही शर्मा जी का मूड उखड़ा हुआ था। रह-रह कर बिटिया का मासूम चेहरा आँखों के सामने आ रहा था। कितना दर्द और बेबसी थी उसकी आवाज में जब उसने बताया कि उसका बॉस उसे बिना कारण अपने चैंबर में बुला लेता है। उसके शरीर को आँखों से टटोलते हुए उसके कपड़ों पर अनावश्यक टिप्पणी करता है और रोज देर शाम तक ऑफिस में रोकने की कोशिश करता है।

मन ही मन एक भद्दी सी गाली बिटिया के बॉस को देते हुए शर्मा जी फाइलों में दिमाग लगाने की कोशिश करने लगे। अचानक गलियारे से गुजरती मिस आरती को देख कर शर्मा जी की बाँछें खिल गईं। घंटी बजा चपरासी को उसे बुलाने भेजा। 'मिस आरती आज तो गजब ढा रही हो। क्या ड्रेस पहनी है। अच्छा सुनो, कल मेरी एक इंपॉर्टेंट मीटिंग है। उसके लिए आवश्यक कागजों की फाइल तैयार करनी है। तुम आज रुक कर सारी तैयारी करके जाना।' शर्मा जी ये सब कहने ही वाले थे कि उन्हें मिस आरती में अपनी बेटी का चेहरा नजर आने लगा।

शर्मा जी अपने वातानुकूलित कक्ष में भी पसीना-पसीना हो गये।

- ए-123, करणी नगर
लालगढ़
बीकानेर-334001
मोबाइल: +91 9413359571

बतुकम्मा

- डॉ अनीता गांगुली -

भारत एक सांस्कृतिक संपन्न देश है, जहाँ वर्ष भर कोई न कोई त्योहार मनाया जाते हैं। तेलंगाना फिलहाल एक पूर्ण राज्य वन चुका है और यहाँ के प्रमुख एवं प्रसिद्ध त्योहारों में 'बतुकम्मा' का विशेष स्थान है। यह लोक-त्योहार तेलंगाना के लोकजीवन एवं लोकसंस्कृति का बखूबी प्रतिनिधित्व करता है और यह त्योहार एक तरह से तेलंगाना की एकात्म सांस्कृतिक चेतना का द्योतक है।

'बतुकम्मा' पहले गाँवों में मनाया जाता था। कालांतर में लोग गाँवों से आकर शहरों में बस गये, जिनके साथ 'बतुकम्मा' त्योहार मनाने की प्रथा भी शहरों में व्याप्त हो चली। आज पूरे तेलंगाना राज्य में यह त्योहार मनाया जाता है।

'बतुकम्मा' से 'हे माता! जीती रहो' अभिप्रेत है। 'बतुकम्मा' माता गौरी की उपासना का त्योहार है। वैसे प्रकृति को माता अथवा देवी मानकर पूजा करने की प्रथा भारतीय संस्कृति में प्राचीन काल से है। 'बतुकम्मा' त्योहार के अवसर पर माता गौरी से प्रार्थना की जाती है कि 'हे माता! जीती रहो और हमारे जीवन का पालन-पोषण करती रहो।'

'बतुकम्मा' त्योहार मनाने के बारे में कई कहानियाँ प्रचलित हैं। एक मान्यता यह है कि माँ गौरी महिषासुर का वध करने माँ दुर्गा का अवतार लिया और धीरे-धीरे अपना आकार बढ़ाते हुए नौवें दिन महिषासुर का वध किया। महिलाओं ने बतुकम्मा के रूप में माँ दुर्गा की उपासना की और तभी से बतुकम्मा के रूप में माँ गौरी की पूजा की प्रथा चल पड़ी।

एक और कहानी के अनुसार माँ गौरी गंगा मैया को शिवजी द्वारा अपनी जटाओं में धारण करने से दु:खी होती हैं और अपनी माँ से अपनी व्यथा सुनाती हैं। तब माँ अपनी बेटी को आश्वस्त करती हैं कि 'दु:खी मत हो, फूलों से बनी नाव में तुम्हें गंगा नदी पर झुलाऊँगी।' कहा जाता है कि तभी से बतुकम्मा त्योहार मनाने की प्रथा चल पड़ी है।

एक और कहानी के अनुसार अक्केम्मा अपने सात भाइयों की दुलारी बहन है। लेकिन भाइयों की अनुपस्थिति में बड़ी भाभी दूध में जहर मिलाकर अपनी ननद को मार देती है और उसे गाँव के बाहर गाड़ देती है। वहाँ एक पौधा उगता है, जिसमें कीनू के फूल खूब फूलते हैं। भाई शहर से लौटते समय एक दिन कीनू के फूल तोड़कर अपनी बहन को देना चाहते हैं और जब फूल तोड़ने लगते हैं तो बहन की आत्मा उनसे अपनी मृत्यु की कहानी सुनाती है और भाइयों से कहती है कि 'कीनू के इन्हीं फूलों में मुझे देखते रहो और प्रति वर्ष मेरे नाम पर त्योहार मनाते रहो।' तभी से 'बतुकम्मा' त्योहार मनाने की परंपरा चली आई है।

एक और मान्यता के अनुसार एक पति-पत्नी संतान की अपेक्षा से माँ गौरी की उपासना करते हैं, जिससे उन्हें एक बेटी पैदा होती है। वे दोनों माँ का वरदान समझकर उसका पालन-पोषण करते हैं। वह लड़की बड़ी होकर लोकहित के कार्य करने लगती है, जिससे सभी लोग उसे देवी का स्वरूप मानने लगते हैं। इस प्रकार उसकी उपासना में बतुकम्मा त्योहार मनाने की परंपरा चल पड़ी है।

एक और कहानी के अनुसार चोलवंश के राजा जैन धर्मांगद एवं उनकी पत्नी सत्यवती के सौ पुत्र रणभूमि में वीरगति को प्राप्त हो जाते हैं। राजा और रानी तप करके माँ लक्ष्मी को पुत्री के रूप में प्राप्त करते हैं। तब सभी ऋषि-मुनि राजा के घर आकर माँ लक्ष्मी को 'जीती रहो!' करके आशीर्वाद देते हैं। तभी से 'बतुकम्मा' त्योहार मनाया जाने लगा है।

एक और कथा के अनुसार एक पति-पत्नी की संतानें पैदा होते ही मृत्यु को प्राप्त होने लगती हैं। इसपर दोनों तप करके माँ पार्वती से वर प्राप्त करते हैं, जिसके फलस्वरूप उन्हें एक पुत्री पैदा होती है। उसे 'बतुकम्मा', अर्थात 'जीती रहो' करके आशीर्वाद देते हैं। तब से बतुकम्मा त्योहार मनाया जाने लगा है।

'बतुकम्मा' त्योहार नौ दिन तक नौ प्रकार से मनाया जाता है।

1. एंगिलि पुव्वुल बतुकम्मा:

'एंगिलि' से 'झूठा' शब्द अभिप्रेत है। बतुकम्मा को सजाने हेतु एक दिन पहले ही फूल तोड़ लिये जाते हैं, जिन्हें पानी में डालकर रखा जाता है। फिर दूसरे दिन उन्हीं फूलों से एक पंक्ति में बतुकम्मा को सजाया जाता है,

जिसे 'एंगिलि पुव्वुल बतुकम्मा' कहा जाता है और उस दिन पान के पत्ते और तुलसी के पत्ते बाँटे जाते हैं।

2. अटुकुल बतुकम्मा:

'अटुकुलु' से 'चूड़ा' अभिप्रेत है। दूसरे दिन सवेरे जंगल से कीनू, गेंदा, बवूने, जंगली फूल तोड़ लाते हैं और उन्हें दो पंक्तियों में बतुकम्मा के रूप में सजाते हैं। फिर उसके ऊपर माँ गौरी को स्थापित करते हैं। सभी महिलाएँ खेलते हुए शाम को उसे तालाब में मिला देती हैं। उस दिन चूड़ा बाँटा जाता है।

3. मुद्दपप्पु बतुकम्मा:

'पप्पु' से 'दाल' अभिप्रेत है। तीसरे दिन बवूने, गुड़हर आदि फूलों से तांबे के बर्तन में तीन पंक्तियों में बतुकम्मा को सजाया जाता है। फूलों पर माँ गौरी को बिठाते हैं। महिलाएँ सवेरे पूजा करके शाम को किसी मंदिर के पास तालाब में माँ गौरी को छोड़ देती हैं। उस दिन चना और जौ को पीसकर बनाया हुआ आटा एवं गुड़ बाँटते हैं।

4. नानबिय्यम् बतुकम्मा:

'नानबिय्यम्' से 'भिगोया हुआ चावल' अभिप्रेत है। चौथे दिन कीने के फूलों से चार पंक्तियों में बतुकम्मा को सजाया जाता है और ऊपर माँ गौरी को बिठाया जाता है। भिगोये हुए चावल और गुड़ से बने लड्डू बाँटे जाते हैं।

5. अट्ल बतुकम्मा:

'अट्लु' से 'दोसा' अभिप्रेत है, जो दक्षिण भारत का एक प्रसिद्ध खाद्य पदार्थ है। पाँचवें दिन कीनू, बवूने, गुड़हर, कद्दू के फूलों से पाँच पंक्तियों में बतुकम्मा को सजाकर ऊपर माँ गौरी को बिठाते हैं। उस दिन 'अट्लु' बाँटे जाते हैं।

6. अलिगिन बतुकम्मा:

'अलिगिन' से 'रूठी हुई बतुकम्मा' अभिप्रेत है। कहा जाता है कि पहले पाँच दिनों के दौरान बतुकम्मा को सजाते समय गलती से माँस का टुकड़ा हाथ लग जाता है, जिससे 'बतुकम्मा' रूठ जाती है। इसलिए छठे दिन बतुकम्मा को सजाया नहीं जाता।

7. वेपकायल बतुकम्मा:

'वेपकाय' से 'नीम का फल' अभिप्रेत है। सातवें दिन कीनू, बवूने, गुड़हर, गुलाब के फूलों से सात पंक्तियों में बतुकम्मा को सजाया जाता है। चावल के आटे को भिगोकर नीम के फल के आकार में ढालते हैं अथवा दाल और गुड़ बाँटते हैं।

8. वेन्नमुद्दल बतुकम्मा:

'वेन्नमुद्दा' से 'मक्खन का कौर' अभिप्रेत है। आठवें दिन कीनू, बवूने, गुड़हर, गुलाब, घास के फूलों से आठ पंक्तियों में बतुकम्मा को सजाया जाता है। शाम को हनुमान मंदिर के पास तालाब में छोड़ देते हैं। उस दिन तिल और गुड़ बाँटा जाता है।

9. सद्दुल बतुकम्मा:

'सद्दु' शब्द 'चद्दु' का बदला हुआ रूप है। 'चद्दु' से पहले दिन रात को पकाया हुआ चावल अभिप्रेत है, जिसमें दही मिलाकर रखा जाता है। त्योहार के आखिरी दिन सभी प्रकार के फूलों से बतुकम्मा को सजाया जाता है। महिलाएँ बतुकम्मा के बगल में माँ गौरी को स्थापित करके पूजा करती हैं। उस दिन महिलाएँ देर रात तक खेलती हैं और उसके बाद गाँव के तालाब में बतुकम्मा को छोड़ देती हैं।

बतुकम्मा को सजाने के लिए आवश्यक सभी फूल पुरुष ही तोड़ लाते हैं। उसके बाद बतुकम्मा को सजाने एवं त्योहार मनाने का पूरा काम महिलाएँ संभालती हैं। त्योहार के नौ दिन महिलाएँ घर के आँगन एवं गलियों में बतुकम्मा को सजाकर रखती हैं। महिलाएँ हँसते-खेलते हुए गीत गाकर माँ लक्ष्मी, माँ गौरी, शिव-पार्वती, बतुकम्मा की उपासना करती हैं। इन गीतों के माध्यम से महिलाओं को ननिहाल एवं ससुराल के शेष सदस्यों के साथ उनका व्यवहार कैसा हो, इसकी सीख दी जाती है।

त्योहार के अवसर पर महिलाएँ आपस में हल्दी और कुंकुम बाँटती हैं। साथ ही तरह-तरह के पकवान बनाती हैं। इस त्योहार के माध्यम से संदेश दिया जाता है कि प्रकृति का कोई भी तत्व ऐसा नहीं है, जो उपयोगी न हो। इस अवसर पर सभी महिलाएँ एकसाथ मिलकर त्योहार मनाती हैं।

पर्यावरण की दृष्टि से भी 'बतुकम्मा' का विशेष महत्व है। त्योहार के हर दिन बतुकम्मा को कुएँ, तालाब या नदी में डुबो दिया जाता है, जिससे उन फूलों के औषधीय तत्व पानी में घुल जाते हैं, जिसका सेवन करके सभी जीव सुख एवं स्वास्थ्य का अनुभव करते हैं।

तेलंगाना का यह राष्ट्रीय त्योहार अब अपने प्रदेश के बाहर भी प्रसिद्ध हो रहा है। धीरे-धीरे यह उत्सव तेलंगाना की राज्य की सरहदें लांघकर भारत में ही नहीं, बल्कि विदेश में भी पहुँच गया है।

- क्षेत्रीय निदेशक
केंद्रीय हिंदी संस्थान
हैदराबाद

केरल का लोक रंग: एक परिचय

- डॉ कृष्ण कुमार पासवान -

भारत की सांस्कृतिक विरासत पूरी दुनिया के लिए आकर्षण का केंद्र रही है। उसमें भी यहाँ की लोक परंपराएँ इस भूगोल को एक विशिष्ट पहचान देती हैं। यहाँ का रहन-सहन, खान-पान, पहनावा, नृत्य-संगीत आदि अत्यंत ही विविधतापूर्ण है। इन विविधताओं का मूल कारण यहाँ का भौगोलिक परिवेश है। भौगोलिक और सामाजिक दृष्टि से भारत दुनिया के अन्य देशों से अलग है। इस विविधता की पहचान उत्तर से दक्षिण और पूरब से पश्चिम तक पूरे भारत में बिखरी पड़ी है।

वैसे तो भारत का हर प्रांत विविधता बहुल है। परंतु इनमें से भी कुछ ऐसे प्रदेश हैं, जहाँ की प्रकृति और संस्कृति उन्हें देश के अन्य प्रदेशों से अलग पहचान दिलाती हैं। केरल ऐसे ही राज्यों में से एक है। केरल भारत के दक्षिण-पूर्व में मालावार तट पर अवस्थित है। केरल राज्य की स्थापना वहाँ की मलयाली भाषा और संस्कृति को ध्यान में रखते हुए **1** नवंबर, **1956** को की गई थी। यह एक कृषि प्रधान राज्य है। प्राकृतिक संसाधनों की प्रचुरता के कारण यहाँ का जीवन अत्यंत उल्लासपूर्ण है। यही कारण है कि यहाँ की लोक संस्कृति दुनिया में अपने आप में अनूठी है।

ऐसा माना जाता है कि केरल की धड़कन वहाँ की लोक संस्कृति है। वहाँ की प्रकृति के साथ लोक संस्कृति इतनी घुली-मिली हुई है, जिससे इस बात का अनुमान लगाना मुश्किल है कि प्रकृति ने यहाँ की संस्कृति को अपने रंगों से सजाया है या यहाँ की लोक संस्कृति से प्रकृति अनुप्राणित है।

केरल की लोक संस्कृति मूलत: धर्मनिरपेक्ष स्वभाव का है। यहाँ के लोक रंगों में सामाजिक-धार्मिक पहचान से ज्यादा यहाँ की सांस्कृतिक पहचान प्रदर्शित होती है। इसलिए इन्हें क्षेत्रीय अस्मिता का वाहक भी माना जाता है। यहाँ के लोक रंगों का प्रदर्शन मूलत: कृषि-कार्य, पर्व-त्यौहार एवं धार्मिक आयोजनों में किया जाता है। मार्शल आर्ट के रूप में भी कई नृत्य शैलियाँ विकसित की गई हैं। इनमें से बहुत से नृत्य एवं संगीत केवल महिलाओं द्वारा प्रदर्शित किये जाते हैं और कुछ केवल पुरुषों द्वारा। कुछ ऐसे लोक नृत्य हैं, जिनमें स्त्री और पुरुष दोनों भाग लेते हैं। इनमें से अधिकांश लोक नृत्य संगीत एवं वाद्य यंत्र के साथ प्रस्तुत किये जाते हैं। कुछ ऐसे नृत्य हैं, जिनमें कलाकार नाचते हुए गीत भी गाते हैं और ताली भी बजाते हैं। कुछ ऐसे भी नृत्य हैं, जिनमें नाचने वाला समूह अलग एवं गायन, वादन समूह अलग होते हैं। कुछ नृत्य ऐसे होते हैं, जो केवल संगीत की धुन पर किये जाते हैं। केरल के अधिकांश लोक नृत्य ऐसे गोल घेरे में तालियों की थाप पर प्रदर्शित किये जाते हैं। ताली के साथ-साथ कुछ नृत्यों में नाचने वाले हाथ में बाँस की छड़ी रखते हैं, जिसे बीच-बीच में तोड़ कर या जमीन पर पीट कर ध्वनि उत्पन्न की जाती है। केरल में मूलत: तीन विशेष क्षेत्र हैं, मालावार, मध्य केरल एवं दक्षिण केरल। इन तीनों क्षेत्रों में अलग तरह के नृत्य अलग-अलग परिधान में प्रस्तुत किये जाते हैं। इनमें से कुछ लोकनृत्यों का विवरण यहाँ प्रस्तुत है:

1. सांगकली :

सांगकली को शास्त्रकली या पत्रकली भी कहा जाता है। प्रारंभ में यह मुख्य रूप से समाजिक-धार्मिक नृत्य था, जो नंबूदरी (मलयाली ब्राह्मण) समाज के मनोरंजक का साधन था। प्राचीन केरल में यह नृत्य-शैली व्यायाम के रूप में मानी जाती थी, जिसका उपयोग सैनिक प्रशिक्षण में किया जाता था। इस नृत्य में पैरों की क्षमता पर विशेष ध्यान दिया जाता था। इस नृत्य का जो अंतिम भाग है, उसे कुडमेंडप्पु कहा जाता है। इस नृत्य में सैन्य अभ्यास में कलात्मक तलवारबाजी एवं अन्य हथियारों के तकनीकी प्रयोग का प्रदर्शन किया जाता है।

2. कैकोट्टिकली :

कैकोट्टिकली को तिरुवातिरकली भी कहा जाता है। यह केरल का सबसे प्रसिद्ध योग नृत्य है। यह नृत्य भंगी माया मुख्य रूप से समूह में प्रस्तुत किया जाता है, जो अत्यंत ही आकर्षक और संतुलित होता है। यह नृत्य केरल की महिलाओं द्वारा किसी भी उत्सव, जैसे ओणम्, तिरुवलिरा विशु आदि के समय प्रस्तुत किया जाता है। यह अत्यंत ही साधारण एवं आकर्षक नृत्य शैली है। उत्तरी केरल के कुछ हिस्से, जिसे मालावार क्षेत्र कहा जाता है, वहाँ इस नृत्य शैली के प्रदर्शन में महिलाओं के साथ पुरुष भी शामिल होते हैं। महिलाएँ सुनहरे रंग के किनारे वाली सफेद साड़ी पहनती हैं और बालों में चमेली का गजरा लगाती हैं। पुरुष मुंड का प्रयोग करते हैं। इस नृत्य में प्रतिभागी नाचने के साथ-साथ गीत भी गाते हैं और लयबद्ध होकर अत्यंत ही मोहक शैली में तालियाँ बजाते हैं। नृत्य करते समय कोई एक प्रतिभागी गाने का एक लाइन गाता है और अन्य सभी उसी पंक्ति को कोरस में दोहराते हैं। साथ ही क्रमवार तरीके से तालियाँ भी बजाते हुए निरंतर वृत्ताकार घेरे में क्लॉकवाइज और एंटी-क्लॉकवाइज दिशा में घूमते हैं। इस नृत्य की लय और भंगिमा अत्यंत मनमोहक व मनोरंजक होती है।

3. डप्पुकली :

यह मलवार क्षेत्र के मुस्लिम समुदाय का प्रचलित लोकनृत्य है। नृत्य में दस-दस लोगों की दो पंक्तियाँ होती हैं। वे सभी अपने बायें हाथ में डप्पु (ढोल) लिए रहते हैं एवं दाहिने हाथ से डप्पु

बजाते हुए विभिन्न शारीरिक भंगिमाओं की प्रस्तुति अत्यंत आकर्षक शैली में करते हैं। इस नृत्य की गत्यात्मकता और लयबद्धता इसकी खूबसूरती है।

4. वेलकली :

यह नायर समुदाय का प्रचलित मार्शल आर्ट नृत्य है। यह नृत्य शैली केरल के प्राचीन युद्ध शैली का प्रतीक माना जाता है। इसमें प्रतिभागी चमचमाती तलवार से अत्यंत उत्साह के साथ अपने बल और साहस का प्रदर्शन करते हैं।

5. पदयानी :

पदयानी को बोलचाल की भाषा में पदेनी भी कहा जाता है। यह केरल के रंगबिरंगा और भव्य प्रदर्शन वाले लोक नृत्यों में से है, जिसका संबंध दक्षिणी केरल के मंदिरों में संपन्न होने वाले पर्वों से है। पदयानी का सामान्य अर्थ है आरतियों की पंक्ति। परंतु लोक कलाओं में यह अभिनय के माध्यम से दैविक कथाओं की प्रस्तुति है। इसमें देवी-देवताओं के रौद्र रूप का मास्क लगा कर अभिनय किया जाता है। यह मास्क सुपारी और ताश के पत्ते का बना होता है। पदयानी की प्रस्तुति में मुख्य रूप से काली, यमराज, यक्षिणी आदि का चित्रण होता है।

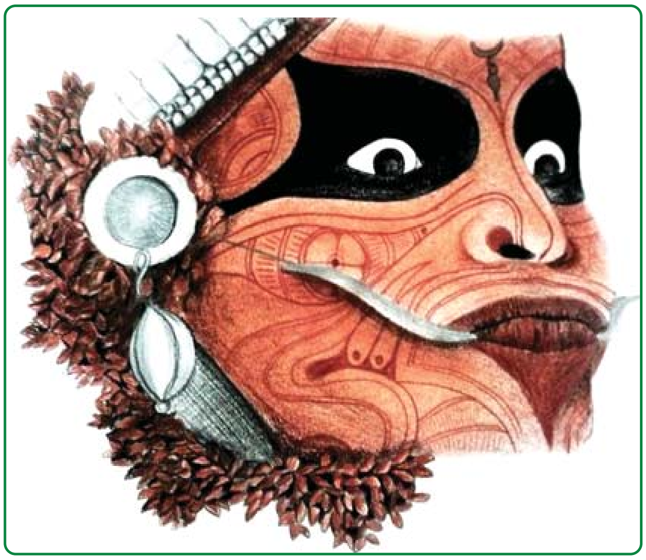

6. तैयम :

तैयम को कालीयाट्टम के नाम से जाना जाता है। यह केरल का अति प्राचीन सामाजिक-धार्मिक नृत्य शैली है। इस नृत्य शैली को कालीयाट्टम भी कहा जाता है, क्योंकि यह काली की आराधना का पवित्र रूप है। कालीयाट्टम को तैयाट्टम भी कहा जाता था, क्योंकि पुराने जमाने में प्रत्येक खेड़ा या गाँव को अनिवार्यत: यह नृत्य करने के लिए वाध्य किया गया था। इस वजह से यह सामाजिक व धार्मिक आयोजन का एक विशिष्ट अंग वन गया।

प्राचीन काल में केरल के हर गाँव में एक सामूहिक तीर्थ स्थान होता था, जिसे 'कवु' कहा जाता था। इस तीर्थस्थान के सामने 'कालीयुद्धम' नृत्य करना अनिवार्य था। मलयालम में 'काली' का अर्थ सुरक्षा भी है। इसलिए इसकी प्रस्तुति का एक उद्देश्य समाज एवं परिवार की सुरक्षा भी है।

पुराने जमाने में द्रविड़ लोग उग्र देवी की आराधना करते थे, जिसका नाम 'कोट्टावाई' था। इस देवी को मनाने के लिए ही यह विशिष्ट नृत्य किया जाता था। यह नृत्य बाद में विकसित होकर 'कालीयुद्धम' के नाम से जाना जाने लगा। पूरे भारत में केरल को 'शक्ति-आराधना' की धरती माना जाता है। इसलिए यह नृत्य-शैली आगे चलकर इस समाज एवं क्षेत्र की पहचान वन गई।

प्राचीन कोलातिरी सामाज्य में उत्तरी केरल में काली पूजा की प्रधानता थी। इसका प्रभाव यह हुआ कि केरल के अन्य भागों की तुलना में यह नृत्य शैली मलबार क्षेत्र में ज्यादा प्रचारित हुआ। चूँकि यह प्रत्येक गाँव एवं सुदूर अंचलों में प्रदर्शित किया जाता था, जिससे इसके कई रूप भी विकसित हुए। इस नृत्य के प्रस्तुतकर्ता को कोलम कहा जाता है। कालांतर में काली पूजा के साथ-साथ अन्य देवी-देवताओं को भी इस नृत्य में नायक के रूप में प्रस्तुत किया जाने लगा। कोलम का सामान्य अर्थ ईश्वर का प्रतिरूप है। ईश्वर के रूप में कई देवी-देवताओं का प्रतिरूप बनकर कोलम इस नृत्य की प्रस्तुति करता है। विभिन्न देवी-देवताओं की छवि के अनुरूप ही कोलम रूप-सज्जा करता है। इस रूप-सज्जा में मुख्य रूप से चेहरे पर पेंट किया जाता है, जो अत्यंत विशिष्ट और मनोहारी होता है। इसी पेंटिंग के माध्यम से अलग-अलग छवियाँ उभरती हैं। इसके लिए कोलम को अपने रूप-सज्जा में 8-10 घंटे का समय लगता है। साथ ही मुकुट, अंगवस्त्र, अंगिया, गहने, चूड़ियाँ आदि भी अत्यंत आकर्षक और पात्रानुकूल होते हैं। ये वस्त्र या तो ऊनी कपड़े के या फिर सूती कपड़े के बने होते हैं, जिसे देख कर ऐसा लगता है कि भरतनाट्यम का परिधान भी इसी नृत्य-परिधान का अनुकरण है।

7. ओपन्ना :

ओपन्ना केरल के मुस्लिम समाज में मुख्यत: शादी के समय प्रस्तुत किया जाता है। यह नृत्य पुरुष और स्त्री दोनों के द्वारा किया जाता है। पुरुष दुल्हन को चिढ़ाने और रिझाने के लिए यह नृत्य करता है तो स्त्री दूल्हे को। यह केरल की सांस्कृतिक पहचान के साथ-जाथ धार्मिक अस्मिता का भी प्रतीक है।

निष्कर्ष के रूप में कहा जा सकता है कि केरल की लोक संस्कृति भारत की सामाजिक संस्कृति का प्रतीक है। यहाँ के लोकनृत्य की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह जीवन के विविध पक्षों को अपने में समाई हुई है। प्राय: सभी लोक नृत्य समूह में प्रस्तुत किये जाते हैं। इसमें नृत्य, गायन एवं प्राय: साथ-साथ चलता है। सभी लोक नृत्यों में एक समानता दिखाई देती है और समानता का एक जबर्दस्त मिसाल यह है कि प्राय: सभी नृत्य गोल घेरे में होता है और चाहे किसी भी धर्म का उत्सव हो, सबकी सामूहिकता एक जैसी होती है।

- सहायक प्राध्यापक, आर सी एस कालेज
मंझौल, बेगुसराय
मोवाइल: +91 8639321968

आंध्र का लोकगीत साहित्य

- डॉ डी सत्य लता -

साहित्य के मूलभूत तत्वों के आधार पर कविता को स्थूलत: दो भागों में विभाजित किया जा सकता है, ज्ञातशिल्प तथा अज्ञातशिल्प की कविता। ज्ञातशिल्पीय कविता प्रबुद्ध एवं भावुक कलाकार की प्रयत्नपूर्वक सर्जना होती है, जबकि अज्ञातशिल्पीय कविता किसी अशिक्षित जनपद की अनायास अभिव्यक्ति होती है, जो जवानी एक-दूसरे तक और एक प्रांत से दूसरे प्रांत तक पहुँच जाती है। प्रथम वर्ग की कविता एककर्तृक, अर्थात किसी एक व्यक्ति की अपनी कृति होती है, जबकि द्वितीय वर्ग की कविता अज्ञातकर्तृक अथवा अनेककर्तृक होती है। भाषा-विशेषज्ञों के अनुसार प्रथम वर्ग की कविता द्वितीय वर्ग की कविता का परिणत एवं परिष्कृत रूप ही है।

आंध्र कविता भी इस परिणाम-क्रम से वंचित नहीं कही जा सकती है। कई प्रमाणों के बल पर कहा जा सकता है कि तेलुगु का लोक-गीत साहित्य ही कालांतर में, देशी कविता में परिणत हुआ है। 'सीसमु', 'गीतमु', 'रगड', 'द्विपद', 'मध्याक्कर', 'तरुवोज' आदि देशज वृतों का आविर्भाव कतिपय लोकगीतों से माना जा सकता है।

लोकगीत-साहित्य का संवर्धन अति प्राचीन काल से तेलुगु प्रदेश में होता आया है। इस तथ्य के प्रमाण प्राज्ञ साहित्य में कई स्थानों पर मिलते हैं। सभी लोकगीत मात्रा छंदों में लिखे गये हैं। आदिकवि नन्नय्या के पूर्व शिलालेखों में देशज वृत उपलब्ध होते हैं। नन्नय्या ने स्वयं ही 'तरुवोज', 'मध्याक्कर', 'अक्कर', 'मधुराक्कर' नामक वृत्तों का प्रयोग किया था। 'नन्नेचोड' कवि ने अपने काव्य 'कुमारसंभव' में 'अंकमालिकलु', 'ऊयलपाटलु', 'अलतुलु', 'गौडगीतमुलु', 'रोकटिपाटलु' आदि लोकगीत विधाओं का उल्लेख किया था। इन लोकगीतों का सबसे अधिक उल्लेख पालकुरिकि सोमनाथ की कृतियों में मिलता है। कहा जाता है कि तत्कालीन जनमानस में प्रचलित भक्ति-पूर्ण लोकगीत ही सोमनाथ की कविता की आधार-भूमि है।

> आज लोकगीत और लोक-साहित्य को आदर की दृष्टि से देखा जा रहा है। एक समय था, जब यह साहित्य के अंतर्गत गिना ही नहीं जाता था। अब लोक-साहित्य इस घृणित अवस्था से उबर गया है। समाज विज्ञान के विद्वान इस साहित्य का उपयोग कर रहे हैं। पंडित और समालोचक इस साहित्य में से अनेक अंश अपने कथन की पुष्टि में उद्धृत कर रहे हैं। इस साहित्य में प्राप्त इतिवृत्त के आधार पर नये काव्यों का सृजन किया जा सकता है। सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन में लोक-साहित्य का अनुपम योगदान हो सकता है।

सोमनाथ की कृतियों में 'रोकटि पाटलु', 'तुम्मेद पदमुलु', 'प्रभात पदमुलु', 'आनंद पदमुलु', 'शंकर पदमुलु', 'निवालि पदमुलु', 'वालेशु पदमुलु', 'प्रभात पदमुलु' आदि का उल्लेख मिलता है। लाक्षणिकों द्वारा अभिहित 'नाचन सोमनाथ' के 'जाजरपाट' छंद में ही तेलंगाना के ग्रामवासी आज भी कामपूर्णिमा के अवसर पर लोकगीत गाते हैं। 'दशकुमारचरित' में केतन्ना ने कुछ गीतों का उल्लेख किया, जो संस्कृत के मूल ग्रंथ में नहीं हैं। श्रीनाथ के साहित्य में यक्षगान तथा जाजरों का उल्लेख मिलता है तो महाकवि पोतन्ना के साहित्य में गोविंद पर लिखे गीतों का उल्लेख। ताल्लपाक अन्नमाचार्य ने अपने गीतों में तत्कालीन सभी लोकगीत शैलियों का प्रयोग किया। इनकी पत्नी ताल्लपाक तिमक्का की कृति भी लोकगीत-शैली को लेकर ही बनी। ताल्लपाक चिनतिरुमलाचार्य ने न केवल पदों की रचना की, अपितु गेय-काव्य के लक्षण भी लिखे थे। लोकगीत न होने के बावजूद ताल्लपाक कवियों की कृतियों में हमें गीतों के विविध रूप तथा लोकगीतों के क्रम-परिणाम अवश्य मिलते हैं। रुद्रकवि प्रणीत 'सुग्रीव विजय' नामक यक्षगान में कई प्रकार की गीत-शैलियाँ मिलती हैं। दामेरल वेंगल भूपाल ने 'जाजर पाटलु', 'धवलमुलु', 'कल्याण गीत' आदि का जिक्र किया। तंजौर राजाओं में रंगा जी, रामभद्रांब, विजय राघव आदि ने पदकविता की रचना की। भद्रावल रामदास के पद लोकगीतों के रूप में आम जनता में प्रसिद्ध हैं। क्षेत्रय्यपद और त्यागराजु की संगीत-कृतियाँ, कर्नाटक संगीत के सर्वश्रेष्ठ कृतियाँ हैं।

अन्य पद-रचयिताओं में एलकूचि बालसरस्वती, कंकंटि पापराजु, गोगुलपाटि कूर्म नाथ कवि, आलूरि कुप्पन आदि प्रमुख हैं। पदकविता होने के बावजूद उनकी कविता यथोचित प्रौढ़ भी है, जो देशी कविता के अंतर्गत आती है। इसमें संदेह नहीं कि कुछ लोकगीत विलुप्त हो चुके हैं। परंतु प्राचीन ताड़पत्र-ग्रंथों में कहीं- कहीं कतिपय गीत आज भी मिल जाते हैं। मुद्रण के विकास के परिणामस्वरूप लोकगीत-साहित्य का कुछ अंश प्रकाश में आ सका। मुद्रित गीतों में अधिकांश तो आधुनिक ही हैं। मौखिक रूप में प्राप्त छोटे-छोटे गीतों का प्रकाशन आधुनिक उत्साही युवा कलाकारों द्वारा संपन्न किया जा रहा है। लेकिन इस दिशा में और बहुत कुछ किया

जाना शेष है। ऐसे में यह पता लगाना कठिन ही है कि कौन-सा गीत कब का है और कितने परिवर्तनों का शिकार हुआ है। इस अखंड संपदा के संरक्षण हेतु सर्वप्रथम आंध्र के लोगों को सचेत करने वाले महानुभाव सी पी ब्राउन थे। तीस वर्ष के अनंतर श्री जे एल बायल नामक एक पश्चिमी विद्वान ने लोकगीतों का संग्रह किया था। तदुपरांत बीसवीं शती के आरंभ में उत्साही पंडित एवं प्रकाशकों ने गीतों का संग्रह कर उन्हें प्रकाशित किया।

1. पौराणिक लोकगीत:

लोकगीत भी अभिजात्य साहित्य की भाँति विविध पुराणों एवं इतिहासों से संबद्ध हैं। इस वर्ग के लोकगीत सर्वाधिक प्रचार में हैं। वास्तव में तेलुगु में अनूदित 'रामायण', 'महाभारत' आदि ग्रंथों में मूलकथा के अतिरिक्त ऐसी अनेकानेक कथाएँ मिलती हैं, जिससे यह कहना कठिन हो जाता है कि इन अतिरिक्त कथाओं का उद्‌गम पंडितों का अभिजात्य साहित्य है अथवा लोक-साहित्य। दरअसल पौराणिक कथाओं में ग्रामीण जनता की आत्मा बसती है। अत: ये समय-समय पर इन कथाओं में अपनी रुचि के अनुकूल परिवर्तन करते रहते हैं। कूचकोंड रामायणमु, शारद रामायणमु, धर्मपुरि रामायणमु, श्रीरामदंडमुलु, मोक्षगुंड रामायणमु, सूक्ष्मरामायणमु, संक्षेपरामायणमु, गुत्तेनुदीवि रामायणमु, चिट्टि रामायणमु, रामायण गोब्बिपाट, श्रीराम जाविलि, सेतु गोविदम् जैसी कृतियाँ, रामायण कथासुधासार की मनोहर लहरें हैं। इनके अतिरिक्त ऐसी अनेकानेक कृतियाँ हैं, जो रामायण कथा के किसी एक अंश को ले कर चली हैं। इन लोकगीतों की भाषा एवं अभिव्यक्त भावों में ग्रामीण सभ्यता की गंध महक उठती है। ऐसे ही महाभारत की कथाओं में 'नलचरित्र', 'देवयानी चरित्र', 'सुभद्राकल्याणमु', 'धर्मराजु का द्यूत', 'द्रौपदी का चीर-हरण' आदि उल्लेखनीय हैं। वृहद् लोकगीतों में विराटशल्यपर्व, उतर- दक्षिणगोग्रहणमुलु प्रमुख हैं। इसी प्रकार भागवत की अनेक कथाओं का भी ग्रामीण लोग गान करते रहते हैं।

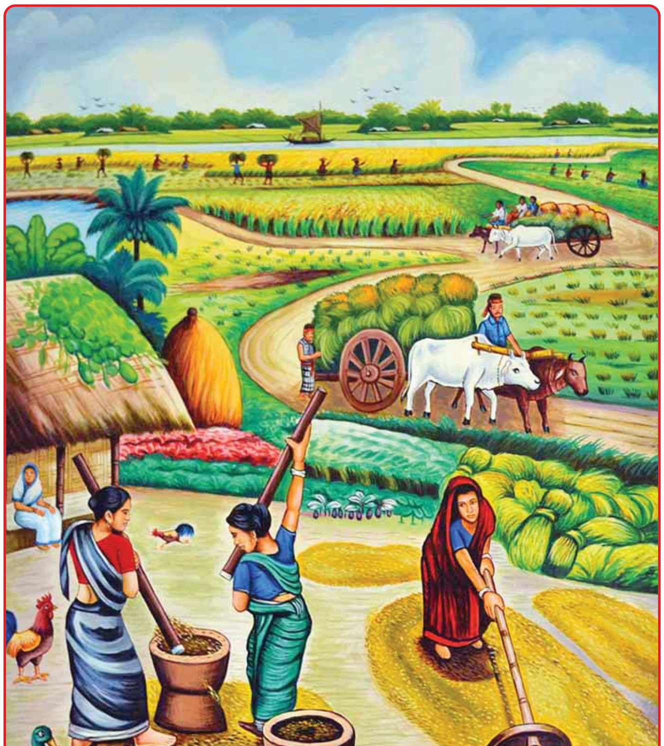

2. ऐतिहासिक लोकगीत:

लोकगीत-साहित्य में ऐतिहासिक गीतों का विशिष्ट स्थान है। वस्तु, शैली तथा कथोपकथन की दृष्टि से अन्य लोकगीतों की तुलना में ये विलक्षण माने जाते हैं। इन्हीं को वीरगीत भी कहा जाता है। इन गीतों में वीरतापूर्ण घटनाओं का आँखों देखा वर्णन मिलता है, जो समस्त लोगों में जोश भर देते हैं। आंध्र में ऐतिहासिक गीत भी अधिक संख्या में पाये जाते हैं। स्वर्गीय सुरवरम् प्रताप रेड्डी के मतानुसार तेलंगाना में मियासाब, सोभनाद्रि, रामेश्वर राव, रानी शंकरम्मा, सर्व वेंकट रेड्डी कुमार रामुडु, कर्नूलु नवाबु आदि वीरों की कथाएँ प्रचलित हैं। इनके अतिरिक्त सदाशिव रेड्डी, पर्वताल मल्लारेड्डी, सर्वायि पापडु, बल्गूरि कोंडल रायडु जैसे वीरों की कहानियाँ भी ऐतिहासिक लोकगीतों में उपलब्ध होते हैं। इन गीतों में 'पलनाटि चरित्रमु' का महत्वपूर्ण स्थान है।

3. आध्यात्मिक लोकगीत :

तेलुगु में भक्ति, कर्म तथा ज्ञानपरक लोकगीत लाखों की संख्या में हैं। ताल्लपाक कवियों की कृतियाँ, महान कवि क्षेत्रय्य के पद, त्यागराजु की कृतियाँ, परिमलरंग के पद, छत्रपुरी की जावलियाँ संगीतज्ञों की संपत्ति मानी जाती हैं। अध्यात्म रामायण का आज भी आम जनता द्वारा गायन किया जाता है। भद्राचल के रामदासु के पद, हरिदासु, नरसिंहदासु, परांकुशदासु, निट्टल प्रकाश दासु जैसे भक्तों के गीतों का भी गायन किया जाता है। 'कोलाट' गीतों में मधुर भक्ति का प्राधान्य रहता है। पालकुरिकि के द्वारा वर्णित प्रभातपद जागरण-गीत हो सकते हैं, जिन्हें भूपाल गीत भी कहा जाता है। क्योंकि ये गीत प्राय: भूपाल राग में गाये जाते हैं।

वैसे भारत में कई प्रकार के व्रत और पर्व मनाये जाते हैं। आंध्र प्रदेश इससे भिन्न नहीं है। यहाँ महिलाओं द्वारा मदनद्वादशी व्रत, नित्यदान व्रत, दीपदान व्रत, पद्मव्रत, चातुर्मास्य व्रत, कृत्तिक दीप व्रत, वरलक्ष्मी व्रत, कामेश्वरी व्रत, श्रावण शुक्रवार व्रत, श्रावण मंगलवार व्रत आदि अनेक व्रत किये जाते हैं, जिनसे संबद्ध अनेकानेक लोकगीत भी मिल जाते हैं।

4. महिला-गीत:

इन गीतों में अधिकांशत: आंध्र प्रदेश के सामाजिक जीवन का चित्रण मिलता है। इन गीतों में संतान के लिए तरसने वाली

स्त्रियों की वेदना, व्रत, मनौतियाँ, वंध्या स्त्रियों की दयनीय स्थिति आदि का वर्णन मिलता है। इन लोकगीतों में लालि पाटलु, जोलपाटलु प्रमुख हैं। इसके अलावा विवाह के विभिन्न रस्मों से संबंधित गीत भी मिलते हैं। विवाह के उपरांत नई-नवेली दुल्हन का घर के सदस्यों, अर्थात सास एवं ननद के साथ व्यवहार कैसा हो एवं अड़ोस-पड़ोस के लोगों के साथ कैसा हो, इन सबका वर्णन इन लोकगीतों में मिलता है।

5. श्रमिक-गीत:

श्रमिक गीतों में कृषक-जीवन का प्रतिबिंब दिखता है। इन श्रमिक गीतों की विषयवस्तु विविध और अनंत होती है। श्रृंगार, भक्ति, वेदांत, स्थानीय घटनाओं का वर्णन, विषादपूर्ण वृत्त सभी इन गीतों में पाये जाते हैं। श्रमिक गीत आम तौर पर अपनी श्रमानुकूल लय से शोभित होते हैं। इंद्रिय सुखों के स्मरण से श्रमिक सुख का अनुभव करता है। अतएव इन गीतों में इंद्रिय सुखों का वर्णन मिलता है।

6. बाल-गीत:

बाल गीत दो प्रकार के होते हैं, बालकों के लिए बड़ों द्वारा रचित गीत और बालकों द्वारा ही स्वयं रचित गीत। बड़ों द्वारा लिखे गये गीतों के भी दो भाग हैं, बच्चों को सुलाने अथवा उन्हें पुचकारने के लिए गाये जानेवाले गीत तथा बच्चों को ही इतिवृत्त बनाकर अथवा किसी मनोहारी विषय के वर्णन को लेकर बच्चों को आह्लादित करने हेतु लिखे गये गीत। लालिपाटलु अथवा जोलपाटलु का आनंद बच्चे अनुभव नहीं कर सकते। उनमें निहित संगीत तत्व से बच्चे सो जाते हैं या आश्वस्त हो जाते हैं। यही उन गीतों का प्रयोजन है। बड़ों के गीतों से बच्चे क्रमश: नाद, लय तथा अभिनय सीखते हैं। नाद से बच्चे आकृष्ट होते हैं। लय से उनका उत्साहवर्धन होता है तथा अभिनय से उनका शरीर पुष्ट होता है। इसके अलावा बच्चों द्वारा खेले जानेवाले विभिन्न खेलों से संबंधित गीत भी इस श्रेणी में देखने को मिलते हैं।

7. श्रृंगार-गीत:

लोकगीतात्मक साहित्य में कई गीत श्रृंगार रस प्रधान भी मिलते हैं, जिनमें अभिजात्य साहित्य के लक्षणों को ढूँढ़ना बुद्धिमता नहीं है। कारण यह है कि जनपद कवियों द्वारा वर्णित सीताराम के श्रृंगार भी प्राकृत गंध से परिपूर्ण हैं। इस साहित्य की एक विशेषता यह है कि इसमें पात्रों द्वारा जनमानस के मनोभाव ही व्यक्त होते हैं, उन-उन पात्रों के भाव कदापि नहीं। इन गीतों में जीवन का वास्तविक रूप का ही दर्शन होता है। लोकगीतों में न औचित्य-विचार है, न तदनुकूल पात्र-पोषण अथवा चरित्र-चित्रण है। इन धर्मो का अभाव ही लोकगीत-साहित्य की शोभा है। फिर भी कुछ लोकगीतों में धर्म पर आधारित सभ्य श्रृंगार का वर्णन हुआ है। इनमें 'सीता का क्रोध', 'सीता की पहचान', 'ऊर्मिला की निद्रा' आदि उल्लेखनीय हैं। सुंदरकांड नामक पद में वियोग श्रृंगार का सुंदर वर्णन हुआ है। महाभारत संबंधी लोकगीतात्मक कथाओं में, 'नलचरित्र', 'सुभद्रा कल्याणमु', 'शशिरेखा परिणयमु', 'देवयानि-चरित्रमु' श्रृंगार प्रधान काव्य हैं। दंपतियों का प्रेम-वर्णन बहुत ही ऋजुतापूर्ण और मनोहारी लगता है। 'गंगा-विवाह' में शिव जी को दक्षिण के नायक के रूप में अभिवर्णित किया गया है। सुराभांडेश्वरम में परकीय श्रृंगार का वर्णन है। श्रृंगार प्रधान छोटे-छोटे लोकगीतों में चलमोहन रंगा, वेंकटय्या चंद्रम्मा पाट, नारायणम्मा पाट, सिरिसिरि मुव्व, रंगम् पद आदि उल्लेखनीय हैं। तेलंगाना में कामपूर्णिमा के अवसर पर गाये जाने वाले सभी लोकगीत श्रृंगार गीत ही हैं।

8. अद्भुत कथाएँ :

साधारण विषयों में भी असाधारणता का समावेश जनमानस का अभीष्ट है। विनोद के साथ, भक्ति अथवा भय भी मानवीय कल्पनाओं से आदमी के मन में घर कर लेते हैं। दुष्कर प्रसंगों में किसी अद्भुत करिश्मे द्वारा समस्या का समाधान निकाला जाता है। किसी असाधारण शक्ति के द्वारा, जीवन की कठिन समस्याओं के समाधान की आकांक्षा रखना मानव-मनोविज्ञान का नैसर्गिक गुण है। इसी मनोविज्ञान के आधार ग्रामीण कवियों ने इन लोकगीतों में अतिमानवीय कल्पनाएँ की हैं। अद्भुत लोकगीतात्मक कथाओं में सबसे अधिक प्रचलित कथा 'बालनागम्मा' है। इस कथा का कार्यस्थल महबूब नगर जिले का पानुगल्लु ग्राम है। यह स्थानीय रामायण कथा जैसी है। अविश्वसनीय अद्भुत और आश्चर्यकारी घटनाओं से यह कथा भरी हुई है। 'कम्मवारि पणति' नामक लोकगीतात्मक कथा भी अपनी विलक्षणता के लिए प्रसिद्ध है। 'पसल बालराजु' कथा में वर्णांतर विवाह का वर्णन मिलता है। गांधारी कथा भी अपने आश्चर्यकारी रोमांच के लिए प्रसिद्ध है। इस वर्ग के अन्य गीतात्मक कथानकों में धर्मांगद पामुपाट, कांभोजराजु कथा जैसी कथाएँ जनमानस को सत्य और धर्म की महत्ता और उपादेयता का उपदेश देते हुए उनके समुन्नत जीवन की आकांक्षा से परिपूर्ण दिखती हैं।

9. करुणरसात्मक गीत-साहित्य :

मानव के नित्य जीवन में दुख की मात्रा ही अधिक है। अत: जनपद कवियों ने दुख का प्रभावांकन अपने गीतों में सहज रूप से किया है। यहाँ भी इन कवियों में अभिजात्य साहित्य की आदर्शवादिता अथवा औचित्य की भावना नगण्य है। वीरों के साहसपूर्ण कृत्यों से उत्साहित हो जाना तथा युद्ध में उनके वीरगति

को प्राप्त हो जाने पर आँसू बहाना आदि का चित्रण इन कवियों ने किया। उत्साह और करुण इन दोनों भावनाओं से वे सहज ही उद्विग्न हो जाते हैं। आंध्र के लोकगीत साहित्य में करुणरस प्रधान एवं चित्त को द्रवीभूत करने वाले अनेकानेक गीतात्मक कथानक मिलते हैं। सास की निर्ममता, पतिदेव के अत्याचारों, ननद व जेठानी अथवा देवरानी की निष्ठुरता के कारण पिसने वाली औरत की कथाएँ आंध्र के लोकगीतात्मक साहित्य में अनगिनत मिल जाती हैं। वास्तविक घटनाओं को कल्पना से भर देना लोक साहित्य के कवियों के लिए बायें हाथ का खेल है। स्थानीय करुणात्मक इतिवृत्तों में 'कन्यकोंब कथा' का विशिष्ट स्थान है। यह कथानक अति प्राचीन है। 'कांभकथा' का प्रचार 'पिच्चुक कुंट्लु' नामक घुमक्कड जाति में अधिक हुआ है। 'सन्यासम्मा' कथा में अविभक्त परिवार में कनिष्ठों के अनुभूत कष्टों का वर्णन है। करुणरसात्मक लोक गीतों में सती नारियों के कथानकों का अपना अलग महत्व है। इनमें 'काम्मा कथा', 'पापम्मा कथा', 'कोट एरुकम्मा कथा', 'तिरुपतम्मा कथा' आदि प्रमुख हैं। सती प्रथा के उन्मूलन के बाद इन स्त्रियों के सहगमन की कथा निस्संदेह रोमांचकारी हैं। 'नल्लतंगल' की कथा तमिलनाडु से संवद्ध है। 'वीरराजम्मा' कथा पलनाटि सीमा की है। तेलंगाना में 'एरुकल नांचारि कथा', 'रामुलम्मा कथा', 'सरोजिनी कथा' तथा 'मूसी पोंगु कथा' आदि प्रसिद्ध करुणरसात्मक लोकगीत हैं।

10. हास्य गीत:

सुख-दु:खों की अनुभूति अमीर और गरीब दोनों के लिए बराबर है। सुख की अनुभूति का बाह्य लक्षण हँसी है, तो दुख का रुदन। सुखसूचक हँसी का प्रदर्शन लोकगीत-साहित्य में कहीं-कहीं किया गया है। शांतगोविंद नामों में 'ऋष्यश्रृंग', अडवि गोविंद नामों में 'कुंभ कर्ण', सूक्ष्मरामायण में 'शूर्पणका' जैसे पात्र हास्य के अच्छे आलंबन हैं। 'सीतागडिय' नामक गीत में हास्य तथा श्रृंगार का सुखद समावेश हुआ है। सीता की हास्योक्तियाँ व्यवहार के उदाहरण माने जा सकते हैं।

11. लोक गीत और पिंगल:

प्रागन्नन्नय्य युग से लेकर आज तक के देशी छंदोविधान पदपूर्ण हैं। इस देशी रचना में मात्राबद्ध वृत्तों का ही प्रयोग हुआ है। यह संगीतानुकूल लय से शोभित है। इनमें कुछ तमिल, कन्नड़ तथा तेलुगु में समान रूप से प्रयुक्त हुए हैं। उदाहरण के लिए तमिल के ओरुउ मोवे, कूरंभोवे, तोडे आदि वृत्तों से तथा कन्नड़ के 'भामिनि षट्पदि', 'भोग षट्पदि', 'वार्थिक षट्पदि', 'ललिता', 'मंदानिल', 'छंदोवसंत' से सदृश्यता रखने वाले गीत आंध्र के लोकगीतों में हैं। अभिजात्य साहित्य के पिंगल-विधान के आधार पर लोकगीतों का अध्ययन पूरा नहीं हो पाता। वास्तव में यह समझना उचित होगा कि लोकगीतों में उपलब्ध कतिपय रचना शैलियों को अपना कर तथा उनको परिष्कृत कर अभिजात्य साहित्य के कवियों ने देशी वृत्तों का अविष्कार किया है। इन्हीं परिष्कृत छंदों और वृत्तों का ही उल्लेख विन्नकोट पेद्दन्ना से लेकर अप्पकवि तक के लाक्षणिकों ने अपनी पिंगल संबंधी कृतियों में किया है। संगीत का भी विभाजन भरत, मतंग जैसे पूर्व लाक्षणिकों ने किया है और उन्होंने देशी विभाजन के अंतर्गत कई प्रयोगों का जिक्र किया है। लगता है कि हमारे 'जाजरगीत' ही संस्कृत में चर्चरी गीत बने। अत: देशी छंदों के स्रोतरूप लोक गीतों को न अभिजात्य साहित्य के छंद-विधान के आधार पर आंकना उचित है, न अन्य सीमित मानदंडों के आधार पर। तत्व की बात यह है कि आम जनता द्वारा इतनी विविधतापूर्ण लोकगीतों का आविर्भाव नहीं हो सकता। जितने भी गीतों एवं मनोभावों का आविष्कार क्यों न हुआ हो, लेकिन वे सब परिमित लय-तालबद्ध रागों में ही रचे गये होंगे।

आंध्र के लोकगीत साहित्य का अब तक बहुत कुछ हिस्सा विलुप्त हो गया है। अत: हमारा कर्तव्य यह है कि जो अवशिष्ट है, कम से कम उसकी रक्षा करें। आजकल लोकगीतात्मक शैली का प्रयोग राजनीति के क्षेत्र में भी हो रहा है। उनका यह प्रयत्न प्रशंसनीय है। स्वतंत्रता के आंदोलन तथा समाज सुधार के आंदोलनों में अनेकानेक लोकगीत आविष्कृत हुए हैं। सामाजिक प्रयोजनों से लिखे गये इन गीतों का प्रभाव जनता पर पड़ा है। इसका परिणाम यह हुआ है कि आज लोकगीत और लोक-साहित्य को आदर की दृष्टि से देखा जा रहा है। एक समय था, जब ये साहित्य के अंतर्गत गिने ही नहीं जाते थे। अब लोक-साहित्य इस घृणित अवस्था से उबर गया है। समाज विज्ञान के विद्वान इस साहित्य का उपयोग कर रहे हैं। पंडित और समालोचक इस साहित्य में से अनेक अंश अपने कथन की पुष्टि में उद्धृत कर रहे हैं। इस साहित्य में प्राप्त इतिवृत्त के आधार पर नये काव्यों का सृजन किया जा सकता है। सामाजिक और सांस्कृतिक अध्ययन में लोक-साहित्य का अनुपम योगदान मिल रहा है। पश्चिमी विद्वान और उत्तर भारत के विद्वान गवेषणापूर्ण लोक-साहित्य के अध्ययन, संकलन, संपादन आदि दिशाओं में अपने अभियान आरंभ कर चुके हैं। यदि तेलुगु का विद्वत्समाज इस दिशा में इतोधिक ध्यान देता है तो वह आंध्र की जनता के लिए एक वरदान साबित होगा

- पोस्ट डॉक्टोरल फेलोशिप
आंध्र विश्वविद्यालय
विशाखपट्टणम
मोबाइल: +91 9885910709

निजाम शासन: परिस्थितियाँ एवं स्वतंत्रता आंदोलन

- श्री बिगुल्ल बाबु -

भारत जितना विशाल देश है, उतनी ही पुरानी उसकी संस्कृति है। इसका इतिहास भी हजारों वर्ष पुराना है। हूण, कुषाण, इस्लामिक सुल्तानों, मुगलों, अंग्रेजों आदि जैसे कई विदेशियों ने भारत पर शासन किया। इनमें से कुछ इस्लामिक सुल्तानों एवं मुगलों ने इसे अपनी मातृभूमि समझकर यहीं बस गये। 17वीं शताब्दी में अंग्रेजों ने भारत में ईस्ट इंडिया कंपनी की स्थापना की और धीरे-धीरे यहाँ अपने कदम जमाते गये। उन्होंने सुरक्षा के नाम पर सेना को संगठित किया और किले बनाकर शक्तिशाली बनते गये। सन् 1757 में प्लासी युद्ध एवं सन् 1764 में बक्सर युद्ध जीतकर उन्होंने देश के कुछ हिस्सों पर कब्जा किया।

इनके विरोध में 1857 में जो सिपाही विद्रोह, अर्थात प्रथम स्वतंत्रता संग्राम हुआ, उसको कुचलने के बाद शासन ईस्ट इंडिया कंपनी के हाथों से इंग्लैंड की महारानी विक्टोरिया के हाथों में चला गया। आम जनता आर्थिक शोषण, डकैती, लूटमार और निरंकुशता के कारण त्रस्त रही और अंग्रेजी शासन के विरुद्ध आवाज उठाने लगी। आखिरकार लंबे संघर्ष के बाद 14 अगस्त, 1947 की आधी रात को जब पूरा विश्व सो रहा था, तब देश आजाद हुआ और अंग्रेजों की निरंकुशता एवं अराजकता के चंगुल से मुक्त हुआ।

आजादी के बाद देश भर में व्याप्त स्वदेशी रियासतों को मिलाकर भारत के गणराज्य की स्थापना की गई। लेकिन इन रियासतों में कश्मीर, जूनागढ़ और हैदराबाद के निजाम आजाद रहना चाहते थे, क्योंकि भारत और पाकिस्तान के विभाजन के कारण उन्हें भारत अथवा पाकिस्तान में स्वतंत्र रहने की छूट थी। इसी कारण हैदराबाद के अंतिम निजाम मीर उस्मान अलीखाँ ने स्वयं को स्वतंत्र घोषित कर लिया। भारत सरकार का दबाव था कि हैदराबाद भी गणराज्य का हिस्सा बने। इस पर निजाम ने संयुक्त राष्ट्र संघ एवं पाकिस्तान से भी सहयोग माँगा, लेकिन सफल नहीं हो पाया।

मुगल साम्राज्य के पतन के बाद उनके दक्खिनी सूबेदार चिंकलिज खान 'निजाम उल्क मुल्क' की उपाधि से सन् 1724 में स्वतंत्र राजा बना। 1724 से 1948 तक कुल सात निजामों ने हैदराबाद पर शासन किया। 1948 में हैदराबाद की रियासत वर्तमान तेलंगाना के समस्त जिलों, कर्नाटक के चार जिलों एवं मराठवाडा के 3 जिलों में फैली हुई थी। ब्रिटिश गवर्नर जनरल लार्ड वेल्लेस्ली की 'सेना सहयोग पद्धति' पर हस्ताक्षर करने वाले पहले स्वदेशी शासक थे निजाम। इसी कारण उन्होंने अंग्रेजों से अच्छे संबंध बनाये रखे थे। देश भर में अंग्रेजों के विरुद्ध आंदोलन चल रहे थे। पर निजाम हैदराबाद में अंग्रेजों के विरुद्ध चल रहे आंदोलनों को हमेशा कुचल रहे थे।

वास्तव में निजाम (नवाब) जनकल्याणकारी शासक थे। उनके शासन में कृषि को महत्व दिया जाता था। निजाम किसानों को खूब सहयोग देते थे। उन्होंने किसानों के लिए नहर और बड़े-बड़े तालाब बनवाये। हैदराबाद शहर का विस्तार किया। लेकिन उस समय गाँवों का शासन-तंत्र पटेल, पाटिल, देशमुख जैसे जमींदारों के हाथों में था। जमींदार गाँवों पर राज करते थे। किसानों से अधिक लगान वसूल कर उन्हें खूब सताते थे। विरोध करने पर उनके साथ मार-पीट भी करते थे। महिलाओं के साथ अत्याचार करते थे। वे बच्चों को भी नहीं बख्शते थे। निजाम को जमींदारों के इन करतूतों की जानकारी नहीं थी।

जमींदार जनता से 'वेट्टि चाकिरि' (बेगारी) करवाते थे। इस कारण किसान और भी गरीब होते गये। जमीन पर किसानों का कोई अधिकार नहीं था। सारे अधिकार देशमुख, पाटिल और जमींदारों के पास थे। विद्रोह करने वालों को निजाम के सैनिकों द्वारा दंड दिया जाता था। आजादी की लड़ाई के दौरान ही निजाम के अधीन जमींदारों के शासन से कुपित जनता को गांधी जी द्वारा चलाये जा रहे स्वतंत्रता आंदोलन ने आकर्षित किया था। उनमें भी राष्ट्रीयता की भावना जगी। जनता भारत के गणराज्य का हिस्सा बनना चाहती थी। उनमें स्वतंत्रता की चाह बढ़ने लगी। धीरे-धीरे उनकी यह इच्छा बढ़कर निजाम-विरोधी गणराज्य विलय आंदोलन बन गई। हैदराबाद के राष्ट्रीय आंदोलन एवं देश भर में चल रहे आंदोलन में भिन्नता है। हैदराबाद का गणराज्य विलय आंदोलन 15 अगस्त, 1947 से 17 सितंबर, 1948 तक चला। लेकिन यह आंदोलन इतिहास में सही तरह से दर्ज नहीं हुआ और इतिहास में जो दर्ज हुआ, उस पर अध्ययन नहीं हुआ।

हैदराबाद में स्वतंत्रता आंदोलन जोरों पर था। इसमें हैदराबाद से आदिलाबाद के गोंड खाड़ तक और आलंपूर से खम्मम, पाल्वंचा तक के लोग स्वच्छंद रूप से शामिल थे। तत्कालीन स्टेट कांग्रेस एवं कम्यूनिस्टों के कारण यहाँ की जनता जागृत हुई और उनमें आजादी की इच्छा बढ़ गई।

हैदराबाद में स्वतंत्रता आंदोलन सन् 1920 से ही चला आ रहा था। एक ओर निजाम के खिलाफ एवं दूसरी ओर भारत के गणराज्य में विलय की माँग वाले दोनों आंदोलन समानांतर चल रहे थे। आंध्र महासभा, हैदराबाद स्टेट कांग्रेस जैसी संस्थाओं ने

राष्ट्रीयता एवं क्रांति की भावनाओं को जनता तक पहुँचाया। भारत के गणराज्य में विलय की माँग कर रही यहाँ की जनता को देश भर से समर्थन मिला। गांधी जी सहित कई गणमान्य नेताओं ने हैदराबाद का संदर्शन करके जनता का हौसला बढ़ाया।

आजादी से ठीक एक सप्ताह पहले ही स्वामी रामानंद तीर्थ ने 'ज्वाइन इंडिया' आंदोलन की शुरुआत की। इससे लोग अधिक आकर्षित हुए। आंदोलन का दमन करने के उद्देश्य से लोगों को जेल में भी डाल दिया गया। **15** अगस्त को उस्मानिया विश्वविद्यालय के छात्रों ने कालेज के भवन पर तिरंगा झंडा फहराया और राष्ट्रगान गाये। आंदोलनकारी छात्रों को विश्वविद्यालय से निष्कासित किया गया, जिससे आंदोलन ने और भीषण रूप धारण कर लिया।

बूर्गुल रामकृष्णाराव मद्रास गये और वहाँ से टेलीग्राम भेजकर कुछ देशों से स्वतंत्रता प्राप्ति में सहयोग माँगा। दूसरी ओर स्वामी रामानंद तीर्थ के नेतृत्व में स्टेट कांग्रेस के सदस्य आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग ले रहे थे। इनके अलावा बूर्गुला, बद्दम एल्लारेड्डी, रावि नारायण रेड्डी, सुरवरम प्रताप रेड्डी सहित कई लोगों ने स्वतंत्रता के विभिन्न आंदोलनों का नेतृत्व किया था।

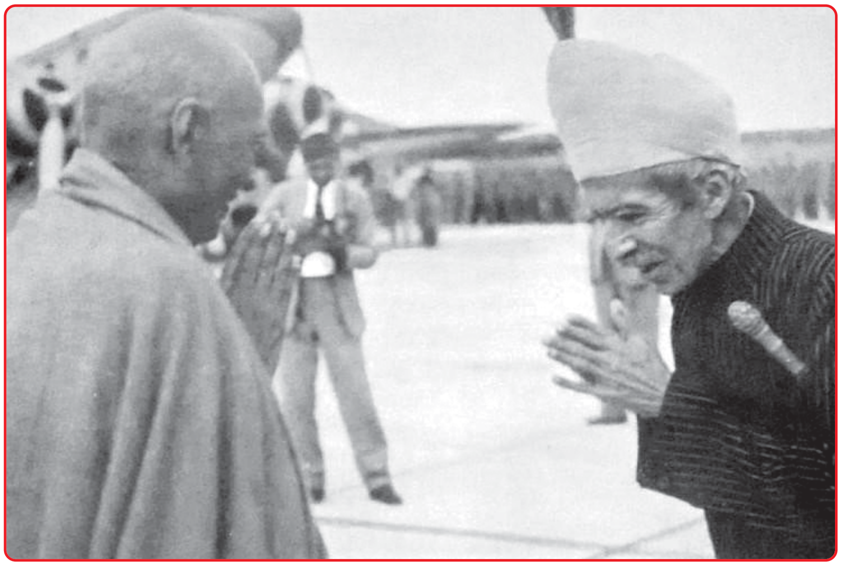

15 अगस्त के दिन कुछ विद्यार्थी संगठनों ने कोठी रेसिडेंसी, नांपल्लि रेलवे स्टेशन, आर टी सी क्रॉस रोड्स के बस भवन, सुल्तान बाजार के घंटाघर एवं उस्मानिया अस्पताल में राष्ट्र ध्वज फहराया और लोगों में राष्ट्रीयता की भावना जगाई। इससे कुपित निजाम के आदेश पर पुलिस ने शहर में हर जगह पहरा लगा दिया। हजारों लोगों को जेल में डाल दिया गया। आंदोलनकारी लोगों को सताया जाने लगा। गोली-बारी चली। फिर भी लोगों ने निर्भीकतापूर्वक राजभवन के सामने तिरंगा हाथों में लेकर जुलूस निकाला, जो हैदराबाद के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित है।

कुछ गाँवों ने निजाम के अधिकार से अपने आप को स्वतंत्र घोषित कर लिया और निजाम को लगान देने से इनकार कर दिया। साथ ही पुलिस से लड़ने के लिए **400** लोगों की सेना तैयार की गई। पाल्वंचा तालुका के अमरारम में 'कोया' (गोंड) जाति के **5000** लोगों ने अपने आप को स्वतंत्र घोषित कर लिया। मधिरा, सूर्यापेट, नल्गोंडा के अनेक गाँवों ने अलग से ग्राम पंचायत बना लिये।

नल्गोंडा के परिटाला में जागीर गाँव देश में पहली बार 'ग्रामराज्य' बना। जयप्रकाश नारायण, टंगुटूरि प्रकाशम, कला वेंकटराव ने लोगों के इन प्रयासों का समर्थन किया। पुलिस से इस ग्रामराज्य की संरक्षा हेतु भारत सरकार की मदद माँगी गई। मेदक, निजामाबाद, करीमनगर के अनेक शहरों और गाँवों में लोगों ने जुलूस निकाला। राष्ट्रीय ध्वज फहराया और वंदेमातरम के नारों से सारा आकाश गूँज उठा। कई जगहों पर गोलियाँ चलीं, जिनका विद्रोहियों ने पत्थरों से जवाब दिया। इस विद्रोह में कुछ पुलिस वाले मारे गए। मोगिलय्या गौंड नामक विद्रोही ने 'महात्मा गांधी की जय' नारा लगाते हुए वरंगल के किले पर तिरंगा फहराया और निजाम की पुलिस ने गौंड की हत्या कर दी।

बैरान पल्ली में लोग आजादी का उत्सव मना रहे थे और पुलिस ने उन पर आक्रमण करके एक घंटे में **150** लोगों की जानें ले लीं। यह घटना जलियाँ वाला बाग की त्रासदी से कम दर्दनाक नहीं था। यह हैदराबाद के स्वतंत्रता आंदोलन की एक प्रमुख कड़ी थी।

आदिलाबाद में गोंड वीर 'कोमुरम भीम' के 'जल-जंगल- जमीन' के नारे ने जनता को स्वतंत्रता के प्रति जागरूक किया और निजाम के शासन के विरुद्ध लोगों को खड़ा किया। जिले में पूरी गोंड जाति ने आजादी का उत्सव मनाया। इस तरह बढ़ रही स्वतंत्रता आंदोलन की आग को कुचलने के लिए निजाम का कारकून कासिम रिजवी ने पहले अपनी निजी सेना का संगठन किया, जिसका दूसरा नाम रजाकार था। इस सेना का कार्य था हैदराबाद रियासत में विद्रोहियों को कुचलना और निजाम की सार्वभौमिकता को कायम रखना।

इस आंदोलन के दौरान रजाकार अनेक गाँवों पर हल्ला बोले। जनता को लूटते हुए उन्हें भयभीत करने लगे। क्रांतिकारी युवाओं को बुरी तरह मौत के घाट उतारा गया। उनके परिवार के सदस्यों को अनेक प्रकार से प्रताड़ित किया गया। रात के अंधेरे में गाँवों में आग लगाई गई और झोंपड़ियाँ जला दी गईं, जिससे अनेकों गरीब किसान बेघर हो गये।

निजाम का विरोध करने वाले हर छोटे-बड़े को क्रूरता से मार दिया गया। गाँव के चौराहे पर महिलाओं को नंगा करके उन्हें बतुकम्मा खेलने को कहा गया। रात में घरों में घुसकर महिलाओं के साथ अत्याचार किया जाने लगा। ये रजाकार नन्हें बच्चों और बुजुर्गों तक को नहीं छोड़ते थे।

तेलंगाना की जनता इन सभी त्रासदियों एवं अपमानों को सहते हुए सेना के रूप में संगठित हुई और रजाकारों का विरोध करने लगी। इसी क्रम में करीमनगर के इल्लंतकुंटा मंडल गालिपल्लि के कम्यूनिस्ट नायक बद्दम एल्लारेड्डी ने रजाकारों के विरुद्ध आवाज उठाई और उनके खिलाफ विद्रोह किया, जिस पर पुलिस ने गाँव में घुसकर युवाओं पर गोली चलाई और उनकी हत्या कर दी। पुलिस ने पूरे गाँव को जलाकर राख कर दिया। बद्दम एल्लारेड्डी ने अपने दल के साथ पुलिस का वीरता से डटकर सामना किया। लेकिन इस घटना के दौरान कुछ आम लोगों की भी मृत्यु हो गई।

तेलंगाना के विसुनूर के जमींदार रामचंद्रा रेड्डी की निरंकुशता के खिलाफ आवाज उठाने के कारण निजाम की पुलिस ने दोड्डी कोमरय्या की बुरी तरह हत्या कर दी। शोयबुल्लाह खान नामक पत्रकार, जो निजाम के खिलाफ जनता को जागृत कर रहा था, उसे रजाकरों ने मौत के घाट उतार दिया। चाकलि एल्लम्मा ने आंध्र महासभा और कम्यूनिस्टों से प्रेरणा पाकर जमींदारों और निजाम का प्रत्यक्ष रूप से विरोध किया। दाशरथी कृष्णमाचार्य ने तेलंगाना के गाँवों में घूमकर लोगों को जागरूक किया, जिन्हें वरंगल के सेंट्रल जेल में डाल दिया गया।

इस प्रकार हैदराबाद रियासत की मुक्ति आंदोलन में बच्चे-बड़े, स्त्री-पुरुष, गरीब-अमीर सभी लोगों ने बिना किसी भेदभाव के स्वच्छंद होकर भाग लिया। आंदोलन के कारण जनजीवन स्थगित हुआ। हैदराबाद में शांति की स्थापना हेतु भारत के तत्कालीन गवर्नर जनरल लार्ड माउंटबेटेन ने अपने प्रतिनिधि के तौर पर अलेन कैंपबेल को हैदराबाद भेजा। लेकिन हैदराबाद वजीर लायक अली से हुई चर्चा विफल हुई।

तत्पश्चात भारत के गवर्नर जनरल सी राजगोपालाचारी ने निजाम को रजाकारों पर पाबंदी लगाने, रियासत में शांति की स्थापना करने एवं भारत सरकार की सेना को सिकंदराबाद में रुकने की अनुमति देने हेतु एक पत्र लिखा। निजाम ने इस प्रस्ताव को ठुकराया। दूसरी ओर खासिम रिज्वी के नेतृत्व में रजाकारों की संख्या 50,000 तक पहुँच गई। इनके अत्याचारों की कोई सीमा नहीं रही। आखिर रजाकारों की अराजकता से हैदराबाद की जनता को बचाने के लिए सैनिक कार्यवाही के सिवा कोई उपाय नहीं रह गया था। भारत सरकार ने निजाम को यही बात फिर एक संदेश के माध्यम भेजा।

हैदराबाद रियासत में भारत गणराज्य का हिस्सा बनाने के लिए भारत सरकार ने पुलिस कार्यवाही की शुरुआत की, जिसे आपरेशन पोलो कहा गया। उस समय निजाम के राज्य में 'पोलो' मैदान की सीमा अधिक होने के कारण इस कार्यवाही का नाम आपरेशन पोलो रखा गया। भारत के तत्कालीन गृह मंत्री एवं लौह पुरुष व इंडियन बिस्मार्क श्री वल्लभभाई पटेल के आदेश से मेजर जयंतनाथ चौधरी के नेतृत्व में **13** सितंबर, **1948** को सुबह सैनिक कार्यवाही शुरु की गई। यह कार्यवाही **17** सितंबर, **1948** तक पाँच दिन तक चली। निजाम के राज्य को घेरने के उद्देश्य से भारत की सेना ने शोलापुर, बंबई, मद्रास और बिहार से कूच करते हुए हैदराबाद राज्य में प्रवेश किया।

170 युद्धक टैंक और **25,000** सैनिक सहित जयंतनाथ चौधरी ने सोलापुर से हैदराबाद में प्रवेश किया। भारतीय सेना का जनता ने स्वागत किया। वंदेमातरम, भारत माता की जय नारों से आसमान गूँज उठा। निजाम के वजीर लायक अली ने भारत सरकार को धमकाते हुए कहा कि ' हम **1,00,000** सैनिक सहित भारत सरकार से युद्ध के लिए तैयार हैं और बंबई पर बम फोड़ने के लिए सऊदी अरब तैयार है।' लेकिन भारत सरकार ने तीनों ओर से निजाम को घेर लिया।

खासिम रिज्वी सेना को हराने में असफल हुआ। निजाम के कई सैनिक मारे गये। रजाकारों की मौत हुई। खासिम रिज्वी को ज्ञात हुआ कि भारत सरकार का सामना करना संभव नहीं है। वह पीछे हट गया। वजीर लायक अली ने मंत्रिमंडल सहित इस्तीफा दे दिया। **17** सितंबर के दिन शाम को हैदराबाद पर **224** वर्षों तक शासन करने के बाद असफजाही वंश के आखिरी नवाब मीर उस्मान अली खान ने किसी शर्त के बिना हैदराबाद के भारत के गणराज्य में विलय करने की घोषणा की। रजाकारों पर पाबंदी लगाई गई। भारत सरकार से सैनिक कार्यवाही रोकने का अनुरोध किया गया। संयुक्त राष्ट्र संघ ने भी अपनी शिकायत वापस लेने का फैसला लिया।

देश के आजाद होने के **13** महीने बाद, अर्थात **17** सितंबर, **1948** को हैदराबाद की जनता ने आजादी की साँस ली और उत्सव मनाया। महाराष्ट्र और कर्नाटक की सरकारें **17** सितंबर को क्रमश: 'मराठवाड़ा दिवस' और हैदराबाद-कर्नाटक दिवस के रूप में आधिकारिक तौर पर मनाती हैं। लेकिन हैदराबाद रियासत के गणराज्य में विलय होने के बावजूद **17** सितंबर को कोई उत्सव या कार्यक्रम नहीं मनाया जाता।

- मकान सं.**2-84**
डाकघर: कल्लेपल्लि, मंडल: बेज्जंकि
जिला: सिद्दिपेट-**505528**, तेलंगाना
मोबाइल: **+91 9885501655**

केंद्रीय मंत्रियों की इस्पात प्रतिनिधियों के साथ बैठक

माननीय केंद्रीय रेलवे, वाणिज्य एवं उद्योग मंत्री श्री पीयूष गोयल एवं केंद्रीय इस्पात मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान ने दि.11 जून, 2019 को नई दिल्ली में इस्पात प्रतिनिधियों के साथ हुई बैठक में आयात-निर्यात के संदर्भ में इस्पात क्षेत्र के समक्ष उत्पन्न चुनौतियों के संबंध में विचार-विमर्श किया। दोनों मंत्रियों ने आश्वासन दिया कि मंत्रालयों द्वारा अगले पाँच वर्षो में निर्यात की मात्रा बढ़ाने हेतु यथासंभव प्रयास किये जायेंगे। बैठक में केंद्रीय इस्पात राज्य मंत्री श्री फग्गनसिंह कुलस्ते, सचिव (इस्पात) श्री विनय कुमार, सचिव (वाणिज्य) श्री अनूप वाधवान, मंत्रालयों के प्राधिकारी उपस्थित थे।

माननीय केंद्रीय इस्पात मंत्री द्वारा सुश्री पी वी सिंधु सम्मानित

माननीय केंद्रीय पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस व इस्पात मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान ने 4 सितंबर, 2019 को नई दिल्ली में आर आई एन एल-वाइजाग स्टील के ब्रांड अंबासिडर एवं बैडमिंटन के विश्व चैंपियन सुश्री पी वी सिंधु को हाल ही में आयोजित विश्व बैडमिंटन चैंपियनशिप में उनकी जीत के उपलक्ष्य में सम्मानित किया। कार्यक्रम में संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ, निदेशक (कार्मिक) श्री किशोर चंद्र दास, निदेशक (वाणिज्य) श्री डी के मोहंती उपस्थित थे।

केंद्रीय इस्पात मंत्री की इस्पात प्रमुखों के साथ वार्तालाप

माननीय केंद्रीय पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस व इस्पात मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान ने 13 सितंबर, 2019 को इस्पात उद्योगों के प्रमुखों से वार्तालाप किया। उन्होंने इस्पात उद्योग को भारत सरकार की ओर से पूर्ण समर्थन का आश्वासन दिया। उन्होंने इस्पात उद्योग को गुणवत्तापूर्ण उत्पादों के माध्यम से विश्व में अपनी पहचान बनाने का सुझाव दिया। उन्होंने कहा कि अंतर्राष्ट्रीय बाजार में भारत के उत्पादों की माँग बढ़ने की अत्यधिक संभावनाएँ हैं। कार्यक्रम में इस्पात मंत्रालय के प्राधिकारी एवं विभिन्न औद्योगिक संगठनों के प्रमुख उपस्थित थे।

इस्पात 'चिंतन शिविर' का आयोजन

माननीय केंद्रीय पेट्रोलियम, प्राकृतिक गैस व इस्पात मंत्री श्री धर्मेंद्र प्रधान ने 23 सितंबर, 2019 को इस्पात मंत्रालय द्वारा आयोजित इस्पात 'चिंतन शिविर' का उद्घाटन किया। उन्होंने कहा कि 'चिंतन शिविर' के माध्यम से इस्पात क्षेत्र में देश को विश्व में अग्रणी बनने हेतु ठोस निष्कर्ष निकाला जाय। उन्होंने इस्पात मंत्रालय का नया लोगो 'इस्पाती इरादा' का उद्घाटन किया। कार्यक्रम में केंद्रीय इस्पात राज्य मंत्री श्री फग्गनसिंह कुलस्ते, सचिव (इस्पात) श्री विनय कुमार, इस्पात मंत्रालय के प्राधिकारी, इस्पात उद्योग के प्रतिनिधि उपस्थित थे।

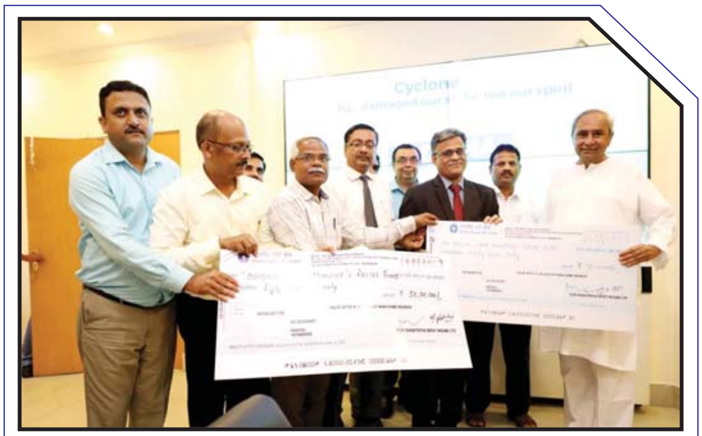

फनि तूफान पीड़ितों को सहयोग

ओड़िशा में आये फनि तूफान से पीड़ित लोगों को राहत पहुँचाने हेतु अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ 01.06.2019 को भुवनेश्वर में माननीय मुख्यमंत्री श्री नवीन पट्नायक से मिले और उन्हें आर आई एन एल समूह की ओर से 90 लाख की सहयोग राशि एवं कंपनी के निगमित सामाजिक दायित्व की ओर से 'मुख्यमंत्री राहत निधि' हेतु 140 लाख रुपये का चेक दिया। इस मौके पर निदेशक (कार्मिक) श्री किशोर चंद्र दास, वरिष्ठ अधिकारी उपस्थित थे। माननीय मुख्यमंत्री ने आर आई एन एल से प्राप्त इस सहयोग के लिए राज्य सरकार की ओर से आभार व्यक्त किया।

केंद्रीय इस्पात राज्य मंत्री का संगठन में आगमन

माननीय केंद्रीय इस्पात राज्य मंत्री श्री फग्गन सिंह कुलस्ते 8 अगस्त, 2019 को पहली बार वाइजाग स्टील में पधारे। संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ ने उन्हें संयंत्र के प्रचालन में अपनाई गई अद्यतन प्रौद्योगिकियों एवं सुविधाओं का विवरण दिया। माननीय मंत्री महोदय ने प्रतिस्पर्द्धी बाजार में सफलता प्राप्त करने हेतु सुरक्षा, गुणवत्ता एवं उत्पादकता पर ध्यानकेंद्रित करने हेतु बल दिया। कार्यक्रम में निदेशक (कार्मिक) श्री किशोर चंद्र दास, निदेशक (वित्त) श्री वी वी वेणुगोपाल राव, निदेशक (वाणिज्य) श्री डी के मोहंती एवं वरिष्ठ प्राधिकारी उपस्थित थे।

सचिव (इस्पात) का आर आई एन एल भ्रमण

इस्पात मंत्रालय, भारत सरकार के सचिव (इस्पात) श्री विनय कुमार के 26 अप्रैल, 2019 को आर आई एन एल में आगमन के दौरान संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ ने चालू वित्त वर्ष में संगठन की उपलब्धियों, लक्ष्यों आदि का विवरण प्रस्तुत किया। कार्यक्रम में इस्पात मंत्रालय के संयुक्त सचिव सुश्री रुचिका चौधरी गोविल, इस्पात मंत्रालय के निदेशक श्री नीरज अग्रवाल, अवर सचिव श्री एस के सिंह, संगठन के निदेशक गण, कार्यपालक निदेशक गण एवं वरिष्ठ प्राधिकारी उपस्थित थे।

आर आई एन एल की वार्षिक आम बैठक आयोजित

वर्ष 2018-19 के दौरान संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ की अध्यक्षता में कंपनी की 37वीं वार्षिक आम बैठक 13 सितंबर, 2019 को आयोजित की गई। श्री पी के रथ ने आर आई एन एल के अंशधारकों को संबोधित किया और उन्हें कंपनी के निष्पादन की जानकारी दी। कार्यक्रम में भारत के राष्ट्रपति के प्राधिकृत नामिती के रूप में इस्पात मंत्रालय के निदेशक श्री नीरज अग्रवाल, संगठन के निदेशक गण एवं स्वतंत्र निदेशक गण उपस्थित थे। कंपनी मामले विभाग की ओर से बैठक का संचालन किया।

‘परिवर्तन’ परियोजना के अधीन निष्पादकों को प्रमाणपत्र

संगठन में बेहतर निष्पादन व दक्षता के माध्यम से निरंतर व स्थाई विकास को बढ़ावा देने के उद्देश्य से ‘परिवर्तन’ परियोजना का शुभारंभ किया गया। निगमित कार्यनीति प्रबंधन द्वारा **30** जुलाई , **2019** को आयोजित संचार सत्र में संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ ने इस परियोजना के अंतर्गत संचालित विभिन्न परियोजनाओं में सुधार लाने हेतु विभिन्न विभागों पुरस्कार प्रदान किये। कार्यक्रम में निदेशक गण, कार्यपालक निदेशक गण, विभागाध्यक्ष, वरिष्ठ प्राधिकारी, स्टील एक्जेक्यूटिव असोसिएशन, श्रमिक संघों के प्रतिनिधि उपस्थित थे।

अध्यक्ष महोदय का वरिष्ठ प्राधिकारियों को संबोधन

संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रवंध निदेशक श्री पी के रथ ने **1** अप्रैल, **2019** को संगठन के सभी वरिष्ठ अधिकारियों को संबोधित किया। इस अवसर पर उन्होंने प्रचालन के सभी क्षेत्रों में उत्कृष्ट निष्पादन हेतु आर आई एन एल समूह को बधाई दी। उन्होंने सभी धमन भट्ठियों में चूर्णित कोयला प्रेषण बढ़ाते हुए उत्पादन लागत में कमी लाने हेतु कर्मचारियों का आह्वान किया। कार्यक्रम में निगमित कार्यनीति प्रवंधन विभाग ने **2018-19** की उपलब्धियों एवं चालू वित्त वर्ष **2019-20** के लिए ध्यान देने योग्य क्षेत्रों का उल्लेख करते हुए प्रस्तुतीकरण दिया।

अध्यक्ष महोदय द्वारा परियोजनाओं का प्रवर्तन

संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रवंध निदेशक श्री पी के रथ ने **24** जुलाई, **2019** को कोक ओवेन बैटरी-**5**, के बी आर-**2** से पंपिंग प्रचालन, पेदगंट्याडा में खुदरा विक्री केंद्र एल पी जी-**2** संयंत्र का प्रवर्तन किया। श्री रथ ने इन गतिविधियों से जुड़े सभी कर्मचारियों को बधाई दी। कार्यक्रम में निदेशक (वाणिज्य) श्री पी रायचौधरी, निदेशक (वित्त) श्री वी वी वेणुगोपाल राव, कार्यपालक निदेशक गण एवं वरिष्ठ प्राधिकारी उपस्थित थे। साथ ही मेकॉन के कर्मचारी, श्रमिक संघों के प्रतिनिधि, संविदागत कर्मी एवं काफी संख्या में कर्मचारी उपस्थित थे।

अखिल भारतीय ग्राहक बैठक आयोजित

संगठन द्वारा ग्राहकों के साथ अपने संवंधों को सुदृढ़ बनाने के उद्देश्य से **24** अप्रैल, **2019** को ‘अखिल भारतीय ग्राहक बैठक’ आयोजित की गई। अध्यक्ष-सह-प्रवंध निदेशक श्री पी के रथ ने कहा कि आर आई एन एल अपने ग्राहकों को अत्यंत महत्व देता है और वे आर आई एन एल की सफलता के सहभागी हैं। उन्होंने उत्पाद मिश्र में सुधार लाने के लिए स्पष्ट अभिप्राय व सुझावों के साथ आगे आने के लिए ग्राहकों का आह्वान किया। कार्यक्रम में निदेशक (वाणिज्य) श्री पी रायचौधरी, निदेशक (कार्मिक) श्री किशोर चंद्र दास, कार्यपालक निदेशक एवं वरिष्ठ प्राधिकारी उपस्थित थे।

'वाइजाग क्वेस्ट' का विमोचन

आर आई एन एल के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ ने 19 सितंबर, 2019 को संगठन की वार्षिक तकनीकी गृह-पत्रिका 'वाइजाग क्वेस्ट' का विमोचन किया। यह पत्रिका सभी तकनीकी विभागों के वरिष्ठ प्राधिकारियों के संपादन में लौह व इस्पात उद्योग से संबंधित अद्यतन एवं नवीन जानकारी के साथ प्रकाशित की जाती है। श्री पी के रथ ने संपादक टीम को बधाई देते हुए पत्रिका के भावी अंक अद्यतन प्रौद्योगिकी, औद्योगिक मामलों को शामिल करते हुए विषय आधारित करते हुए निकालने का सुझाव दिया।

वाइजाग स्टील में विश्व पर्यावरण दिवस

वाइजाग स्टील द्वारा 5 जून, 2019 को विश्व पर्यावरण दिवस मनाया गया। कार्यक्रम में संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ सहित आंध्र प्रदेश प्रदूषण नियंत्रण मंडल के वरिष्ठ पर्यावरण अभियंता श्री पी रवींद्रनाथ मौजूद थे। श्री रथ ने कहा कि संयंत्र में अनुकूलतम उत्पादन एवं प्रदूषण नियंत्रण की दिशा में सबको सम्मिलित रूप से प्रयास करना होगा। इस अवसर पर पर्यावरण संरक्षण में योगदान देनेवाले कर्मचारियों को हरित पुरस्कार प्रदान किये गये। कार्यक्रम में निदेशक गण, कार्यपालक निदेशक गण, महाप्रबंधक गण एवं बड़ी संख्या में कर्मचारी उपस्थित थे।

अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस

आर आई एन एल में 21 जून, 2019 को अंतर्राष्ट्रीय योग दिवस मनाया गया। संगठन के निदेशक (कार्मिक) श्री किशोर चंद्र दास ने ज्योति प्रज्वलन के साथ योग सत्र का उद्घाटन किया। उन्होंने शारीरिक एवं मानसिक तौर पर स्वस्थ रहने एवं तनाव मुक्त रहने के लिए सभी को नियमित योगाभ्यास की आवश्यकता का उल्लेख किया। कार्यक्रम में कार्यपालक निदेशक (कार्मिक व औद्योगिक संबंध) श्री देवाशीष रे, सहायक महाप्रबंधक (खेल) श्री एम एस कुमार, श्रमिक संघों, स्टील एक्जेक्यूटिव असोसिएशन, अनुसूचित जाति व जनजाति संघ, अन्य पिछड़ा वर्ग असोसिएशन के प्रतिनिधियों ने भाग लिया।

संगठन को 'नेशनल एनर्जी लीडर' पुरस्कार

आर आई एन एल को लगातार 2017, 2018, 2019 तीन वर्षो के लिए 'एक्सेलेंट एनर्जी एफिशिएंट यूनिट अवार्ड' प्राप्त होने के उपलक्ष्य में कंफेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्री (सी आई आई), गोदरेज ग्रीन बिजिनेस सेंट द्वाराकंफेडरेशन ऑफ इंडियन इंडस्ट्री (सी आई आई), गोदरेज ग्रीन बिजिनेस सेंट ने हैदराबाद में आयोजित एक्सेलेंस इन एनर्जी मैनेजमेंट की 20वीं राष्ट्रीय प्रतियोगिता में संगठन को यह पुरस्कार प्रदान किया। संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ ने इस अवसर पर आर आई एन एल समूह को बधाई दी।

हिंदी पखवाड़ा समारोह का आयोजन

संगठन में 14 से 30 सितंबर, 2019 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। निदेशक (परियोजना) श्री के के घोष द्वारा 14 सितंबर, 2019 को इसका उद्घाटन किया गया। उन्होंने प्रतिभागियों को अपने कार्यालयीन कार्य में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने की सलाह दी। उप महाप्रबंधक (राजभाषा) श्री ललन कुमार ने पखवाड़े के दौरान आयोजित होनेवाले कार्यक्रमों का विवरण दिया। इस अवसर पर अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ के संदेश का विमोचन किया गया। वरिष्ठ सहायक (राजभाषा) श्री गोपाल ने अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक के संदेश का पठन किया। कार्यक्रम का संचालन प्रबंधक (राजभाषा) श्रीमती वी सुगुणा ने किया।

हिंदी पखवाड़े के दौरान कर्मचारियों एवं उनके आश्रित बच्चों के लिए विभिन्न प्रतियोगिताएँ आयोजित की गई। 18.09.2019 को कर्मचारियों के लिए प्रशासनिक भवन के मुख्य सम्मेलन कक्ष व क्यू ए टी डी के सम्मेलन कक्ष में टिप्पण व प्रारुप लेखन व अनुवाद प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें 40 प्रतिभागियों ने भाग लिया। 21.09.2019 को कर्मचारियों के लिए प्रशासनिक भवन के मुख्य सम्मेलन कक्ष में 'नकद रहित अर्थ व्यवस्था: संभावनाएँ और चुनौतियाँ' विषय पर वाक् प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें 20 प्रतिभागियों ने भाग लिया।

इसके अलावा 'इस्पात उद्योग में तकनीकी अनुशासन: क्यों और कैसे' विषय पर हिंदी निबंध लेखन प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें 17 प्रतिभागियों ने भाग लिया। 18.09.2019 को उक्कुनगरम के डीपाल स्कूल में उक्कुनगरम के सभी स्कूली बच्चों के लिए कविता पाठ प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें 57 बच्चों ने भाग लिया। यह प्रतियोगिता दो श्रेणियों में आयोजित की गई थी, जूनियर अर्थात कक्षा से 6 से 8 तक एक श्रेणी एवं सीनियर अर्थात कक्षा 9 से 12 तक। इस अवसर पर बच्चों ने हिंदी साहित्य के कई कवियों की कविताओं का पठन किया, जिसने निर्णायकों एवं आयोजकों का मन मोह लिया।

मिल्स, कोक ओवेन, मुख्य प्रशासन भवन, यातायात व कच्चा माल विभाग में क्रमश: 20.09.2019, 24.09.2019, 25.09.2019 एवं 28.09.2019 को हिंदी कार्यान्वयन दिवस आयोजित किया गया। मिल्स में महाप्रबंधक श्री पी के मिश्रा ने कर्मचारियों को कार्यालयीन कार्य में हिंदी के अधिकाधिक प्रयोग हेतु अभिप्रेरित किया। सहायक महाप्रबंधक (विद्युत) श्री अखिलेश मणि तिवारी ने कार्यक्रम का संचालन किया। कोक ओवेन में उप महाप्रबंधक श्री डी श्रीनिवास राव ने कर्मचारियों को इनमें बढ़-चढ़कर भाग लेने की सलाह दी। उप महाप्रबंधक (प्रचालन) श्री अनिल कुमार सिंह ने कार्यक्रम का संचालन किया।

मुख्य प्रशासनिक भवन के सभी विभागों के कर्मचारियों ने इन प्रतियोगिताओं में उत्साह के साथ भाग लिया। यातायात विभाग में महाप्रबंधक श्री यू श्रीधर ने संगठन में राजभाषा के कार्यान्वयन में हो रही प्रगति के प्रति संतुष्टि व्यक्त की। वरिष्ठ प्रबंधक श्री सुरेश गजा ने कार्यक्रम के आयोजन में सहयोग दिया। इन कार्यक्रमों में विभागाध्यक्षों के साथ साथ विभाग सभी वरिष्ठ प्रभारी उपस्थित थे। इस कार्यक्रम के अंतर्गत कर्मचारियों के लिए सुंदर लिखावट, शब्द निर्माण और सामान्य ज्ञान प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। मिल्स, कोक ओवेन, मुख्य प्रशासनिक भवन के विभिन्न विभागों एवं यातायात में आयोजित इन कार्यक्रमों में क्रमश: **41, 41, 72** व **41** प्रतिभागियों ने भाग लिया।

26.09.2019 को जिला परिषद के स्कूली बच्चों के लिए 'कविता पाठ' प्रतियोगिता आयोजित की गई। जिला परिषद हाई स्कूल, कणिति में आयोजित इस कार्यक्रम में अगनंपूडि, लेमर्ती, पिनमडका, पेद्दमुशिडिवाडा स्थित जिला परिषद हाई स्कूल एवं सरकारी स्कूलों से **65** बच्चों ने भाग लिया। इसके अतिरिक्त उक्कुनगरम व जिला परिषद के जूनियर स्कूली बच्चों के लिए 'प्रदूषण नियंत्रण में वैयक्तिक भूमिका' और सीनियर स्कूली बच्चों के लिए 'स्वरोजगार के लिए सामर्थ्य विकास' विषय पर निबंध लेखन प्रतियोगिता आयोजित की गई, जिसमें क्रमश: **50** और **52** विद्यार्थियों ने अपने आलेख प्रस्तुत किये।

प्रबंधन विकास केंद्र में **30** सितंबर, **2019** को सुबह **9** बजे 'हिंदी समन्वयक सम्मेलन' आयोजित किया गया। कार्यक्रम के मुख्य अतिथि एवं निदेशक (वित्त) श्री वी वी वेणुगोपाल राव द्वारा पखवाड़े के अंतर्गत विविध विभागों में आयोजित 'कार्यान्वयन दिवस' के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किये गये। शाम को आयोजित पखवाड़ा समापन समारोह के मुख्य अतिथि एवं अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ ने प्रतिभागियों से राजभाषा हिंदी के प्रयोग के प्रति गंभीरता बरतने की सलाह दी।

निदेशक (कार्मिक) श्री किशोर चंद्र दास ने राजभाषा हिंदी के प्रयोग के प्रति कर्मचारियों की निष्ठा एवं उत्साह को कायम रखने की अपील की। उपमहा प्रबंधक (राजभाषा) श्री ललन कुमार ने पखवाड़े के दौरान संचालित विभिन्न कार्यक्रमों का विवरण देते हुए इनकी सफलता का श्रेय आर आई एन एल समूह को दिया और सप्ताह के दौरान आयोजित गतिविधियों की जानकारी प्रस्तुत की गई। हिंदी शिक्षण योजना के सहायक निदेशक जनाब मोहम्मद कमालुद्दीन कार्यक्रम के विशेष अतिथि थे। उन्होंने राजभाषा के कार्यान्वयन में अपने अनुभवों से प्रतिभागियों को अवगत कराया। कार्यक्रम में प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किये गये। कार्यक्रम का संचालन श्री गोपाल ने किया।

फरीदाबाद शाखा कार्यालय को राजभाषा पुरस्कार

फरीदाबाद स्थित शाखा बिक्री कार्यालय को वर्ष **2017-18** के दौरान राजभाषा के श्रेष्ठ कार्यान्वयन हेतु 'राजभाषा पुरस्कार' से सम्मानित किया गया। **24.05.2019** को आयोजित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), फरीदाबाद की बैठक में नराकास के अध्यक्ष एवं एन एच पी सी के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री बलराम जोशी ने फरीदाबाद शाखा बिक्री कार्यालय के वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्री ए एस मित्तल को यह पुरस्कार प्रदान किया। कार्यक्रम में शाखा कार्यालय के हिंदी समन्वयक श्री धर्मपाल अरोड़ा उपस्थित थे।

कोयंबत्तूर शाखा कार्यालय को राजभाषा पुरस्कार

कोयंबत्तूर शाखा बिक्री कार्यालय को राजभाषा के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु सर्वश्रेष्ठ राजभाषा कार्यान्वयन का द्वितीय पुरस्कार प्राप्त हुआ। भारत संचार निगम लिमिटेड परिसर में **09.07.2019** को आयोजित नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), कोयंबत्तूर की बैठक में मुख्य अतिथि महोदय एवं बी एस एन एल के प्रधान महाप्रबंधक श्री जी मुरलीधरन के हाथों कोयंबत्तूर के वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्री के दुर्गा प्रसाद ने यह पुरस्कार ग्रहण किया। इस अवसर पर उन्होंने शाखा बिक्री कार्यालय समूह को बधाई दी।

लुधियाना कार्यालय को राजभाषा पुरस्कार

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (नराकास), लुधियाना द्वारा छोटे कार्यालय (**2018-19**) श्रेणी के अंतर्गत राजभाषा के श्रेष्ठ निष्पादन हेतु शाखा बिक्री कार्यालय, लुधियाना को 'राजभाषा पुरस्कार' प्रदान किया गया। लुधियाना में **28.08.2019** को आयोजित नराकास की बैठक में मुख्य आयकर आयुक्त एवं अध्यक्ष, नराकास द्वारा यह पुरस्कार शाखा बिक्री कार्यालय को प्रदान किया गया। शाखा बिक्री कार्यालय के राजभाषा समन्वयक श्री इंदर जी रैना ने यह पुरस्कार ग्रहण किया। वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्री सुनीप पाल ने शाखा कार्यालय समूह को इस पुरस्कार हेतु बधाई दी।

कोच्चि शाखा कार्यालय को पुरस्कार

कोच्चि शाखा बिक्री कार्यालय को राजभाषा के उत्कृष्ट कार्यान्वयन हेतु 'राजभाषा प्रोत्साहन पुरस्कार' से समानित किया गया। वर्ष **2017-18** के लिए **15** अगस्त, **2019** को आयोजित हिंदी पखवाड़ा समापन समारोह के मुख्य अतिथि एवं कुसाट के कुलपति डॉ आर शशिधरन से कोच्चि शाखा बिक्री कार्यालय के प्रवंधक (स्टॉफ) श्री आर बालसुब्रमणियन ने यह पुरस्कार ग्रहण किया। इस अवसर पर कोच्चि शाखा कार्यालय के वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्री शरत सी गोविंद ने कार्यालय के सभी कर्मचारियों को बधाई दी और आगे भी राजभाषा के क्षेत्र में उत्कृष्टता को वरकरार रखने की सलाह दी।

दिल्ली कार्यालय द्वारा वाद-विवाद प्रतियोगिता का आयोजन

क्षेत्रीय कार्यालय (उत्तर), नई दिल्ली द्वारा नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, नई दिल्ली के तत्वावधान में नराकास के सभी सदस्य कार्यालयों के लिए 'कर्म हमेशा भाग्य से बड़ा होता है' विषय पर वाद-विवाद प्रतियोगिता आयोजित की गई। इसमें दिल्ली के 26 सार्वजनिक उपक्रमों के प्रतिनिधियों ने भाग लिया। कार्यक्रम के निर्णायक के रूप में हिंदी के कवि डॉ चंद्रमणि ब्रह्मदत्त ने भाग लिया। इस प्रतियोगिता के विजेताओं को नराकास की आगामी बैठक में पुरस्कार प्रदान किये जायेंगे।

पूणे में हिंदी दिवस एवं हिंदी कार्यशाला का आयोजन

पूणे में 28-29 अगस्त, 2019 को मुख्यालय के उप महाप्रबंधक (राजभाषा) श्री ललन कुमार द्वारा हिंदी दिवस एवं हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। उन्होंने प्रतिभागियों को राजभाषा नीति के संवैधानिक प्रावधानों एवं हिंदी के विभिन्न ई-टूल्स की जानकारी दी। वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्री गौतम दास की उपस्थिति में आयोजित इस कार्यक्रम में श्रीमती शीला मनोज नायर एवं अन्य प्राधिकारियों का सहयोग उल्लेखनीय रहा। समापन समारोह में हिंदी दिवस के अवसर पर आयोजित प्रतियोगिताओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किये गये।

मुंबई क्षेत्रीय कार्यालय में हिंदी कार्यशाला संपन्न

क्षेत्रीय कार्यालय (पश्चिम), मुंबई द्वारा 18.09.2019 को हिंदी कार्यशाला आयोजित की गई। मुंबई स्थित स्टेट बैंक ऑफ इंडिया-कार्पोरेट कार्यालय के हिंदी अधिकारी श्री शैलेंद्र प्रताप सिंह कार्यक्रम के संकाय सदस्य थे। उन्होंने प्रतिभागियों को कार्यालयीन कार्य में हिंदी के प्रयोग को बढ़ावा देने से संबंधित विभिन्न मुद्दों की जानकारी दी। क्षेत्रीय प्रबंधक श्री प्रशांत सागर ने प्रतिभागियों को राजभाषा के प्रयोग की आवश्यकता से अवगत कराया। साथ ही कार्यालय के सभी कर्मचारियों को राजभाषा के निष्ठापूर्वक प्रयोग हेतु अभिप्रेरित किया। कार्यशाला के संचालन में सभी कर्मचारियों ने सहयोग दिया।

अहमदाबाद कार्यालय में हिंदी कार्यशाला का आयोजन

अहमदाबाद शाखा बिक्री कार्यालय में 14.09.2019 को हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। भौतिक अनुसंधान प्रयोगशाला, अहमदाबाद के सेवानिवृत्त हिंदी अधिकारी श्री आर के गुप्ता कार्यशाला के मुख्य अतिथि एवं संकाय सदस्य थे। उन्होंने कार्यशाला के प्रतिभागियों को राजभाषा अधिनियम के अनुपालन, राजभाषा नीति के संवैधानिक प्रावधानों एवं हिंदी अनुवाद के विषय में जानकारी दी। वरिष्ठ शाखा प्रबंधक श्री अमित गुप्ता ने प्रतिभागियों को कार्यालयीन कार्य में हिंदी के प्रयोग हेतु गंभीरता बरतने की सलाह दी। कार्यशाला के दौरान राजभाषा प्रयोग के मामले में उत्पन्न विभिन्न समस्याओं का समाधान किया गया।

संगीत सरिता

की-बोर्ड सीखने की प्रविधि

इस अंक में 'धड़क' फिल्म के 'जो मेरी मंजिलों को जाती है' गाने का नोटेशन नीचे प्रस्तुत है। यह गीत राग 'दरबारी' पर आधारित है।

आरोह: सा रे ग रे गा, म प ध नी सां
अवरोह: सां ध नी प ग प ग ग ग रे सा
पकड़: सा रे ग, ग रे सा, ध नी सा
वादी स्वर: र संवादी स्वर: प
कोमल स्वर: ग ध नी

सा ग रे गा　　रे ग रे नि　　नी रे सा नि　　रे ग रे सा नि
मरहमी सा　　चाँद है तू　　दिलजला सा　　मैं अंधेरा...
सा ग रे ग　　रे ग रे स नि रे स नि　　नी रे सा नि　　रे ग रे सा
एक दूजे　　के लिए हैं...　　नींद मेरी　　ख्वाब तेरा
सा नि धा प　　धा म रे नि　　नी ध पा म　　पा ग सा धा
तू घटा है　　फुहार की　　मैं घड़ी　　इंतजार की
धा म ग गा म ग　　स रे ग रे सा ग रे
अपना मिलना लिखा　　इसी बरस है ना...
स रे गा म गा म गा म गा म पा ध प　　म प धा प मा ग रे स रे म ग रे सा नि
जो मेरी मंजिलों को जाती है　　तेरे नाम की कोई सड़क है ना
स रे गा म गा म गा म गा म पा ध प　　म प धा प मा ग रे स रे म ग रे सा नि
जो मेरे दिल को दिल बनाती है　　तेरे नाम की कोई धड़क है ना
प म मा ग ग रे म ग रे स　　प मा मा ग ग रे म ग रे सा
कोई बांधनी　　जोड़ा ओढ़ के
स रे गा म गा म म रे म रे पा ग रे　　पा मा मा ग ग रे म ग रे सा
बाबुल की गली　　आऊँ छोड़ के
स रे गा म गा म म रे म रे पा ग रे　　पा मा मा ग ग रे म ग रे सा
तेरे ही लिए　　लाऊँगी पिया
स रे गा म गा म म रे म रे पा ग रे　　पा मा मा ग ग रे म रे सा
सोलह साल के　　सावन जोड़ के
रे ग रे स रे ग रे स　　रे ग रे स रे ग रे स　　रे ग रे स रे ग ग मा　　मा प ध म म प प प ध प म ग रे
प्यार से थामना...　　डोर बारीक है　　सात जन्मों की ये　　पहली तारीख है
सा नि धा प　　धा म रे नि　　नी ध पा म　　पा ग सा धा
डोर का एक　　मैं सिरा　　और तेरा　　है दूसरा
धा म ग गा म ग　　स रे ग रे सा ग रे
जुड़ सके बीच में　　कई तड़प है ना
स रे गा म गा म गा म गा म पा ध प　　म प धा प मा ग रे स रे म ग रे सा नि
जो मेरी मंजिलों को जाती है　　तेरे नाम की कोई सड़क है ना
स रे गा म गा म गा म गा म पा ध प　　म प धा प मा ग रे स रे म ग रे सा नि
जो मेरे दिल को दिल बनाती है　　तेरे नाम की कोई धड़क है ना

इस गाने के राग व स्वरों की जानकारी सी आर जी (रीफ्रैक्टरी) के सहायक महाप्रबंधक श्री रविदास एस गोने और नोटेशन सुश्री वी नंदिता ने दिया है।

कहानी

प्रायश्चित्त प्रलाप

- श्री राजकुमार सिंह -

आचार्य रामदेव आश्रम के एक छोर से दूसरे छोर तक क्रमवार आ-जा रहे हैं, जैसे किसी विषैले जीव ने उन्हें काट लिया हो और उसका विष उनके सारे शरीर में तड़फन भरता जा रहा है। मन रह-रह कर उन्हें धिक्कार रहा है और दिल डूबती लौ-सी धड़क रहा है। ऊँची-ऊँची पहाड़ियों से लिपटी, दूर तक लहराती पूर्वा की जलधार बार-बार उनकी गुहार करने लगती है और वे जाने-अनजाने पूर्वा की ओर नजरें कर लेते हैं। उसकी चाँदी-सी चमकती जलधारा से टकराकर लौटने वाली सर्द पहाड़ी हवाएँ, गोपी-गोपी कहकर उन्हें बुलाने लगती हैं। कितनी विचित्र विडंबना है कि आज उन्हें कोई पहचानने वाला नहीं है। उनके अपने ही शिष्य जब उनके प्रवचनों से मंत्रमुग्ध होते हैं, भगवन या देव कहकर नतमस्तक होते हैं अथवा उनके जैसा बनने की सौगंध लेते हैं, तब उनका जी चाहता है कि पृथ्वी फट जाए और वे समूचे उसमें समा जाएँ।

कोई उलूक-सा पक्षी रात के सन्नाटे को तोड़ता हुआ चला गया और सूनी पहाड़ियाँ उसके पैरों की फड़फड़ाहट से गूँज उठीं। फिर रात का सोया मौन वैसे ही लौट आया, जैसे नदी की छाती पर गिरे पत्थर से कांपती लहरें फिर से एक-दूसरे से मिलकर शांत हो जाती हैं। एक धब्बेदार बदली पहले चाँद से मनुहार करती रही और फिर उसी पर छा गई। काले अंधियारे पहाड़ों में फैली चाँदनी ने धीरे से पलकें मूँद लीं और उसके साथ ही आचार्य रामदेव का दृष्टि-विस्तार घने अंधकार में विलीन हो गया। उन्हें लगा चाँद के साथ तो कोई है भी, पर वे नितांत अकेले हैं। उन्होंने नजरें उठाकर चारों तरफ फैली सुनसान वादियों को देखा उनकी अड़तालीस साल लंबी जिंदगी सुनसान वादियों के सिवा कुछ भी नहीं।

> उन्हें लगता है, शुभा उन्हें ढूँढ़ने के लिए पुकार रही है। वह मृगछौने से ठिठककर, आवाज की दिशा में दौड़ पड़ते हैं। उनका सारा शरीर गर्माने लगा। उन्होंने गेरुए कंबल को अपने से परे फेंक दिया। सामने वाली कुटिया से आती आवाज उनकी व्याकुलता को लगातार बढ़ाती ही जा रही थी। रेतीली पगडंडी पर उलझते खड़ाऊँ को बीच में ही छोड़कर वे जल्दी से कुटिया के द्वार पर जा खड़े हुए।

दस साल की उम्र में अम्मा के चले जाने के बाद बापू भी दूसरे साल पता नहीं कहाँ लोप हो गये। बस तभी मुँह बोले नाना उन्हें अपने साथ घर ले आये।

शुभा के रात-दिन के संग ने उन दोनों को संबंधों की मर्यादा की सीमाएँ कब लंघा दी, उन्हें याद नहीं। फिर एक दिन शुभा ने उनकी छाती पर सिर रखकर काँपती-सी आवाज में कहा, 'बहुत देर होती जा रही है, गोपी... कुछ करते क्यों नहीं... अब जल्दी कुछ जतन करो... वरना मैं मर जाऊँगी।' वह क्या कहे-करे, बस ढुलकते आँसुओं को ही देखता रहा। सोलह-सत्रह की वय: संधि उसे कोई राह न दे पायी और देखते-देखते शुभा ने कुएँ में छलांग लगा दी।

चहलकदमी करते-करते आचार्य रामदेव के शरीर ने कंपकंपना शुरु कर दिया, जैसे उन्होंने भयानक स्वप्न देख लिया हो। वे दायें घूमकर आश्रम के भीतर गये और जोगिया कंबल लपेट कर बाहर आ निकले। लेकिन उनकी कंपकंपी और बढ़ गई। वह किसी शिष्य को बुलाकर आग तापना चाहते थे, किंतु आश्रम के दूसरे छोर की ओर बढ़ चले। बहुत देर बाद उनके शरीर ने गरमाहट ली।

आजकल आचार्य रामदेव को लगता है, ये सारा का सारा जनप्रवाह अपने ही चक्रव्यूह में फँसा मृत्यु की ओर तेजी से बढ़ा जा रहा है। परंतु जब उनकी निगाहें स्वयं पर लौटती हैं तो वे काँप उठते हैं... क्या मृत्यु इतनी भयानक है?... कौन जाने... बहरहाल मौत का भय न होता तो वे घर से भागे ही क्यों होते?... शुभा की लाश से लिपट जाते या उसी कुएँ में डूब मरते, जिसमें उसने जल समाधि ली थी... होटल में हर किसी की जूठन न साफ की होती... मालिक के मग-प्लेट टूटने पर अंधाधुंध मार न खाई होती... आधे पेट फटेहाल वर्षों फुटपाथ पर सोए न होते... नाहक अफीम बेचने के जुर्म में साल भर जेल न काटी होती और शायद जेल से मुक्त होते ही स्वामी सदानंद से भेंट न हुई होती... और न ही उनके मधुर उपदेशों ने उन्हें गोपी से आचार्य रामदेव बनाया होता...।

पहाड़ी सियार की डरावनी आवाज से आचार्य रामदेव बच्चों की तरह चीख उठते हैं। उन्हें लगता है, बीते दिनों की बातें अधिक देर तक नहीं सोचनी चाहिए। इस जानलेवा चिंतन में विष ही विष घुला हुआ है। सब कुछ समाप्त हो जाने पर भी काम, क्रोध, मद, लोभ और अहंकार का यह अथाह समुंदर दिन-रात उन्हें अपनी ही आग में क्यों जलाया करता है। उफ! हर तरह फुफकारते ये वाथवीय दावानल... आखिर वे किस-किस से लड़ें... और कैसे?... कैसे...? कोई तो कुछ कहे... पर कौन? भला है ही कौन, जो यह जान सके कि आचार्य की गरिमा से दमकता ये अड़तालीस वर्षीय शरीर भीतर से कितना खोखला है?... समाज में रहने की लालसा, गृहस्थ जीवन की चाह, भावी पत्नी और बच्चों के प्रेम-दुलार की उत्कट

आकांक्षा उन्हें हर पहर घेरे रहती है।

पिछले संध्या-प्रवचन में, बीस वर्षों का ध्यानमार्गीय अनुभव रखने वाले आचार्य रामदेव ने शिष्यों से इंद्रियों को वश में करने के लिए 'अनापानसती' योग की चर्चा की थी। जब कभी वे ध्यान प्रयोगों की चर्चा करते हैं तो उनके प्रवचन मात्र व्याख्या ही नहीं होते, बल्कि उनका सम्मोहन श्रोताओं को जीवंत प्रयोग की सहज अनुभूतियों में डुबो देता है। और तब, उनके चेहरे, उनकी आवाज, आँखों और उनके प्रत्येक हाव-भाव से उनके गहन अनुभवों की आभा छलकती-सी जान पड़ती है। लेकिन क्या कोई जान सका कि ये ढेर सारे ध्यान प्रयोग उनकी इंद्रियों के मुक्ताचरण के आगे हमेशा ही हारते रहे हैं? रात के अंधियारे में जब अम्मा-बापू, नाना-नानी और मौसी के लिए उनका दिल हाहाकार हूक से भर उठता है तो वे जी भरकर, घायल बच्चे की तरह रो लेते हैं और फिर अगली सुबह पूर्व की जलधार में स्नान करके सूर्यवंदना के भारी-भरकम श्लोकों से दु:ख-दर्द, क्षोम-बिछोह, निराशा व आक्रोश की सारी रेखाएँ मिटा देते हैं।

'गोपी...ई...ई...।'

'शोभा' कहकर, वे आवाज की दिशा की ओर पलटते हैं। कहीं कोई न था। इधर कुछ दिनों से इस तरह के स्वर जब-तब उन्हें भ्रम में उलझा दिया करते हैं। न जाने कौन उनके मसखरी किया करता है? उनके मरे-खपे नामों से पुकारने वाले तो जाने कब से इस जगत से विदा ले चुके होंगे। इन बीस वर्षों में निरंतर उनकी आँखें कुछ खोजती-सी भटकती रही हैं, बरसात की झिलमिलाती बूँदों में, हवाओं के शोर में, सूर्य की विदा होती किरणों में और रात के घने अंधकार में। कितनी ही बार उन्होंने स्वयं से पूछा है कि प्राणों में पनपाती अज्ञात अभीप्सा के लिए वे इस महाकाल के भयंकर अंधकार में किसे खोजना चाहते हैं? किंतु उनके नीरवमन में भटकती यह अनुगूँज हमेशा ही अनुत्तरित रही है। कठोर साधना के लगातार अभ्यास से बढ़ती महान शांति के साथ-साथ उनकी अंतश्चेतना की पीड़ा भी बलवती होती गयी है। जब कभी पूर्णिमा की रातें उनकी सोई स्मृतियों को आमंत्रण देती हैं तो उनकी आँखें स्वप्निल हो उठती हैं और पतझड़ की निर्जीव पत्तियों की तरह ढेरों चित्र उनकी आँखों के सामने तैरने लगते हैं।

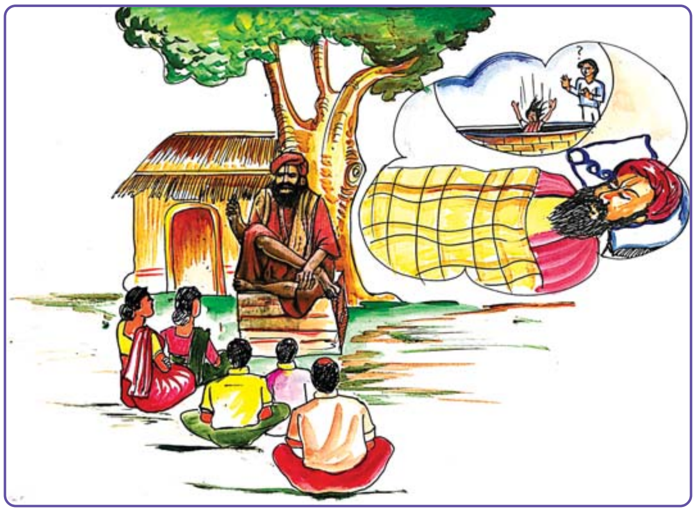

शुभा से कहे आचार्य रामदेव के शब्दों की प्रतिछाया फिर से लौट आई है, '...तेरा ब्याह होगा और तू अपने घर चली जाएगी... तब-तब मेरा क्या होगा... विश्वास कर, मेरा दिल फिर कभी न धड़क सकेगा...।' पर, उनका दिल आज भी धड़क रहा है। अपना सब कुछ खोकर, झूठे वादों और झूठे विश्वासों की इस दुनिया को अपने नग्न रूप में उन्होंने बार-बार देखा है। दूर-दूर अनंत सीमाओं तक फैले इन पहाड़ों को क्या मालूम कि उन्हें अपनी स्मृतियों का रुदन भार लिए इन बीहड़ पथों पर कब तक भटकना है?

कटी जिंदगी की पीड़ा आचार्य रामदेव की पलकों की कोरों से वह निकली। उन्होंने कंबल को और अधिक कस लिया और धीमी हो आई चहलकदमी की गति फिर से बढ़ा दी।

काफी देर तक चहलकदमी करने से आचार्य रामदेव की देह अकड़-सी जाती है। उन्हें लगा, रात अभी काफी शेष है। उन्होंने स्वयं को संयत करने के लिए अपना सारा अवधान आज्ञाचक्र पर केंद्रित किया और अपनी श्रवण-संवेदना को अभ्यंतर, जगत में निरंतर गूँजने वाली मधुर, किंतु धीमी शंख ध्वनि की ओर उन्मुख करके, साक्षी भाव से कदम बढ़ाने लगे। तभी उन्हें लगा, जैसे पूज्य स्वर्गीय सदानंद गुरु जी उनके सामने आकर खड़े हो गये हों। यंत्रवत् उनकी हथेलियाँ प्रणाम की मुद्रा में उठ गईं और उनकी मौन दृष्टि गुरु जी की सूरज-सी चमकती चुंबकीय आँखों में अटक गई।

'तुम्हें एक समस्या का समाधान खोजना है।'

'आज्ञा हो, प्रभु।' उन्होंने कहना चाहा, किंतु ध्वनि कंपन उनके होंठों तक आने से पहले ही मौन हो गये।

'अमावस की रात एक भैंस अपने बाड़े को तोड़कर बाहर निकल गई है। उसका सारा शरीर बाहर निकल गया है, उसकी सींगें, उसका सिर व उसकी चारों टाँगें बाहर हो गई हैं। लेकिन उसकी पूँछ को देख।'

अचानक उनकी चेतना पत्थर पर गिरे काँच की तरह बिखर गई। उन्हें लगा कि गुरु जी की वाणी उनके अंतर्प्राणों में समाती चली जा रही है। शांति की खोज में उन्होंने एक दु:खपूर्ण और एकाकीपन का लंबा अंतराल जिया है। उन्हें लगता है कि वे मुर्दा शांति की विशाल बाड़ से घिर गये हैं। जब से आँखें बंद करके ध्यान में डूबना चाहते हैं तो किसी सुकोमल देह की गंध उनके अंतर्प्राणों पर छा जाती है। तब उन्हें लगता है कि उनका संपूर्ण जीवन एक ऐसी अंधी गुफा में कैद हो गया है, जिसकी छत पर घिनौने कीड़े-मकोड़े लटके हैं और फर्श जहरीले साँपों से भरा

पड़ा है। समाज की मान्यताओं से जाने-अनजाने कट कर जीना किसी भी व्यक्ति के लिए कितना दुष्कर होता है... पर ऐसा क्यों होता है...? समाज व्यक्ति से बना है या व्यक्ति समाज से?... दोनों एक-दूसरे के लिए शत्रु क्यों बन जाते हैं?

आचार्य रामदेव पूरी बेचैनी व बेबसी के साथ अपनी मुट्ठियाँ भींच लेते हैं। उन्हें पछतावा हो रहा है काश उस बोध-कथा का मर्म उन्होंने गुरु जी के मिलने से पूर्व ही समझ लिया होता तो शायद उनके कदम संन्यास के इस बीहड़ पथ पर कभी न भटकते। उन्हें वह बोधकथा शब्दश: याद हो आई, अभी-अभी किसी ने इस हरे-भरे वृक्ष को काट दिया है, इसके मूल अभी मुरझाए नहीं हैं और पत्तियों में ताजगी अभी मौजूद है...। इसकी शिराओं में बहती जलधाराएँ अभी सूखी नहीं हैं। हवाओं के संगीत पर इसकी शाखाओं का नर्तन अभी जारी है। इसे नहीं मालूम कि जड़ों से इसके संबंध हमेशा के लिए समाप्त हो गये...। हो सकता है कि अभी ये उस घाव से अनजान हों तो इसे अभी-अभी लगा है... और कोई अभी इससे तर्क भी नहीं कर सकता, क्योंकि अभी ये मरा नहीं है...।

'गोपी...ई...ऽ...ई...ऽ...ई...ऽ...।'

अपने ही नाम की गुहार सुनकर आचार्य रामदेव एक बार फिर चौंक पड़ते हैं। पूरी की पूरी आवाज उनके दिलो-दिमाग को आरी की तरह चीरती चली गई। वे सतर्कता से पूर्वा की ओर बड़ी-बड़ी आँखों से निहारते हैं। उन्हें लगता है, शुभा उन्हें ढूँढ़ने के लिए पुकार रही है। वह मृगछौने से ठिठककर, आवाज की दिशा में दौड़ पड़ते हैं। उनका सारा शरीर गर्माने लगा। उन्होंने गेरुए कंबल को अपने से परे फेंक दिया। सामने वाली कुटिया से आती आवाज उनकी व्याकुलता को लगातार बढ़ाती ही जा रही थी। रेतीली पगडंडी पर उलझते खड़ाऊँ को बीच में ही छोड़कर वे जल्दी से कुटिया के द्वार पर जा खड़े हुए।

तभी उन्हें अचानक झटका-सा लगा। काली धब्बेदार बदली चाँद को छोड़कर दूर तैरती चली गई और अंधेरे में डूबी पहाड़ियाँ दूधिया चाँदनी से नहा उठीं। उनकी साधना और संयम से दबा अचेतन का ज्वार उफनते ज्वालामुखी-सा फूट पड़ा और वे घायल बच्चे की तरह चीख-चीख कर रोने लगे।

- 68/31-ए
लोकमन मोहाल
कानपुर-208001
मोबाइल: +91 9369793144

प्रासंगिकता व उपयोगिता

- श्रीमती आशा गुप्ता -

एक बार एक प्रसिद्ध उद्योगपति को एक जनसभा में व्याख्यान देने के लिए बुलवाया गया। लोगों ने उनसे उनकी सफलता का रहस्य बतलाने की प्रार्थना की। वे थोड़े संकोची स्वभाव के थे। सोच रहे थे कि बात कहाँ से प्रारंभ करें। तभी उनके मन में एक विचार कौंधा। उन्होंने अपनी जेब में हाथ डाल कर एक हजार रुपए का एक करारा नोट निकाला। नोट को दिखलाते हुए उन्होंने पूछा कि 'यदि मैं इस नोट को नीचे जमीन पर डाल दूँ तो कितने लोग इस नीचे गिरे हुए नोट को स्वीकार करेंगे?' एक वैध मुद्रा को स्वीकार करने में क्या परेशानी हो सकती थी, अत: सबने 'हाँ' में जवाब दिया। अब उद्योगपति ने उस नोट को दो-तीन बार मोड़ कर मेज पर रखते हुए पूछा, 'अब इस मुड़े-तुड़े नोट को कितने लोग स्वीकार करेंगे?' इस बार भी सहमति में ही सबने अपने हाथ खड़े कर दिए। एक बार फिर उद्योगपति ने उस नोट को लिया और बुरी तरह से मसल दिया तथा पानी में गीला करके मेज पर रखते हुए पूछा, 'मेरा खयाल है अब इसे कोई स्वीकार नहीं करेगा?' लोगों ने फिर नोट को स्वीकार करने की सहमति जतलाई और कहा कि 'ये अब भी वैध मुद्रा है और नोट अब भी एक हजार रुपए के सामान की क्रय क्षमता रखता है। अत: स्वीकार करने में कोई बाधा नहीं। लेकिन आप कहना क्या चाहते हैं? कृपया स्पष्ट रूप से समझाइए', लोगों ने कहा।

उद्योगपति महोदय ने कहा कि 'नोट की तरह ही हमारे जीवन में भी विषम परिस्थितियाँ आती रहती हैं। लेकिन जो इन विषम परिस्थितियों में एक नोट की तरह अपनी कीमत बनाए रखता है, असफलताओं से हार न मान कर संघर्ष करता रहता है, वही सफलता का हकदार बनता है। एक नोट की कीमत की तरह ही लाभ हो या हानि, हमें कभी भी अपनी फेस वैल्यू या जीवन में अर्जित प्रतिष्ठा कम नहीं होने देनी चाहिए। मूल्यहीनता से समझौता न करके हमें हर हाल में अपनी प्रासंगिकता व उपयोगिता बनाए रखनी चाहिए। देश-काल के अनुसार जब तक हम समाज व राष्ट्र के लिए उपयोगी व प्रासंगिक बने रहेंगे, हमारी सफलता भी असंदिग्ध बनी रहेगी और हम समाज व राष्ट्र की उन्नति के साथ-साथ स्वयं की उन्नति भी करते जाएँगे। यदि जीवन-प्रवाह में हम अपने जीवन रूपी नोट को मुड़ने-तुड़ने व गंदा होने से भी बचा सकेंगे तो वह सोने पर सुहागा वाली बात होगी।'

- ए.डी.-106-सी, पीतमपुरी,
दिल्ली-110034
मोबाइल: +91 9310172323

लोकसंस्कृति की विस्मृत नाट्य-कृति नकटौरा

- डॉ रश्मि शील -

चारों तरफ अंधकार छाया है, सन्नाटा पसरा हुआ है। इस बीच एक आवाज गूँजती है - 'ऐ बुढ़ऊ, जो कुछ छुपा रखा है, सब हमें सौंप दो।' घर के बाहर मैदान में सोया बुजुर्ग जाग जाता है। अपने सामने बंदूकधारी नकाबपोशों को देख उसकी सिट्टी-पिट्टी गुम हो जाती है और काँपती हुई आवाज में कहता है, 'मेरे पास कुछ नहीं है। घर में भी कोई नहीं है।'

नकाबपोश जोर से डाँटता है 'चुप, हमें न बहकाओ। हमें सब पता है। आज तुम्हारे परपोते की शादी है। सब मर्द लोग बारात में गए हुए हैं, मगर औरतें तो घर में हैं। चलो, जल्दी से दरवाजा खुलवाओ और उनके गहने हमारे हवाले कर दो।' यह सुनकर बुजुर्ग की हालत खराब हो जाती है।

नकाबपोश फिर चिल्लाता है, 'उठते हो कि दरवाजा तोड़ दें।' बुजुर्ग कुछ कहे, उससे पहले ही दरवाजे के पास से हँसने की आवाज बाहर तक बिखर जाती है, 'अरे भऊजी, काहे दादा को परेशान कर रही हो।' तब उस बुढ़ऊ को होश आता है, 'ओहो, तो ये बात है।' वे लाठी उठाते हैं और घर के भीतर घुस चुके नकाबपोशों की ओर दौड़ पड़ते हैं। लेकिन दरवाजे से पहले ही रुक जाते हैं, क्योंकि उसके आगे उनका प्रवेश वर्जित होता है।

यह दृश्य 'परफार्मिंग आर्ट' का वह नमूना है, जो लोक की उर्वर चेतना और भाव-बोध की परिणति है। जी हाँ, बात हो रही है नकटौरा की, जो पूर्णरूपेण स्त्री-प्रदर्शन से संबंधित लोक-विधा है, जिसमें मुद्दे तो हैं, पर पहचान नगण्य है। रामलीला, रासलीला, जात्रा, भवाई, कीर्तनियाँ, विदेशिया नाचा, माच तमाशा, स्वांग, नौटंकी की तरह ही नकटौरा भी एक लोकनाट्य है। देश के अलग-अलग अंचलों के ये नाटक विशेष रूप से वहाँ की संस्कृति, परंपरा, सोच, सामाजिक मूल्य, आस्था व विश्वास का प्रतिनिधित्व करते हैं।

लोकनाट्य कलाओं का उत्स कहाँ से है, यह सही-सही कह पाना मुश्किल है। परंतु इस बात से इन्कार नहीं किया जा सकता कि समस्त साहित्य, धर्म, दर्शन, विज्ञान और अन्यान्य विकसित कलाओं का प्रादुर्भाव लोक-विधाओं यानी कला, गीत, कथा आदि से ही हुआ है। लोक-विधाओं के मूलाधार सामाजिक संरचना के अंतर्द्वंद्वों में विकसित होते हैं, इसलिए जीवन की यथार्थपरक दृष्टियाँ भी इसमें परिलक्षित होती हैं। एक तरह से लोकगीत, लोककथाएँ, लोकनृत्य और लोकनाट्य सब हमारी परंपराओं से उत्सर्जित सत्साहित्य हैं, जो वाचिक उजास में प्रवाहमान हैं।

लोकगीत, लोककथाएँ, लोकनृत्य के समान ही लोकनाटक भी जनजीवन में इस तरह रचे-बसे हैं कि इनके बिना जीवन के आनंद की कल्पना ही नहीं की जा सकती, क्योंकि ये मनोरंजन के साथ ही लोकजीवन की विवेचना भी करते हैं। इस संबंध में प्रोफेसर चंद्रदेव यादव का कथन महत्वपूर्ण है - 'धर्म और धार्मिक अनुष्ठान और अन्यान्य शास्त्रीय क्रियाएँ लोक में अंतर्भुक्त होकर लोकधर्म बन जाती हैं। भारतीय समाज में लोक और वेद विरुद्ध आचरण को हेय और त्याज्य माना गया है। लोक सिद्ध व्यवहार वेद विरुद्ध हो सकता है, किंतु लोक विरुद्ध नहीं। जो लोक विरुद्ध होगा, वह लोकसिद्ध और लोक धर्मी हो ही नहीं सकता। लोकगीत और लोकनाटक लोकजीवन के सामूहिक रचनात्मक विवेक के सर्वोत्तम उदाहरण हैं।'

लोकनाटक और लोकगीत दोनों ही जीवन जीने की जद्दोजहद में लगे लोगों के मनोरंजन के सुलभ साधन हैं। इसीलिए ये जीवन के अधिक निकट प्रतीत होते हैं। आचार्य भरतमुनि भी स्वीकार करते हैं कि 'नाटक लोगों के मनोरंजन मात्र के लिए ही नहीं है, बल्कि यह जीवन में गहरी आस्था भी पैदा करता है। यही जीवनास्था लोक को संघर्ष से जोड़ती है।' यही संघर्ष मेहनतकशों की संस्कृति से जुड़ता है - एक ऐसी संस्कृति से जो हमारी स्मृतियों में पलती है, चेतना में विकसित होती है और वाचिक परंपरा के माध्यम से पुरानी पीढ़ी आने वाली पीढ़ी को दे जाती है। यह एक ऐसी सांस्कृतिक विरासत है, जिसके सुर हमारे जीवन में स्पंदित होते रहते हैं, जिन्हें हम लोकविधा में अपनी इच्छा और जरूरतों के अनुसार समेटते हैं और विकसित करते हैं। लोकगीत, लोकनृत्य, लोककथाएँ या लोकनाटक इसी प्रकार की समृद्ध वाचिक परंपराएँ हैं। उत्तर भारत में नौटंकी और नकटौरा दो जनरंजन के विशिष्ट साधन हैं। विभिन्न विषयों पर आधारित नौटंकी में पुरुषों की भूमिका प्रधान होती है। नौटंकी खुले मैदान में खेली जाती है, जहाँ महिलाओं का प्रवेश प्राय: वर्जित होता है। यहाँ तक कि स्त्री पात्रों की भूमिका का निर्वाह भी अक्सर पुरुषों द्वारा ही किया जाता है। इसीलिए शायद स्त्रियों ने अपने लिए एक अलग तरह का नाट्य स्वरूप विकसित किया, जो घर के भीतर पूरी तरह से स्त्रियों द्वारा अभिनीत होता है। नौटंकी के विपरीत इसमें पुरुष पात्रों की भूमिका स्त्रियों द्वारा अभिनीत की जाती है। इस नाट्य विधा को 'नकटौरा' नाम दिया गया है, जो स्त्रियों के लिए स्त्रियों द्वारा खेला गया स्त्रियों का लोकनाटक है। नकटौरा संभवत: नाटिका का ही अपभ्रंश है। इसीलिए कहीं-कहीं इसे 'नटकौरा' भी कहा जाता है। 'नटकौरा' अथवा 'नकटौरा' में गीतों का

बाहुल्य होता है। इन गीतों को 'नकटा' या 'नटका' या कहीं-कहीं 'जलुआ' भी कहा जाता है। इन नकटा गीतों की कोई विशिष्ट विधा या शैली नहीं होती। परंतु ये मनोरंजन से भरपूर होते हैं। अस्तु, नकटौरा को एक तरह की गीतपरक नृत्य नाटिका कहा जा सकता है। यह पूरी तरह से स्त्री-प्रधान लोकविधा है, जिसमें अभिनय करने वाली स्त्रियाँ होती हैं और दर्शक भी स्त्रियाँ ही होती हैं। यह लोक नाट्य का वह स्वरूप है, जिसमें संभ्रांत महिलाओं की भी सक्रिय भागीदारी होती है।

लोकनाटकों की कोई व्यवस्थित रूपरेखा नहीं होती। ये प्राय: ईश वंदना अथवा स्तुति से शुरु होते हैं। इनमें रूप विधान के साथ-साथ नृत्य व गीतों का समावेश होता है। बीच में कभी-कभी विदूषक अपनी हास्यपूर्ण भाव-भंगिमाओं से दर्शकों का मनोरंजन करता है। फिर नाटक चलने लगता है। नकटौरा इससे भी अधिक अव्यवस्थित होता है। कोई स्क्रिप्ट नहीं, कोई निर्देशक नहीं। रूप-सज्जा, मंच-सज्जा किसी की जरूरत नहीं पड़ती। न कोई संवाद योजना, न देशकाल विचार, न वातावरण का बंदिश। यहाँ तक कि पात्रों का चुनाव भी पहले से नहीं होता। किसी को पता नहीं होता कि कौन सी स्त्री कब किस वेष में उपस्थित हो जाएगी। कलाकार और नाटक कर रही स्त्री कब दर्शकों के बीच बैठकर नाटक का आनंद उठाने लगेगी, सब कुछ अनिश्चित रहता है। बस, समझ लीजिए कि खुले आँगन में मंडप के नीचे रात भर जीवन का स्वांग रचा जाता है। यह मंडप भी नकटौरा के लिहाज से नहीं छाया जाता, बल्कि दूल्हे के विवाह-संस्कार में रीति-निर्वाह के लिए बनाया जाता है। प्राय: चाकी-काड़ी परंपरा (जिसमें सौभाग्यवती स्त्रियाँ दूल्हे को उबटन आदि लगाती हैं) के दिन या उसके बाद मंडप बनाया जाता है। यही मंडप नकटौरा का मंच बन जाता है।

नकटौरा लड़के के विवाहोत्सव की रात्रि खेला जाता है। लड़के की शादी में सामान्यत: सभी परिजन-पुरजन बारात में चले जाते हैं। घर में बहुत बुजुर्ग, छोटे बच्चे और स्त्रियाँ रह जाती हैं। घर की सुरक्षा के लिए रात्रि जागरण करना पड़ता है। जागरण के लिए गीत, संगीत व अभिनय का आयोजन किया जाता है। चूँकि यहाँ पुरुष नहीं होते, इसलिए स्त्रियाँ स्वच्छंद हो जाती हैं। वे निर्द्वंद्व भाव से तमाशा करती हैं, स्वांग रचाती हैं। नृत्य, गीत, संगीत से युक्त यह कार्यकलाप ही नकटौरा है।

इसे अभिनीत करने के लिए किसी पूर्वाभ्यास की जरूरत नहीं होती और ना ही स्त्रियाँ नाट्यकला में निपुण होती हैं। एकदम सहज अभिनय। अभिनय भी क्या, दूसरों की नकल के बहाने ये स्त्रियाँ कुछ देर अपने आप को जी लेती हैं। नकटौरा में अधिकतर नकल पुरुषों की ही होती हैं। स्त्री-पुरुष संबंधों की होती हैं। कभी-कभी कोई स्त्री पुरुष वेष में ऐसे उपस्थित हो जाती है कि उसे पहचानना मुश्किल हो जाता है।

एकदम सहज भाव से सीधे-सादे ढंग से खेला जाने वाला नकटौरा जीवन का रंग बिखेरते हुए आनंदित करता है। एक तरह से अपनी औघड़ कहन (कथ्य शैली) से फार्मूलाबद्ध प्रदर्शनकारी कलाओं को धता बतातीं ये स्त्रियाँ कथ्य, शिल्प और लयात्मकता के अनूठे लोकधर्मी प्रयोग गढ़ती हैं। सामान्यत: नकटौरा का आरंभ देवी गीत से शुरु होता है:

'कामना पूरन करौ माई
पूरना पूरन करौ माई
सो मोरी अंबे काहे का बना है भवनवा
काहे के चार खंभे लगे माई। कामना...
सो मोरी अंबे सोने का बना है भवनवा
चांदी के चार खंभे लगे माई। कामना...'

देवी गीत के पश्चात नकटौरा शुरु होता है। नकटौरा करना और देखना बड़ा दिलचस्प होता है। इसमें एक तरफ गीत गायन होता है तो दूसरी तरफ कुछ स्त्रियाँ नृत्य करने लगती हैं। साथ ही इनका स्वाँग चलता रहता है। गाँव की कुछ प्रगल्भ स्त्रियाँ स्वत: ही अभिनेत्री बन जाती हैं और कोई प्लाट बना लेती हैं। प्राय: विवाह का रूपक रचा जाता है और कृत्रिम विवाह का नाट्य-रूप प्रस्तुत किया जाता है। समस्त स्त्री समूह दो खेमों में बंट जाता है - एक वर पक्ष होता है तथा दूसरा वधू पक्ष। यूँ तो ऐसी कोई निश्चित रूपरेखा नहीं होती कि कौन-सी स्त्री किस भूमिका में होगी। परंतु वर-वधू के रूप में अक्सर ननद-भाभी या देवरानी-जेठानी को देखा जाता है। कभी-कभी कोई स्त्री जमींदार, मास्टर, दरोगा या चौकीदार बन जाती है। मंडप में फेरों के पहले ही वर पक्ष कार, साइकिल या नकद रूपयों की माँग कर देता है। वधू बनी स्त्री विवाह से इंकार कर देती है। दोनों ओर से सवाल-जवाब के गीत शुरु हो जाते हैं। इसी तरह जीवन की अनेक छोटी-बड़ी घटनाओं का सृजन किया जाता है। कभी पुरुष बनी स्त्री दूसरी स्त्री से प्रेमालाप करती है, प्रेम प्रदर्शन करती है। इसी समय दूसरी स्त्रियाँ ढोलक की थाप पर नकटा गीत शुरु कर देती हैं:

'होने न पाई सखी संझा
बलम रसिया बन के आय गयो रे
बागों गई थी संग गए बलमा
तोड़ न पाई चार कलियाँ
बलम रसिया बन के आय गयो रे।
तालों गई थी संग गए बलमा
धोने न पाई चार साड़ी
बलम रसिया बन के आय गयो रे।।'

इसी गाने के बीच ही अचानक कोई स्त्री गर्भवती के रूप में आकर रंग में भंग डाल देती है कि पुरुष बहुत बेवफा होते हैं, इनके झाँसे में न आना। ये मर्द किसी एक स्त्री के प्यार में बंध कर नहीं रह सकते। वह पुरुष पति को उलाहना देती है:

'मैं तो चंदा जैसी नार, राजा क्यों लाए सौतनिया।
मैं तो तेरे गले का हार, राजा क्यों लाए सौतनिया।।
जो मैं होती छोटी-मोटी, तो लाते सौतनिया।
मैं तो तेरे कंधे के पार राजा क्यों लाए सौतनिया।।'

प्रेम प्रसंग, विवाह संस्कार, गर्भवती होने का स्वांग, डाक्टर और नर्स की भूमिका सुरक्षित प्रसव, नवजात शिशु की देखभाल, टीकाकरण, मातृत्व-सुख के साथ-साथ दहेज-प्रथा, बाल-विवाह, बेमेल विवाह आदि अनेक सामाजिक समस्याओं सहित जीवन के विविध पहलुओं से जुड़ी सीखें, हँसी-ठिठोली के बीच दी जाती है। कभी-कभी कोई स्त्री लोढ़ा लेकर आ जाती है, जो नवजात शिशु का प्रतीक होता है। इसी प्रकार बेलन, चिमटा, मूसल सब स्वांग के उपकरण के रूप में प्रयुक्त होते हैं। इस ठिठोली के बीच जो खास है, वह है गीत संयोजन। ये गीत प्रसंग से संबद्ध ही हो, यह आवश्यक नहीं, पर मनोरंजन से भरपूर चटपटे व मजेदार होते हैं। कुछ गीतों की विषय-वस्तु विशुद्ध हास्य से परिपूर्ण होते हैं:

'भिंडी की हो गई सगाई।
शकरकंद नाचन को आई।।
आलू बेचारा बराती बना है।
कद्दू बना दूल्हा-भाई।।'

नकटौरा प्रस्तुति की योजना तत्काल बनाई जाती है। इसलिए परिस्थिति और मन:स्थिति के अनुसार इसकी विषय-वस्तु भी बदलती रहती है और तब बदल जाता है नकटा गीत भी। एक उदाहरण देखिए - 'एक स्त्री नकटौरा में वधू की भूमिका में है, उसका पति उसकी नहीं सुनता और अपनी माँ के कहने में आकर पत्नी को प्रताड़ित करता रहता है। आम बोल-चाल की भाषा में पत्नी के कहने में चलने वाले पुरुष को 'जोरू का गुलाम' तथा माँ के अधिक नजदीक होने वाले पुरुष के लिए 'दूधमुहँ बच्चा' जैसी अभिव्यक्तियों का प्रयोग होता है। इसी बात को नकटा में देखिए:

'सैंय्या मिले लरिकैय्यां, मैं का करूँ।
बारह बरस की मैं ब्याह के आई।
सैंय्या चले पैय्यां-पैय्यां, मैं का करूँ।
अट्ठारह बरस की मैं गौने में आई
सैंय्या बुलाए मैय्या-मैय्या, मैं का करूँ।'

नकटौरा में नकटा के साथ-साथ देवी गीत, गणेश पूजन, सुहाग-गीत, सिंदूर दान, गठजोड़, ज्योनार, पंसासारी गीत, बन्ना-बन्नी, छेड़-छाड़ के गीत, विभिन्न संस्कारों से जुड़े गीत तथा गारी गीत आदि शामिल होते हैं। कुछ गीत ऐसे अश्लील व फूहड़ होते हैं कि सार्वजनिक रूप में उनकी प्रस्तुति अमर्यादित समझी जाती है। कहा जा सकता है कि पुरुष वर्चस्व वाले समाज में अपनी बात खुलकर न कह पाने वाली स्त्रियाँ नकटौरा में खुलकर अपनी भड़ास निकालती हैं और पुरुष की अनुपस्थिति में अपनी आजादी का जश्न मनाती हैं। परंतु विडंबना यह है कि यह सब देखने के लिए कोई भी पुरुष वहाँ उपस्थित नहीं रहता। इसलिए स्त्रियों के 'मन की बातें' पुरुषों तक पहुँच नहीं पातीं।

नकटौरा में अभिनय, अभिनय नहीं होता, पर जो कुछ भी उसमें होता है, वह जीवन और सामाजिक विषयों से जुड़ा होता है। शास्त्रीय नाटकों में जो स्थान एकांकी का है, लोकनाटकों में वही जगह नकटौरा का है। नकटौरा खेलने के अनेक सामाजिक व व्यावहारिक पहलू हैं। एक ओर तो यह स्त्रियों को कुंठित मनोवृत्ति से मुक्ति प्रदान करता है, तो दूसरी ओर इसमें प्रेम व मौज-मस्ती के साथ वर-वधू के लिए आशीर्वाद का भाव अंतर्निहित होता है। संक्षिप्त अभिनय से स्त्रियाँ अपने अंतर्द्वंद्व को न केवल प्रकट करती हैं, बल्कि बेबाकी से जीवन की आलोचना भी करती चलती हैं। नकटौरा की भाषा मुख्य रूप से जनपदीय होती है, परंतु पात्रानुसार विविधता भी दिखाई देती है। जैसे कि सिपाही, दरोगा, जमींदार जैसे पात्र अपने संवाद में खड़ी बोली या टूटी-फूटी अंग्रेजी का प्रयोग कर लेते हैं।

निष्कर्षत: नकटौरा स्त्रियों का शुद्ध ठाठ है। इसमें शामिल फूहड़ता, अश्लीलता इसके नकारात्मक पक्ष हैं। इसीलिए इसका सार्वजनिक प्रदर्शन नहीं हो पाता। एक तरह से यह घर की चहारदीवारी के अंदर अभिनीत तमाशा बन कर रह गया है। इससे भी अधिक दु:ख इस बात का है कि अब तो यह लोकनाटक लोकजीवन से लुप्त होता जा रहा है। शिक्षा के प्रसार-प्रसार ने हमारी लोक संस्कृतियों, परंपराओं पर काफी आघात किए हैं। शहरीकरण के कारण जनपदीय लोक कलाओं का पतन हुआ है। पहले भी किशोरियों को नकटौरा देखने की मनाही होने के कारण यह नाट्य कला पीढ़ी-दर-पीढ़ी हस्तांतरित होने से वंचित हो गई है। बदलते समय की शादियों में अब ग्रामीण क्षेत्रों में भी स्त्रियों के बारात जाने का प्रचलन बढ़ गया है, जिसके कारण नकटौरा खेलने की परंपरा खत्म-सी हो रही है।

परंतु हाल ही में आशा की एक किरण चमकी, जब केंद्र सरकार का संस्कृति मंत्रालय नकटौरा को पुन: प्रचलन में लाने हेतु सक्रिय भूमिका अदा करते हुए उत्तर प्रदेश के आजमगढ़ जनपद में इसका सफल आयोजन करवाया है।

- 3/8 टिकैत राय तालाब कालोनी
लखनऊ-226017
मोबाइल: +91 9235858688

कृष्णचूड़ा

- श्रीमती रजनी शर्मा 'बस्तरिया' -

साफ चट्ट चटकीली धूप खिल चुकी थी। गाड़ी दंतेवाड़ा की सड़क पर तेजी से दौड़ी जा रही थी। कृष्णचूड़ा मानो इन सारे रंगों को अपनी आँखों में उतार लेना चाह रही थी। गाड़ी इस सड़क पर चल रही थी कि दौड़ रही थी, समझ में नहीं आ रहा था। समतल काली सड़क पर गाड़ी के सामने यदि काँच के गिलास में पानी रखा जाये तो मजाल है कि वह छलक जाये। बस्तर बाला की चिकनी देह सी सड़क। सड़क के दोनों ओर सैकड़ों की संख्या में मुस्कराते गुलमोहर। अहा! मानो उन्होंने यह नांरगी लाल चूड़ा पहना लिया हो। 'कृष्णचूड़ा' तो घने जंगलों वाले बस्तर की जायी थी। सारे भाव उसके हृदय में थे। मानो विधाता ने हृदय तरंग वाली तूलिका से सारे भावों वाले रंगों में डुबो कर तूलिका का व्यक्तित्व रचा हो।

सामान्य कद, कंचे जैसी आँखें। पल में खुश हो जाना, रुलाई आई तो रो लेना। हाँ पर उन सब का पहरेदार उसका स्वाभिमान था, जो उसके एक बार आहत होने के बाद पुनः उस राह पर उसे दोबारा जाने से उसे रोक ही लेता था। रंग तो उसका कृष्ण तो था ही पर तेवर एकदम सुर्ख। पल में ठेस लगी और टेसू के फूल सी चटक जाये। यूँ तो जगदलपुर से जाने वाली अनेक सड़कें थीं, पर न जाने जगदलपुर से दंतेवाड़ा जाने वाली सड़क कृष्णचूड़ा को स्वर्ग से भी प्यारी क्यों थी?

शंकनी-डंकनी नदी के बहते कल-कल और उन नदियों तक पहुँचने का मार्ग सीधा सपाट ढलान वाला, कृष्णचूड़ा को इतना भाता था कि अगर न्यूटन से उसका परिचय होता तो वह जंगली तेंदू (फल) का पूरा गप्पा (टोकनी) ही उस पर खुशी से वार देती...। गुरुत्वाकर्षण बल के प्रभाव की तरह वह अपने आप ही शंकिनी-डंकिनी नदी तक पहुँच जाती। मानो पीछे से न्यूटन बाबा उसे ढलान वाली सड़क पर ढकेल रहे हों। चंद मिनटों में वह शंकिनी-डंकिनी नदी में छपाक से उतर जाती।

विधाता ने बस्तर के इस दण्डकारण्य के कण-कण में मानो गुरुत्वाकर्षण ही भर दिया हो। पर न जाने क्यों प्रतिकर्षण शंकिनी-डंकिनी नदियों में था। एक का पानी लाल तो दूसरे का पानी पारदर्शी साफ। सूत भर के फासले की लक्ष्मण रेखा से अलग, पर सदियों से साथ बहना ही उनकी नियति दण्डकारण्य ने मानो तय कर दी हो। दंतेवाड़ा के गहन जंगलों में हजारों किस्म के पेड़ हैं। इतने सघन मीनारकद ऊँचे पेड़ कि आदमी कहीं नजर ही नहीं आ सकता। उसमें से सबसे अधिक कृष्णचूड़ा को यही सीधी सड़क सबसे ज्यादा भाती थी, जिसके दोनों किनारों में सैकड़ों की संख्या में गुलमोहर लगे थे। और साफ फक्क सड़क पर जब ये फूले झरते थे, तो ऐसा लगता था, मानो सुर्ख लाल रोशनी से बस्तर भूमि की साड़ी पर किसी ने सलमा सितारा टाँक दिया हो। कृष्णचूड़ा और उसकी सखियाँ रोज ही वनोपज इकट्ठा करने जंगल में भीतर तक जाती और साँझ ढलने से पहले वापसी में थक कर सड़क पर बैठ जाती।

सड़क पर पहुँचते ही घर आने का उल्लास उनमें भर आता। सारी थकावट और वनोपज इकट्ठा करने की जद्दोजहद की स्मृतियों से मुक्ति का उन्हें एहसास हो उठता। जिजीविषा के आंचल से कुछ पल अपने लिए बचाने का वे यत्न करतीं। आखिर बस्तर की धूल की वे गौरैय्या जो थीं। बस्तर की धूल में फुदकने के जिस सुख का वे आनंद लेती थीं, वह अनिर्वचनीय और अनन्य होता। जब कभी किसी के होंठों से कोई बस्तरिया लोकगीत का कोई बोल निकल जाता, तो फिर क्या कहने, सारा वातावरण एक स्वर में झंकृत हो उठता। मानो जंगल के सभी पेड़-पौधे और लताएँ इन बस्तर बालाओं के साथ गलबहिया करके झूम उठे हों और बस्तर के सौंदर्य व प्राचीन आदिवासी परंपराओं व खुशहाली का यशोगान गा रहे हों। अनायास हँसी-ठिठोली करना, कोई रूठ गई तो उसे मनाना या किसी को चिढ़ाना, सब कुछ बहुत ही स्वाभाविक व प्रकृतिजन्य ढंग से होता रहता।

झरे हुए गुलमोहर के फूलों को एक दूसरे पर उलीचना, कृष्णचूड़ा तो कभी उन फूलों को कान के पीछे तो कभी जूड़े में खोंस लेती। उस समय इनके लापरवाह देहाती बस्तर सौंदर्य के क्या कहने? पुष्ट शरीर, सिर के बायीं ओर कसा हुआ खोसा (जूड़ा) उस पर गुलमोहर के फूल बिल्कुल ऐसे लगते, मानो कोई सुर्ख लाल पताका वनखंडियों के बीच से झाँक रही हो। अब इसके बाद उनकी घर वापसी का समय आता।

कृष्णचूड़ा की मँगनी कल तय होने जा रही थी। आयतू से, जो पास के गाँव में ही रहता था। हाट में उसका परिचय हुआ था। पुष्ट देह, वृषभ स्कंधा, छः फुटिया कद...। और सिर्फ वह सुर्ती (तंबाकू) खाता था। बाकी उसमें कोई ऐब कृष्णचूड़ा को दिखाई नहीं देता था। आयतू पेशे से लोहार था...। धौंकनी फूँकते व आँच में काम करते-करते उसकी पूरी त्वचा तांबई हो चली थी। उस पर श्रम से निकला स्वेद (पसीना) उसके माथे पर जब छलछला उठता, तो ऐसा लगता मानो किसी देवपात्र में तुलसीदल

मिश्रित जल छलक दिया हो।

बस्तर के उन्नत आदिवासी समाज में सदियों से यह परंपरा रही है कि कन्या अपने मनपसंद साथी का चुनाव कर सकती है। दोनों का ब्याह फागुन में होना था। पर कृष्णचूड़ा अभी से तो फाल्गुनी हुई जा रही थी। सहज, सरल, निष्कपट, निश्छल नेह ने उसके गालों की लुनाई को और भी आरक्त कर दिया था।

यूँ तो गुलमोहर का पेड़ मार्च के महीने तक तो सिर्फ हरी-भरी पत्तियों के साथ खड़ा रहता है। अप्रैल के महीने में उसकी डालियाँ सुर्ख लाल फूलों के खिलने के इंतजार में गदरा जाती हैं और जब चटख लाल फूल खिल आते हैं उसकी टहनियों पर, तब बिल्कुल तो ऐसा लगता था मानो चूड़िहारिन ने टेर लगा दी हो...। अपनी टोकनी पेड़ के नीचे रख दी हो और झुकी हुई कोमल, नाजुक, सुकुमार टहनियों को अपने हाथों से थाम लिया हो और लाल परी की कलाई में कांच की दर्जनों लाल चूड़ियाँ पहना रही हो। कुछ ऐसा ही हाट में आयतू लोहार की स्नेहादिग्ध मनुहार ने कृष्णचूड़ा के मन में आभास भरा था, 'क्या बीती घरूआस आले घर' (क्या लेना है ले ले) प्रियतम के साधिकार न्यौते से कृष्णचूड़ा के चेहरे की लुनाई और बढ़ जाती और वह स्थानीय लुंगी की ओट में अपना चेहरा छुपा लेती! आयतू की इस मनुहार से कृष्णचूड़ा को डाल पर बैठा पक्षी भी उसी जैसा ही लगने लगता, जो कंठ से लोहा पीटता जाता और कहता जाता 'सारा लोहा तेरा मेरी केवल धार।'

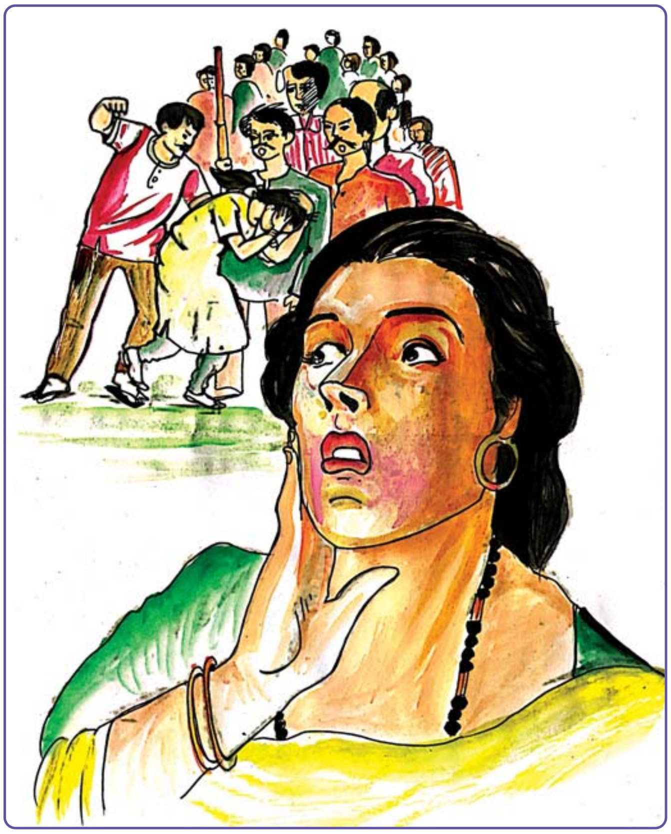

विवाह के कुछ माह ही बीते थे। जल, जंगल, जमीन के अलावा कृष्णचूड़ा और आयतू को कुछ चाहिए ही नहीं था। उन दोनों की तरह हजारों आदिवासियों ने जंगल पर ही आश्रित रह कर अपना जीवन गुजारा था। पर आज न जाने क्यूँ कृष्णचूड़ा को आयतू में कुछ अजनबीपन-सा दिखने लगा था। रात को घर से देर तक नदारद हो जाता है। कृष्णचूड़ा बदहवास-सी सबसे उसके बारे में पूछती रहती है। न जाने कब कौन से बिल में समा जाता है और कब किस कब्र से उठकर चला आता है। उसका तन खोखले गुलमोहर सा होने लगा था। उसके सपनों के दिन लदने से लगे हैं। मानो मोटे तने के गुलमोहर के वृक्ष के वलयों में वियोग के दीमकों ने घर बना लिया हो। जिस पर रोज अनमनेपन वाली काली मिट्टी की एक परत चढ़ती दिखाई देती है।

कृष्णचूड़ा जीते जी सधवा होते हुए ही वैधव्य झेल रही थी। उसका मन न तो बाजार, न हाट में, ना ही घर पर लगता था। जंगलों में उन्हीं गुलमोहर के तने पर टिक कर घंटों सुबकती रहती, जिनपर अपने अल्हड़ बचपन और बस्तरिया पानी से विकसित यौवन को वार दिया करती थी। उन काली सर्पीली सड़क के स्याह में अपनी खुशियों को तलाश लेने वाली कृष्णचूड़ा, अब उसे देखकर अपने भविष्य की कालिमा का आभास करती है। अब वह इस उम्र का क्या करें, ना तो वह अल्हड़ रही और न प्रौढ़। जीवन जीने के लिए सारे यत्न तो करने ही पड़ते थे उसे। बुझे मन से वह जंगल जाती वनोपज लाती। दातुन लाती... पत्तों के दोने, पत्तल सीती... और ना जाने क्या... क्या...?

अचानक गाँव में अनजान लोगों की भीड़ बढ़ने लगी। अब उसने भी सुना था कि कुछ बंदूकधारियों ने उन्हें जबरन उठा लिया। गंगवा जैसे अनेक नौजवान भी जाने कैसी-कैसी भाषा बोलने लगे थे?

आज कृष्णचूड़ा का मन अनमना था। उसकी आँखों में आज नींद नहीं थी। वह शुक्रतारा के उगने तक जागती रही। बस गुलमोहर की पत्तियों को ताकते हुए उसने आँखें मूँद लीं। इतने प्रचंड ताप के बावजूद भी उसकी पत्तियाँ हरी थीं। उसके फूलों ने लाल टेसू को पछाड़ा था और चैत से लेकर जेठ तक हजारों लोगों ने उसके नीचे साँस लेकर अपनी यात्रा तय की थी। हवाओं में एक अजीब सी फुसफुसाहट गूँज रही थी। कृष्णचूड़ा का मन जाने किसी अनहोनी की आशंका से धड़-धड़ किये जा रहा था। अचानक चर्र-चर्र की आवाज आई और धड़ से किवाड़ खुला। कृष्णचूड़ा भौंचक सी देखती रह गई... सामने आयतू खड़ा था। पीछे चार-पाँच उसके साथी... सबके सिर पर लाल फीता बँधा था। हाथ में थीं बंदूकें। एक ने जोर से आवाज निकाला, 'आमचो संग (चलो हमारे साथ)।'

कृष्णचूड़ा के मुँह अकस्मात निकला, 'काय काज (किस कारण)?' फिर वही आवाज गूँज उठी, 'आमचो सेना में भर्ती हो। (तुम हमारी सेना मे भर्ती हो)।' कृष्णचूड़ा का सिर घूमने लगा था। यह उसका वही पति है, जिसने साथ जीने-मरने की कसमें खाई थीं? पतझड़ और सावन दोनों में साथ बिताने के सपने बुनवाये थे। आज हथियार बंद लोगों के साथ अपनी ही ब्याहता को परायेपन से धमका रहा है।

आयतू ने अपने चार-पाँच साथियों के साथ अपने ही घर पर धावा बोला था। अभी इतने बड़े बज्रपात को वह क्षण भर के लिए सह भी नहीं पाई थी कि कृष्णचूड़ा ने देखा, आयतू उसकी ओर बढ़ा चला आ रहा था। उसके बायें हाथ में फूलमती की कलाई थी। उफ्फ... फूलमती...? जो उसकी बचपन की सखी थी... उसको भी...? वह डर से पीछे हटने लगी। पर आयतू कहाँ रुकने वाला था। वह तो विषैले दांतवाले जानवर की तरह फूलमती को घसीटते उसकी ओर बढ़ा ही चला आ रहा था। दोनों चीख रही थीं। बरतन गिरने की आवाज पर इकट्ठा हो जाने वाले पूरे मुहल्ले में कोई इतना साहसी नहीं था, जो महिलाओं के आर्तनाद को, चिघाड़ को सुनकर सहायता करने आगे आ जाए। गाँव में इतनी दहशत थी कि पूरा गाँव सन्न था।

घर से घसीटते हुए मुख्य सड़क तक आते-आते कृष्णचूड़ा के पाँव लहुलुहान हो चुके थे। उसने मिन्नतें कीं कि कम से कम वे लोग फूलमती को छोड़ दें। पर कहाँ सल्फी का सुरूर, वासना से अँजी आँखो में हथियार का दर्प। चुप्प कहते हुए उसने बंदूक की मूठ से कृष्णचूड़ा के सिर पर प्रहार कर दिया...। कृष्णचूड़ा के सिर से रक्त की धारा फूट पड़ी। वह घसीटते ही जा रहा था।

रात के सन्नाटे में कृष्णचूड़ा के चीत्कार के साथ सिर्फ और सिर्फ गुलमोहर के पेड़ साथ दे रहे थे। वे अपनी अल्हड़ से प्रौढ़ा बनी फूलमती व कृष्णचूड़ा की पुकार पर अपनी शाखाओं को हिला-हिला कर फूलों के माध्यम से विद्रोह कर रहे थे। तभी घुप्प अंधेरे से अचानक आवाज आई 'गो' (माँ रे) की चीत्कार के साथ एक जोड़ी पैरों के भागने की आवाज आई। अब अचानक पूरा जंगल शांत हो गया। तूफान के गुजरने के बाद की शांति। धवल चाँदनी के फक्क उजाले और सुर्ख गुलमोहर की जुगलबंदी को उस दिन पूरे बस्तर ने देखा होगा। अगली सुबह आयतू मृत पड़ा था। उसका गला हंसिया से रेत दिया गया था। आयतू लोहार को उसी के बनाये हथियार (हंसिया) से अंजाम तक किसने पहुँचाया? ताज्जुब की बात यह थी कि जहाँ आयतू की मृत देह पड़ी थी, वहाँ एक भी पत्ती, एक फूल भी नहीं गिरा था। मात्र लहूलुहान शव पड़ा था, वह भी गुलमोहर के नीचे। दूसरी ओर बेसुध कृष्णचूड़ा का हंसिया, जिसे कृष्णचूड़ा ने घर से घसीटे जाते समय उठाकर अपनी कमर में खोंस लिया था, उसे गुलमोहरों ने अपने सूर्ख लाली के फूलों को झाड़कर ढक लिया था।

जंगल भी प्रकृति को समझते हैं। हाँ... उन गुलमोहरों ने, जिन्होंने कृष्णचूड़ा की अठखेलियों से लेकर आज तक के सफर में हमेशा प्रत्यक्ष साथ दिया था। शायद उन्हीं गुलमोहरों की पनाह लेकर कृष्णचूड़ा ने आयतू के रक्त से सने हंसिए को गुलमोहरों के सुपुर्द किया होगा और आज सारे गुलमोहर, गुलमोहर न होकर कृष्णचूड़ा (गुलमोहर) हो चुके हैं।

शायद! बस्तर की बेटी की अस्मिता की रक्षा का जयघोष करते हुए अपने फूलों को झरा कर इन गुलमोहरों (कृष्णचूड़ा) ने विदा कहा होगा, 'जाओ... कृष्णचूड़ा जाओ... निश्चिंत... निर्भीक होकर... जाओ। बस्तर के सुदूर जंगल तुम्हारी राह देख रहे होंगे। और वहाँ हम तुम्हारे खोपे, कलाइयों में सुर्ख फूलों का गहना पहना कर तुम्हें कृष्णचूड़ा बनायेंगे। और हम हमेशा तुम्हारी राह देखेंगे। तुम बनो शाश्विता कृष्णचूड़ा। अरे यह क्या? सारे गुलमोहर धवल चाँदनी में सुर्ख फूलों का चूड़ा पहन कृष्णचूड़ा बन चुके थे और हमेशा बने रहेंगे।

- 116 सोनियाकुंज,
देशबंधु प्रेस के पास
रायपुर (छत्तीसगढ़)
मो. नंबर: 9301836811

समस्या समाधान व सौंदर्य का अदभुत संयोजन - कणिति जलाशय - 2

प्राय: ऐसा माना जाता है कि समग्र इस्पात संयंत्रों में विद्युत और जल का उपयोग भारी मात्रा में किया जाता है। क्योंकि इस्पात उत्पादन में विभिन्न प्रकार की प्रक्रियाएँ संपादित की जाती हैं, जिसके प्रचालन व शीतलन के लिए क्रमश: विद्युत एवं जल की आवश्यकता होती है।

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड का विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र अपने तीन मिलियन टन प्रतिवर्ष उत्पादन क्षमता के आवश्यकतानुसार कणिति जलाशय - 1 (15 लाख घनमीटर क्षमता) का निमार्ण किया था। दो भागों में निर्मित यह रिजर्वायर लगभग 700 एकड़ क्षेत्र में फैला हुआ है।

परंतु हाल ही में संयंत्र में किए गए क्षमता विस्तार, निगमित सामाजिक दायित्व की गतिविधियों के तहत आस-पास के नागरिकों हेतु की जाने वाली जलापूर्ति, महानगरपालिका विशाखपट्टणम की आवश्यकताओं पूर्ति एवं 153 किलोमीटर लंबी खुली नहर से जल चोरी व जलह्रास के कारण कंपनी को जल के अभाव का सामना करना पड़ रहा था। यह समस्या तव और गंभीर रूप धारण कर लेती है जब कभी इस क्षेत्र में सूखा अथवा अकाल जैसी स्थिति हो जाती है और खेती व अन्य उपयोगों के लिए नहर से पानी निकालने की घटनाएँ बहुत बढ़ जाती हैं। इन्हीं समस्याओं से निजात पाने के लिए कंपनी को अपने जल संग्रहण क्षेत्र का विकास करना पड़ा ताकि जल का अधिक मात्रा में भंडारण करके गर्मियों में पानी की तंगी की समस्या से निजात पाया जा सके।

कणिति जलाशय - 2 के निर्माण की परियोजना राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड की एक महत्वाकांक्षी योजना है। इस जलाशय को 225 एकड़ भूमि पर बनाया गया है। इसकी कुल जल धारण क्षमताा लगभग 12.32 घनमीटर है। इसके सुचारु निर्माण एवं बेहतर प्रवंधन तथा सूक्ष्म निगरानी करने के उद्देश्य से इसके कार्यों को दो भागों अथवा पैकेजों अर्थात 1 एवं 2 में विभाजित किया गया था

पैकेज-1:

इसमें जलाशय निर्माण के सिविल एवं स्ट्रक्चरल कार्यो के अंतर्गत निम्नलिखित कार्य शामिल हैं:

1. जलाशय के तटवंध का निर्माण
2. मौजूदा जलाशय से प्रस्तावित जलाशय तक पानी की आपूर्ति हेतु नहर का विस्तारण
3. डाइवर्शन चैनल का निर्माण
4. यांत्रिकी व विद्युतीय कार्यों को छोड़ इन्टेक पंप हाऊस
5. ऑफटेक, एस्केप एवं इन्फाल रेगुलेटर
6. इलेक्ट्रिकल सवस्टेशन, सिल्ट ट्रैप, सड़क, पुल आदि
7. टो ड्रेन से लीकेज पंप हाऊस के माध्यम से रिजर्वायर तक पानी की आपूर्ति
8. क्रॉस ड्रेनेज कार्य आदि

जलाशय का डिजाइन आंध्र प्रदेश सरकार के सेंट्रल डिजाइन आर्गनाइजेशन (सी डी ओ) द्वारा तैयार की गई। इसके लिए भारत सरकार के जल स्रोत मंत्रालय के अधीन आने वाले सार्वजनिक उद्यम मेसर्स डब्ल्यू ए पी सी ओ एस द्वारा परियोजना प्रबंधन परामर्शदाता सेवाएँ (पी एम सी) प्रदान की गई।

पैकेज-2 :

इसमें यांत्रिकी, विद्युतीय, यंत्रीकरण एवं जलाशय से संयंत्र में पानी की आपूर्ति हेतु पाइप लाइन विछाने से संवंधित कार्य शामिल थे।

1. जलाशय से अपरिष्कृत जल उपचार संयंत्र (आर डब्ल्यू टी पी) तक प्रत्येक 4500 मीटर की दूरी पर डी एन 1400 एम एस ट्विन पाइप लाइन विछाना
2. 28 मीटर हेड के 4500 घनमीटर प्रति घंटे क्षमता वाले 4 वी एफ डी ड्रिवेन वर्टिकल टर्वाइन पंप की आपूर्ति एवं स्थापना
3. 2 ट्रेवेलिंग वाटर स्क्रीन्स की आपूर्ति व स्थापना
4. आर टी डब्ल्यू पी में 11 × 7.5 मीटर आकार के एक आर सी सी स्टिलिंग चैंवर की स्थापना
5. पंप हाऊस में 15 टन क्षमता वाले 02 डी जी ई ओ टी क्रेनों की आपूर्ति व स्थापना

6. 14 किलोमीटर एच टी केबल व अन्य इलेक्ट्रिक्स की आपूर्ति व स्थापना
7. इंस्ट्रूमेंटेशन, ए सी वी एस एवं अन्य कार्य

इसके अंतर्गत अतिरिक्त जल भंडारण हेतु पंपहाऊस उपस्कर का डिजाइन, आपूर्ति, स्थापना, परीक्षण एवं प्रवर्तन, जलाशय से संयंत्र तक आवश्यक पाइपिंग, विद्युतीय, यंत्रीकरण एवं अन्य सुविधाएँ शामिल थीं। लेकिन सी डी ओ एवं डब्ल्यू ए पी सी ओ एस की परामर्शदाता सेवाएँ शामिल नहीं थीं।

पंपिंग योजना, पाइपिंग प्रणाली, तकनीकी विनिर्देशों का निर्धारण, निविदा संबंधी कागजात, निविदा प्रक्रिया, निविदाओं का मूल्यांकन, इंजीनियरिंग, स्थल पर्यवेक्षण, परियोजना अनुश्रवण आदि कार्य परियोजना विभाग द्वारा किये गये।

जलाशय की गहराई अत्यधिक होने के कारण राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड में पहली बार वेरिएबुल फ्रीक्वेंसी ड्रिवेन (वी एफ डी) पंप्स की परिकल्पना की गई। वी एफ डी के उपयोग से पानी का सतत प्रवाह सुनिश्चित होता है। चूँकि जलाशय में पानी के स्तर के आधार पर वी एफ डी द्वारा मोटर की गति नियंत्रित की जाती है, अत: बिजली की बचत भी बड़े पैमाने पर होती है।

प्रचालन का संक्षिप्त विवरण:

जलाशय से पानी इंटेक फोर बे के माध्यम से इंटेक पंपहाऊस में स्थित पंपिंग पिट में पहुँचता है। इंटेक पंपहाउस में प्रत्येक 4500 घनमीटर प्रति घंटे की क्षमता वाले वी एफ डी ड्रिवेन वर्टिकल टर्बाइन पंप (2 वर्किंग + 2 स्टैंड बै) एवं एक ग्रेविटी पिट होते हैं। जब जलाशय में पानी का स्तर 19.5 मीटर (अधिकतम स्तर 21.25 मीटर है) एम एस एल से ऊपर हो तो ये दोनों गड्ढे हाइड्रॉलिक ईक्विलिब्रियम के अधीन प्रचालित होते हैं और पानी ग्रेविटी पिट से संयंत्र के जल उपचार संयंत्र के स्टिलिंग चैंबर तक गुरुत्वाकर्षण पद्धति के माध्यम से पहुँचता है।

जब पानी का स्तर 19.5 मीटर एम एस एल से नीचे हो तो पंपिंग पिट एवं ग्रेविटी पिट दोनों के स्लूस गेट्स बंद किये जाते हैं और पंपिंग पिट से पानी ग्रेविटी पिट में भेजा जाता है, ताकि जल उपचार संयंत्र तक पानी का प्रवाह बनाया रखा जा सके। राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड -विशाखपट्टणम इस्पात संयंत्र के कणिति बैलेसिंग रिजर्वेयर, जिसे के बी आर - 2 के नाम से मुख्यत: जाना जाता है। उसके निर्माण काम अप्रैल 2019 में ही पूरा हो गया। अत: संगठन के अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री प्रदोष कुमार रथ और गाजुवाका नगर पालिका के आयुक्त श्री एम हरिनारायण के कर कमलों से दिनांक 07 अप्रैल 2019 को एलूरु नहर से आने वाली जलधारा को इसमें प्रवाहित करते हुए इस जलाशय का उद्घाटन किया गया। इस अवसर पर संगठन के निदेशक (वाणिज्य) श्री प्रबीर रॉयचौधरी, निदेशक (वित्त) श्री वेणुगोपाल राव के साथ-साथ बड़ी संख्या में वरिष्ठ अधिकारी, श्रमिक संघों के प्रतिनिधि व कर्मचारी मौजूद थे।

लगभग 24 मीटर गहरे इस नए जलाशय का निर्माण मेसर्स एल एण्ड टी द्वारा किया गया है और इसके निर्माण पर कुल लागत लगभग 465 करोड़ रुपए आई है। इसके लिए लगभग 2.28 किलोमीटर लंबी अतिरिक्त नहर का निर्माण भी किया गया है। लोकेशन व निर्माण की दृष्टि से यह जलाशय बहुत खूबसूरती है। इसकी वजह से उक्कुनगरम की शोभा भी बहुत बढ़ गई है।

के बी आर - 1 और के बी आर - 2, दोनों ही जलाशय राष्ट्रीय राजमार्ग 17 के किनारे पर बने हैं। दोनों जलाशयों के बीच में कंपनी का प्रमुख तोरण द्वार (कूर्मन्नपालेम में) बना हुआ है। प्लांट प्लाजा रोड पर स्थित इस द्वार से होकर ही संयंत्र के प्रमुख प्रवेश द्वार तक पहुँचा जाता है। यह सड़क ही उक्कुनगरम मे पहुँचने का मुख्य मार्ग है। भरपूर हरियाली से अच्छादित इस छ: लेन वाली सड़क के दोनों ओर से दोनों जलाशयों के किनारे ल्गते हैं, जो मिलकर एक विहंगम दृश्य का सृजन करते हैं। आशा है भविष्य में ये जलाशय एक बेहतर पर्यटन स्थल के रूप में विकसित होंगे।

जलाशयों के रखरखाव, सुरक्षा आदि के साथ-साथ पर्यटकों के लिए पहुँच मार्ग बनाए गए हैं। जलाशयों की सीमाओं पर ऊँची दीवारें बनाई गई हैं और जगह-जगह नागरिक सुविधाओं का विकास किया गया है। कुल मिलाकर राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड के ये दोनों जलाशय पर्यावरण मैत्री तो हैं ही अब ये पर्यटक मैत्री भी बन गए हैं। साथ ही संयंत्र की आवश्यकताओं की पूर्ति सहित विशाखपट्टणम नगर के लिए पेयजल भी उपलब्ध कराने वाले जलाशय बन गए हैं।

सुख

सुख जीवन की वह अवस्था है, जहाँ हम सर्वत्र अभिराम की तलाश करते हैं। अक्सर हममें से कई लोग ऐशो-आराम की तलाश, अच्छे वस्त्र, भोजन, भौतिक सुविधाओं व खुशनुमा परिवेश आदि को सुख मान लेते हैं। मनोवैज्ञानिकों का मानना भी लगभग इसी तरह का है। वे मानते हैं कि सुख दीर्घगामी स्वस्ति की अनुभूति है। उनके विचार से सुख मन की शांति और जीवन में संतुष्ट होने का भाव है, जिसकी मात्रा अथवा इच्छा की मात्रा अलग-अलग व्यक्ति में ठीक वैसे ही अलग-अलग हो सकती है, जैसा कि हम भोजन के मामले में संतुष्ट होते हैं। भोजन लेने की क्षमता भी उस व्यक्ति की ग्राह्य क्षमता पर ही निर्भर होती है। हालाँकि सुख की परिभाषा की कसौटी पर यह सटीक उदाहरण नहीं हो सकता है, इसमें सुख की अनुभूति की व्याख्या हेतु फिर भी रिक्ति छूट जाती है। क्योंकि सुखानुभूति का प्रश्न मन व मस्तिष्क से संबद्ध है।

भगवान रजनीश जैसे कई विशेषज्ञों ने इस विषय का विश्लेषण और भी जटिलता एवं गूढ़ता से किया है। उनके अनुसार दु:ख की तरह ही सुख भी मन की एक वाह्य अनुभूति है। जब हमें मन वांछित वस्तु अथवा अनुभूति प्राप्त होती है, तो हमें सुख होता है। जिससे मिलना चाहते हैं और यदि वह मिल जाता है तो हमें सुख होता है। इसके विपरीत वांछित वस्तु अथवा व्यक्ति के न मिलने पर दु:ख होता है। लेकिन परमसुख अथवा आनंद की अनुभूति तो आत्मीय अनुभव होता है। जब आनंद की अनुभूति होती है तो वह स्थाई होती है। उनके मतानुसार जहाँ दु:ख का अभाव है, वहाँ सुख और जहाँ सुख का अभाव है वहाँ दु:ख की उपस्थिति रहती है। लेकिन आनंद की स्थिति सुख और दु:ख दोनों से परे होती है। अर्थात चित्त की सर्वथा शांत स्थिति ही आनंद की स्थिति है। उनका मानना है कि दु:ख की तरह ही सुख भी एक अशांत स्थिति है। दोनों स्थितियाँ मन की उत्तेजना से उपजी हुई हैं। मन सुख में भी उत्तेजित होता है और दु:ख में भी। इन दोनों स्थितियों में मृत्यु संभव है। पीड़ा के उत्पन्न होने की संभावना है। दोनों में बस अंतर इतना है कि दुख की अशांति अप्रीतिकर है और सुख की अशांति प्रीतिकर है। इसलिए अनुत्तेजना एक आनंद की स्थिति है।

बुद्ध ने ढाई हजार साल पहले इसी अनुत्तेजना की बात कही है। उनका मानना है कि सुख और दु:ख हमारी व्याख्याओं पर निर्भर हैं। एक ही बात किसी के लिए सुखकर तो किसी के लिए दु:खकर हो सकती है। हो सकता है आज जो सुख लग रहा है, वही कल दुख सा प्रतीत होने लगे।

प्रसंगानुसार एक कथा का उल्लेख करना उचित है, एक बार रोहिणी नदी के पानी से खेतों की सिंचाई को लेकर शाक्य और कोली सेना में युद्ध जैसी स्थिति उत्पन्न हो गई। दोनों सेनाएँ आमने-सामने हो गईं। रोहिणी नदी के किनारे ही बुद्ध ध्यान करते थे। युद्ध की स्थिति देख वे वहाँ आ पहुँचे। उनके पहुँचते ही दोनों सेनाओं के सेनापतियों ने हथियार फेंक दिये और हाथ जोड़कर बुद्ध के सामने खड़े हो गए। बुद्ध ने सेनापतियों से प्रश्न किया 'युद्ध की स्थिति क्यों आई?' सेनापतियों ने अधिकारियों की तरफ देखना शुरू कर दिया। अधिकारियों ने नौकरों की तरफ देखा। नौकरों ने बताया कि नदी के जल के लिए यह सब हो रहा है। बुद्ध ने इस बात को सिरे खारिज करते हुए कहा, 'नदी का जल युद्ध का कारण नहीं हो सकता है। नदी का जल तो वर्षो से यूँ ही बह रहा है। नदी के जल का बहना तो उसका स्वभाव है। वह कारण कैसे हो सकता है? वह कारण बिल्कुल सत्य नहीं है। सभी निरुत्तर-से हो गए। बुद्ध ने दोनों सेनाओं के सेनापतियों से हँसकर कहा, 'कहीं इस विवाद का कारण आपकी इच्छाएँ तो नहीं हैं? सभी लोग अब भी निरुत्तर ही रहे। बुद्ध ने पूछा, 'मनुष्य के प्राणों के सामने पानी का मूल्य क्या है?' उन्होंने कहा, 'कुछ भी तो नहीं।' फिर बुद्ध ने कहा, 'आप सोचिए, अमूल्यवान वस्तु के लिए मूल्यवान वस्तु का आप नाश करने जा रहे हैं। आप असार के लिए सार को गवाँ रहे हैं।' युद्ध की स्थिति शांति में बदल गई। बुद्ध वहाँ से चले गए। अर्थात 'व्याख्या बदल गई तो स्थिति बदल गई।'

बुद्ध ने कहा है कि 'सुख का सबसे बड़ा स्रोत औरों को अपने हृदय में स्थान देना है। जब हम पूरे मन से दूसरों की भलाई का ख्याल रखते हैं, तब हमारा हृदय स्नेह व प्यार से भर उठता है। वह मुक्त रूप से औरों से जुड़ता है और हम स्वयं भी स्वस्ति का अनुभव करते हैं। दूसरों के सुख की चिंता करते हुए, हम यथासंभव उनकी सहायता करना चाहते हैं तथा ऐसा करने से बचते हैं, जिससे उन्हें कोई नुकसान न हो जाए। इससे लोक विश्वास बढ़ता है। जीवन सार्थक होता है और हम आनंद की अनुभूति प्राप्त करते हैं।

बुद्ध की इसी अवधारणा को आगे बढ़ाते हुए दलाई लामा कहते हैं कि 'सुख आंतरिक शांति पर निर्भर है और आंतरिक शांति स्नेही हृदय पर।'

प्रोफेसर ऋषभदेव शर्मा की कविताएँ

सृजन का पल

अभिव्यक्ति की इच्छा
सृजन की चाह
अपनी अस्मिता की खोज है केवल!

जब त्वचा छूती किसी भी पुष्प को
दूब, तृण को
रेत को
या पत्थरों को भी,

एक सिहरन दौड़ती सारी शिराओं-
धमनियों में
फिर छुएँ
फिर-फिर छुएँ
फिर ना छुएँ

बोलने लगता उमगता रक्त,
वह पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल!

तैरते हैं रंग यों तो आँख के आगे
सभी

पर कभी जब रंग कोई
पुतलियों के पार जाकर स्वप्न
में तिरने लगे

चेतना के गहन तल पर
ऊर्जा का इंद्रधनु खिलने लगे
अवसाद की हर घनघटा चिरने लगे
ज्योति से संकल्प शिव की,
बस वही (पल)
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल!

प्राणवाही गंध कोई
प्राण में ऐसी बसे
रागिनी बजने लगे
यों तार साँसों का कसे
मन हिरन व्याकुल फिरे
नित दौड़ता नख-शिख
और थक कर बैठ जाए
नाभि में सिर को धरे,

वह विकलता
दौड़ पगली
वह पराजयबोध,
वह अचानक प्राप्ति का सुख,
बस वही (पल)
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल!

आत्मा प्यासी जनम की
खोजती फिरती
नदी, सरवर, कूप
कंठ में काँटे उगाती
जिंदगी की धूप

और जब मिलती नदी तो
शब्दभेदी बाण कोई
प्राण-पशु को बींध जाता
प्यास पर मरती नहीं

या कभी सरवर मिले तो
यक्ष कोई सामने आ
प्रश्न सारे दाग देता
औ' तृषा कीलित पड़ी
मूर्च्छित तड़पती

खोज जल की नित्य चलती
तब कहीं मिलता कुआँ,
वह झील नीली -
ओक से पीकर जिसे
चिर तृप्ति का अहसास हो
दूध की वह धार निर्मल
वह सुधा से सिक्त आँचल
बस वही पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल!

टूटता है मौन
सीमा टूटती है,
देह घुल जाती दिशाओं में
और केवल शून्य बचता है-
विदेही,
शून्य में से जब प्रकटते शब्द तारे
बस वही पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल!

एक दुर्लभ पल वही मुझको मिला था
आज तुमको सौंपता,
स्वीकार लो निश्छल,
बस यही पल
अभिव्यक्ति का पल
है सृजन का पल!

निवेदन

जीवन
बहुत-बहुत छोटा है,
लंबी है तकरार!
और न खींचो रार!!

यूँ भी हम तुम
मिले देर से
जन्मों के फेरे में,
मिलकर भी अनछुए रह गए
देहों के घेरे में।

जग के घेरे ही क्या कम थे
अपने भी घेरे
रच डाले,
लोकलाज के पट क्या कम थे
डाल दिए
शंका के ताले?

कभी
काँपती पंखुड़ियों पर
तृण ने जो चुंबन आँके,
सौ-सौ प्रलयों
झंझाओं में
जीवित है झंकार!
वह अनहद उपहार!!

केवल कुछ पल
मिले हमें यों
एक धार बहने के,
काल कोठरी
मरण प्रतीक्षा
साथ-साथ रहने के।
सूली ऊपर सेज सजाई
दीवानी मीरा ने,
शीश काट धर दिया
पिया की
चौखट पर
कबिरा ने।
मिलन महोत्सव
दिव्य आरती
रोम-रोम ने गाई,
गगन-थाल में सूरज चंदा
चौमुख दियना बार!
गूँजे मंगलचार!!
भोर हुए
हम शंख बन गए,
साँझ घिरे मुरली,
लहरों-लहरों बिखर बिखर कर
रेत-रेत हो सुध ली।
स्वाति-बूँद तुम बने
कभी, मैं
चातक-तृषा अधूरी,
सोनचंपई गंध
बने तुम,
मैं हिरना कस्तूरी।
आज
प्राण जाने-जाने को,
अब तो मान तजो,
मानो,
नयन कोर से झरते टप-टप
तपते हरसिंगार!
मुखर मौन मनुहार!!

घर बसे हैं

तोड़ने की साजिशें हैं
हर तरफ,
है बहुत अचरज
कि फिर भी
घर बसे हैं,
घर बचे हैं!
भींत, ओटे
जो खड़े करते रहे
पीढ़ियों से हम;
तानते तंबू रहे
औ' सुरक्षा के लिए
चिक डालते;
एक अपनापन
छतों सा-
छतरियों सो-
शीश पर धारे
युगों से चल रहे;
झोंपड़ी में-
छप्परों में-
जिन दियों की
टिमटिमाती रोशनी में
जन्म से
सपने हमारे पल रहे;
लाख झंझा-
सौ झकोरे-
आँधियाँ तूफान कितने
टूटते हैं रोज उन पर
पश्चिमी नभ से उमड़कर!
दानवों के दंश कितने
तृणावर्तों में हँसे हैं,
है बहुत अचरज
कि फिर भी
घर बसे हैं,
घर बचे हैं!
घर नहीं दीवार, ओटे,
घर नहीं तंबू,
घर नहीं घूँघट;
घर नहीं छत,
घर न छतरी;
झोंपड़ी भी घर नहीं है!
घर नहीं छप्पर।
तोड़ दो दीवार, ओटे,
फाड़ दो तंबू,
जला दो घूँघटों को,
छत गिरा दो,
छीन लो छतरी,
मटियामेट कर दो झोंपड़ी भी,
छप्परों को
उड़ा ले जाओ भले।
घोंसले उजड़ें भले ही,
घर नहीं ऐसे उजड़ते,
अक्षयवटों जैसे हमारे घर
हमारे अस्तित्व में
गहरे धँसे हैं,
है नहीं अचरज
कि अब भी
घर बसे हैं,
घर बचे हैं!
घर अडिग विश्वास,
निश्छल स्नेह है घर।
दादियों औ' नानियों की आँख में
तैरते सपने हमारे घर।
घर पिता का है पसीना,
घर बहन की राखियाँ हैं,
भाइयों की बाँह पर
ये घर खड़े हैं;
पत्नियों की माँग में
ये घर जड़े हैं।
आपसी सद्भाव, माँ की
मुट्ठियों में
घर कसे हैं,
क्यों भला अचरज
कि अब तक
घर बसे हैं-
गर बचे हैं।

- सेवानिवृत्त प्रोफेसर
दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास एवं
पूर्व खुफिया अधिकारी, इंटेलिजेंस ब्यूरो
208 ए, सिद्धार्थ अपार्टमेंट्स
गणेश नगर, रामंतापुर
हैदराबाद-500013
मोबाइल: +91 8074742572

श्री आनंद पाण्डेय 'तनहा' की गजलें

(1)

जीस्त कैसे हसीन हो जाए,
आदमी जब मशीन हो जाए।
मुतमइन हैं खुलूस से हम तो,
आपको बस यकीन हो जाए।
ख्वाहिशे-नफ्स है यही हरदम,
साथ इक नाजनीन हो जाए।
लोग हैं बे-शुमार दिल में,
कैसे मालिक, मकीन हो जाए।
इश्क नादाँ का हुआ कामिल,
फिर क्यों कोई जहीन हो जाए।
भर गया जिंदगी से दिल अब तो,
मौत शायद मुईन हो जाए।
जन्म होगा कि मगफिरत होगी,
फैसला अब मुबीन हो जाए।
कोई तनहा गजल सुनाए तो,
रूह ताजा-तरीन हो जाए।

(2)

अगर वो खूबसूरत हैं, भली हैं,
हमारी रूह भी तो संदली है।
अभी रफ्तार पकड़ेगी मुहब्बत,
अभी तो वे दबे पैरों तले चली है।
यकीनन आ गए हैं बज्म में वो,
नहीं तो इस कदर क्यों खलबली है।
दुआ, फिर गैब से, माँ ने हमें दी,
हमारी एक मुसीबत फिर टली है।
दिखावा है महज शाइस्तगी यह,
तुम्हारी जब नजर ही मनचली है।
अभी मुँह फेर लेना ऐ कजा तू,
ब-मुश्किल जिंदगी फूली-फली है।
मयस्सर है सभी कुछ जिंदगी में,
कमी पर आपकी बेहद खली है।

(3)

जीवन क्या है, हँसना-रोना,
मौत, मुकम्मल नींद में सोना।
इतने रंज ओ गम दुनिया में,
तुम कुछ करते, ईश्वर हो ना।
मरने जैसा ही होता है,
मायूसी में जीवन ढोना।
मंदिर-मस्जिद तब जाएँ जब,
कर लें पावन दिल का कोना।
पछतावे का साबुन मलकर,
आँसू से, दागों को धोना
दुनियादारी वाजिब है पर,
पहले खुद को खुद में खोना।
हमने खत्म अना कर डाली,
तुम भी थोड़ा सा पिघलो ना।
हम तो खूशबू ही बाँटेंगे,
जितना चाहे खार चुभोना।
क्यों रूठी हो बिटिया रानी,
जल्दी से एक बोसा दो ना।
दिल को वश में कर लेता है,
आँखों का ये जादू टोना।
मैं आऊँगा कहता ईश्वर,
सच बतलाना तनहा हो ना।

(4)

जीस्त की यूँ तो शाम तक पहुँचे,
इश्क में पर सलाम तक पहुँचे।
गुफ्तगू जब हुई निगाहों में,
वस्ल के हम पयाम तक पहुँचे।
रोज उसकी गली में ठहरे हम,
क्या पता कब वो बाम तक पहुँचे।
आखिरश वो हुए पशेमा ही,
लोग जो इंतिकाम तक पहुँचे।
क्यों न मिल बैठकर सुलह कर लें,
मसअला क्यों निजाम तक पहुँचे।
राज ए दिल दोस्त भी मत कहना,
क्या पता यह तमाम तक पहुँचे।
दौर जब इंतिखाब का आया,
हुक्मराँ तब आलम तक पहुँचे।
दर्द कुछ और दे जमाने तू,
शायरी एक मुकाम तक पहुँचे।

(5)

रंज से जो नजात पाना है,
दैर, मस्जिद, शराबखाना है।
आपको देखकर कहा दिल ने,
बस यहीं दिल का ठिकाना है।
दिल, जिगर, जान पर किया कब्जा,
और कितने करीब आना है।
जिस्म हासिल हुआ किराए पर,
मौक का हक ही, मालिकाना है।
रूह कहने लगी कि चलते हैं,
जिस्म पर वार कातिलाना है।
आप अब क्या झलक दिखाएंगे,
या और आजमाना है।
सच यही है कि है नहीं रगबत,
वक्त मिलता नहीं, बहाना है।
रश्क-रंजिश न कीजिए साहिब,
सिर्फ कुछ दिन यहाँ बिताना है।
शौक से हम नहीं हुए तनहा,
वक्त की चाल शातिराना है।

(6)

ईश्वर से पहचान निकालें,
हर बेजा सामान निकालें।
मालिक सरगोशी सुनता है,
फिर क्यों ऊँची तान निकालें।
सीना तान खड़े हैं, हम भी,
लोग अगर तूफान निकालें।
किस्मत पानी फेर रही है,
फिर भी हम अरमान निकालें।
रिश्ते तब भी रूठे रहते,
चाहे अपनी जान निकालें।
हम तो कोशिश करके हारे,
अब रस्ता भगवान निकालें।
वाजिब कीमत मिल सकती है,
आप कभी ईमान निकालें।
कितने मुफलिस हैं बेचारे,
बस दौलत, धनवान निकालें।
ईश्वर के भी खातिर दिल में,
एक जगह सुनसान निकालें।
हम शायर हैं, शक है हमको,
कैसे हम दीवान निकालें।

(7)

दानिश होना माना अच्छा,
दिल थोड़ा दीवाना अच्छा।
हम दिलवालों की खातिर तो,
बस दिल का नजराना अच्छा।
बच्चों के संग बच्चा बनकर,
कुछ तो शोर मचाना अच्छा।
साजिश देखी है महलों में,
अपना ये काशाना अच्छा।
रूखा सुखा हो कितना भी,
घर का आबो-दाना अच्छा।
राह मुहब्बत की चलनी हो,
तो दिल का लुट जाना अच्छा।
साकी इस मय से तो तेरी,
आँखों का पैमाना अच्छा।
रोनी सूरत किसको भाती,
अपने अश्क छिपाना अच्छा।
नफ्ज गुनाहों की दावत दे,
तो हरदम घबराना अच्छा।
बेहतर है तनहा हो जाओ,
मत कहना मर जाना अच्छा।

(8)

मिल चुके हैं गुलाब से पहले,
आपके इंतिखाब से पहले।
हम तेरा ऐतबार कर लेंगे,
मुत्मइन हो जवाब से पहले।
मुंतजिर नींद कह रही है यह,
दूर हो इज्तिराब से पहले।
प्यार का भी सबक जरूरी है,
इल्म की हर किताब से पहले।
थाम लें हाथ दफअतन उनका,
पूछना क्या, जनाब से पहले।
आप में भी नशा कहाँ कम है,
काश आते शराब से पहले।
तब कहीं वो झलक दिखाएगा,
पाक हो ले सवाब से पहले।
जाविदाँ कौन है जमाने में,
पूछ ले हुबाब से पहले।
ऐ खुदा बख्श दे हमें जन्नत,
दश्त, सहरा, सराब से पहले।

(9)

हमें वो दे रहा धोखा मगर धोखा नहीं लगता,
सियासी आदमी कभी सच्चा नहीं लगता।
खबर हर जुर्म की वह देखता है दूरदर्शन पर,
तभी इस दौर का बच्चा हमें बच्चा नहीं लगता।
मियां जब उम्र ढल जाए फिसलने से बचे हरदम,
जईफी के बदन में आज का पुर्जा नहीं लगता।
चलो माना अदब से कह रहा आपको वालिद,
मगर यह शक्ल से तो आपका बेटा नहीं लगता।
कभी मायूस मत होना, न हो ताबीर ख्वाबों की,
गुलों की चाहतों में क्या कभी काँटा नहीं लगता।
हमें वो इंतिहाई चाहता है, जानते हैं हम,
तभी तो रूठकर भी वो हमें रूठा नहीं लगता।
शजर से टूट जाना लाजिमी है जर्द पत्तों का,
बिछड़ना यूँ अजीजों का हमें अच्छा नहीं लगता।
किसी ने आपको रोका खुदा का नाम लेने से,
इबादत कीजिए साहिब यहाँ पैसा नहीं लगता।
हमेशा साथ रखता है, जहाँ के दर्द-खुशियाँ भी,
हकीकत में हमें शायर कभी तनहा नहीं लगता।

(10)

वही तो कहें, क्यों नशा छा रहा है,
निगाहों से मय कोई छलका रहा है।
हमें क्या पता दिल कहाँ जा रहा है,
अभी तो सफर में मजा आ रहा है।
निहाँ मसलहत है नसीहत में उसकी,
जमाना हमें जो भी समझा रहा है।
दिखाने लगा है हमें आज आँखें,
हमारे जिगर का जो टुकड़ा रहा है।
दिखा मत अकड़ तू गरज कर समंदर,
कभी तू भी तो एक दरया रहा है।
लगी एकटक हैं निगाहें सभी की,
अगर हुस्न उरयाँ नजर आ रहा है।
मुहब्बत न की हमने तुमसे खुदाया,
यही एक गम अब हमें खा रहा है।
ठिठक कर सुने हैं हमें लोग अक्सर,
गजल दिल तरन्नुम में जब गा रहा है।
यकीनन उसे गर्दिशों ने सताया,
नहीं शौक से कोई तनहा रहा है।

(11)

दूर कहीं दोस्त पुराने बैठ गए,
पास मुहब्बत से, अनजाने बैठ गए।
जब जब देखा खुशियों से महरूम हमें,
तब तब गम आकर सिरहाने बैठ गए।
जब तक गम बारिश से राहत मिलती,
हम दिल वालों के काशाने बैठ गए।
कौन गवाही देगा, हाकिम ने पूछा,
जितने भी थे लोग सयाने बैठ गए।
हम इस गम से उबरे थे मुश्किल से ही,
तुम फिर आकर आग लगाने बैठ गए।
देखें कब तक पर्दे में वो रहता है,
उसके दर पर हम दीवाने बैठ गए।

(12)

बदन पर अब थकन तारी बहुत है,
जईफी है तो दुश्वारी बहुत है।
मरज का म्यूजियम है जिस्म अब ये,
फनाँ हों, एक बीमारी बहुत है।
जलाने के लिए बस्ती मुकम्मल,
घृणा की एक चिंगारी बहुत है।
वफा के नाम पर करते सितम वो,
दिले नाजुक को लाचारी बहुत है।
हुलसने के लिए माँ के हृदय को,
फजा में एक किलकारी बहुत है।
जमाने से निभाएँ किस तरह से हम,
दिलों में आज हुसियारी बहुत है।
हुए हैं इंतिहाई जुल्म लेकिन,
बशर में आज गमख्वारी बहुत है।
खबर हमको नहीं है इस सफर की,
सफर की किंतु तैयारी बहुत है।
भले छोटी सी है अपनी रियासत,
अदब की ये जमींदारी बहुत है।

- 128/800 - वाई ब्लॉक
किदवई नगर
कानपुर - 208011
मोबाइल: +91 9551221580

प्रदूषण नियंत्रण में वैयक्तिक भूमिका

- सुश्री सना सिंह -

मैं इस लेख के माध्यम से संक्षेप में यह स्पष्ट करना चाहती हूँ कि प्रदूषण क्या है? इसके नियंत्रण की आवश्यकता क्यों है और प्रदूषण नियंत्रण में व्यक्तिगत भूमिका की कितनी संभावनाएँ हैं?

वातावरण में आवांछित पदार्थो का मिलना या घुलना प्रदूषण कहलाता है। उदाहरण के लिए जल में औद्येगिक विषाक्त तत्वों का मिलना, जल की शुद्धता के लिए हानिकारक होता है और इससे जल प्रदूषित हो जाता है। हमारे आस पास की हवा, जमीन और जल में मौजूद हानिकारक पदार्थ, जिनकी वजह से हमारे स्वास्थ्य और पर्यावरण पर प्रतिकूल असर पड़ता है, प्रदूषण कहलाता है।

प्रदूषण कई प्रकार के होते हैं। जोर की आवाज, तेज प्रकाश अथवा बहुत अधिक ताप भी प्रदूषण हैं। इस प्रकार प्रदूषण मुख्यत: वायु, प्रकाश, भूमि, रेडियो धर्मी, जल इत्यादि में होने से मनुष्य एवं अन्य जीवधारियों तथा पेड़-पौधों एवं वनस्पतियों पर प्रभाव पड़ता है। यदि हम अपने ज्ञान के आलेक को और विस्तार देंगे तो पाएँगे कि प्रदूषण का प्रभाव स्वास्थ्य संबंधी अवांछित समस्याओं से लेकर जलवायु परिवर्तन व पृथ्वी के ध्रुवों पर जमी बर्फ पर भी पड़ता है, जो बहुत ही विनाशकारी है। प्रदूषण हमारे परिस्थितिकी तंत्र की जैव-विविधता को भी नष्ट करता है।

प्रदूषण का आरंभ मुख्यत: वैयक्तिक स्तर से ही होता है और आगे चलकर इसका विस्तार सामाजिक स्तर तक हो जाता है। इसलिए प्रदूषण का नियंत्रण भी मूलत: व्यक्तिगत स्तर पर ही शुरू किया जाना चाहिए। व्यक्तिगत स्तर पर हमें अपनी जीवन शैली और उन आदतों में परिवर्तन लाने की आवश्यकता है, जिनका प्रदूषण नियंत्रण पर नकारात्मक असर होता है। उदाहरण के लिए अगर घर का गंदा पानी नालियों के माध्यम से तालाब के पानी को प्रदूषित करता है, तब हमारा पहला कर्तव्य यह बनता है कि बिना शोधन के पानी को तालाब में जाने से रोकें। व्यक्तिगत स्तर पर ही संसाधनों के अपव्यय को कम किया जा सकता है, जैसे बिजली का अपव्यय कम करके हम प्रदूषण नियंत्रण में सहयोग कर सकते हैं। व्यक्तिगत स्तर पर प्रदूषण नियंत्रण हेतु निम्नलिखित कदम उठाए जा सकते हैं।

- सार्वजनिक वाहनों (जैसे बस, रेल, इत्यादि) का ज्यादा से ज्यादा प्रयोग कराना चाहिए। पैदल चलने और साइकिल का उपयोग स्वास्थ्य के लिए अच्छा होने के साथ प्रदूषण नियंत्रण में भी सहयोग देता है।
- हमें अपने घर के साथ-साथ सार्वजनिक स्थानों को भी साफ व स्वच्छ रखना चाहिए। जहाँ-तहाँ कचरा नहीं फैलाना चाहिए।
- सबको यह समझाने की आवश्यकता है कि खाने-पीने की चीजों के रैपर्स को, जो मुख्यत: प्लास्टिक के बने होते हैं, उन्हें जहाँ-तहाँ नहीं फेंकना चाहिए।
- पुनर्नवीनीकृत सामानों का अधिक उपयोग करना चाहिए।
- जल व अन्य संसाधनों को व्यर्थ नहीं करना चाहिए।
- जैविक रूप से गल जाने वाले पदार्थो से बने झोलों व थैलियों का उपयोग करना चाहिए। इसके इस्तेमाल से पर्यावरण की रक्षा होती है।
- वृक्षारोपण करना और उन वृक्षों की सेवा करने से प्रदूषण नियंत्रण होता है।
- ऊर्जा के अक्षय स्रोतों जैसे कि सौर ऊर्जा, पवन ऊर्जा आदि का अधिकतम उपयोग करने से प्रदूषण नियंत्रण में सहयोग मिलता है।
- इस्तेमाल की हुई हानिकारक चीजों जैसे बैटरी, कीटनाशक आदि का ठीक से निपटारा करना चाहिए।
- जनसंख्या नियंत्रण प्रदूषण को कम करने में सहायक है, क्योंकि अधिक आबादी के लिए अधिक संसाधनों की जरूरत होती है, जिससे प्रकृति व पर्यावरण पर अधिक भार पड़ता है।
- रेफ्रिजरेटर व एयर कंडीशनर का कम से कम उपयोग करना चाहिए, क्योंकि इनसे निकलने वाली एफ सी क्लोरो फ्लोरो कार्बन गैस वातावरण में विद्यमान ओजोन परत को क्षति पहुँचाती है।
- शोर से ध्वनि प्रदूषण फैलता है। अत: शोरगुल फैलाने वाली गतिविधियों को रोकने का इंतजाम करना चाहिए।
- सार्वजनिक सवच्छता अभियानों आदि से जुड़कर काम करने से क्षेत्रीय प्रदूषण कम होता है।
- प्रदूषण नियंत्रण सिर्फ सरकार की ही नहीं बल्कि, व्यक्ति विशेष की भी जिम्मेदारी है।

अंत में महात्मा गांधी के इस कथन से लेख का समापन किया जा सकता है कि 'पृथ्वी वायु भूमि और जल हमारे पूर्वजों से ली गई विरासत नहीं है, बल्कि हमारे बच्चों से लिया गया ऋण है। इसलिए हमें इसे उस प्रकार सौंपना होगा, जिस प्रकार वह हमें सौंपी गई थी।'

- आठवीं 'डी'
दिल्ली पब्लिक स्कूल
उक्कुनगरम
विशाखपट्टणम - 530032

स्वरोजगार हेतु सामर्थ्य विकास

- सुश्री एन मल्लिका पद्मा -

प्रस्तावना:

स्वरोजगार का अर्थ ही है, रोजगार के लिए किसी अन्य पर आश्रित न रहना। सरकार की अपेक्षा है कि हम सभी अपनी क्षमता के अनुसार उद्योग लगा कर स्वयं एवं देश के अन्य नागरिकों का विकास करें। आज प्राय: सभी लोग आविष्कारों व तकनीकों से परिचित हैं और अपने चिंतन से आविष्कारों व विचारों के जन्मदाता भी हैं। इस वैज्ञानिक युग ने मनुष्य के जीवन को एक परिष्कृत जीवन शैली दी है। मानव सभ्यता में आरंभ से आज तक बहुत बदलाव हुए हैं। आज की स्थिति पहले की अपेक्षा सर्वथा भिन्न व सुविधापूर्ण है। आदिम कालीन मनुष्य को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। उनका जीवन इतना सरल व सुविधापूर्ण नहीं था। उन्हें कदम-कदम पर नित नई कठिनाइयों का सामना करना पड़ता था। परंतु इन कठिनाइयों ने ही तो उन्हें अपने जीवन को सरल व सुविधापूर्ण बनाने के लिए प्रेरित किया है। धीरे-धीरे वे अपनी खोजों व आविष्कारों से अपने जीवन में बदलाव लाने लगे, जिसका नतीजा आज का वैज्ञानिक युग है।

वर्तमान में, हमारे देश की सबसे बड़ी समस्या बेरोजगारी और बढ़ती जनसंख्या है। सरकारी नीतियों एवं बदलती सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों के कारण देश में सरकारी नौकरियाँ कम होती जा रही हैं और शिक्षित-बेरोजगार नौजवानों की संख्या बढ़ती ही जा रही है। इससे बेरोजगारी का मुद्दा सबसे बड़ा मुद्दा बन गया है।

इस मुद्दे का समाधान करने हेतु स्वरोजगार की तरफ ध्यान देना बहुत जरूरी है। आखिर स्वपोषण हेतु कुछ तो करना होगा, बल्कि स्वरोजगार तो ऐसी युक्ति है जो स्वपोषण तक ही सीमित न होकर सर्वपोषण का भाव भी रखती है। स्वरोजगार से मनुष्य कर्मठ और अनुशासित भी बनता है।

स्वरोजगार बनने हेतु आवश्यक लक्षण:

स्वरोजगार स्थापना हेतु हममें कुछ विशेष लक्षण जरूर होने चाहिए। गहरी सोच, आत्मविश्वास, कठिन परिश्रम, दृढ़ संकल्प, समस्याओं से निवटने का हुनर, समाज और कार्यक्षेत्र की पूरी जानकारी आदि इसके लिए आवश्यक तत्व हैं।

कहा जाता है कि 'आवश्यकता ही आविष्कार की जननी है।' यह बात स्वरोजगार के मामले में भी मार्गदर्शक का काम करती है। सबसे पहले हमें बाजार की आवश्यकताओं का आकलन करना चाहिए। फिर तदनुसार अपनी क्षमता व संसाधनों पर विचार करना चाहिए। स्वरोजगार के मामले में देश, काल, परिस्थिति बहुत महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। आवश्यक सामग्री, जगह, दक्ष व आवश्यक लोगों की उपलब्धता आदि का प्रबंध भी इसके मुख्य घटक हैं। हालाँकि स्वरोजगार के लिए सरकार की ओर से कई प्रकार की रियायतें व ऋण भी दिए जाते हैं।

चुने हुए क्षेत्र को कैसे चलाना है:

पहले जिस चीज को बनाने का निर्णय किया है, उसे अच्छी तरह तैयार कराने और बाजार में उसकी पैठ बनाने के लिए प्रशिक्षित व लगन शील व्यक्तियों को काम पर लगाना और बाजार में इसे बेचने के लिए संबंधित संस्थाओं से आर्डर पाना और समय पर उत्पादों का डेलिवरी करना।

स्वरोजगार से लाभ:

- नौकर से उद्यमी बनना बेहतर है।
- इसमें आय की संभावनाएँ असीमित होती हैं।
- स्वरोजगार में लगा व्यक्ति सदा सक्रिय रहता है और अपने विचारों को कार्यान्वित करता है।
- उद्यमी व्यक्ति स्वतंत्रतापूर्वक कार्य कर सकता है एवं काम करने का वातावरण अपने अधीन रख सकता है।

हानियाँ:

- उद्यमी पर उत्तरदायित्व का अधिक भार होता है।
- उसे अपना काम दूसरों को सौंपना कठिन होता है।
- उपयुक्त ढंग से कार्य संपादन का दायित्व होता है।
- सीमित समय में अधिक उत्पादकता का बोझ होता है।
- उद्यमी व्यक्ति सदा सीखता रहता है।

उपसंहार:

स्वरोजगर व्यक्ति देश की शक्ति होता है। स्वरोजगारी से देश की आर्थिक व्यवस्था मजबूत होती है। इससे बेरोजगारी घटती है। स्वरोजगार वाला समाज एवं देश प्रगति के रास्ते पर चलता है। इसलिए देश के युवाओं को देश व स्वयं के विकास हेतु स्वरोजगार की ओर उन्मुख होना चाहिए।

- कक्षा - 10 वीं,
विशाखा विमला विद्यालयम,
वी सी रोड, पेद्दागनटेयडा,
विशाखपाट्टणम - 44

बात की बात

- श्रीमती सुधा गोयल -

बतरस के कारण बातों-बातों में बात चल निकली। सात समुंदर पार जाते-जाते बेबात बात का बतंगड़ बन गया और बात हाथापाई तक पहुँच गई। सात-सात पुश्तें बखानी गई। बातों का सिलसिला वहीं थम गया, जहाँ से शुरु हुआ था। बातों ने बहुतों की बखिया उधेड़ी, कुछ ने बात एक कान से सुनी, दूसरे से निकाल दी। हर बात को जेहन में रखना जरूरी भी नहीं है।

बात के धनी और बात के पक्के लोग भी होते हैं। प्राण जाएँ, पर बात न जाए। मैं सोचती हूँ - बातों के धनी के पास बातों का खजाना होता है। झूठी-सच्ची गल्प गढ़-गढ़कर लोगों को सुनाकर उनका मनोरंजन करते रहते हैं। ऐसे लोग शायद विदूषक की श्रेणी में आते हैं। ऐसी मनगढंत कथाओं से हमारा पुराण साहित्य भरा पड़ा है।

लोग इधर वायदे करते हैं, उधर भूल जाते हैं। नेता और संत इस समुदाय में ज्यादा आते हैं। वैसे भूलना एक बीमारी है, जिसे एल्जाइमर कहते हैं, लेकिन डाक्टर भी इसका इलाज नहीं कर सकते। यह बीमारी ज्यादातर बुढ़ापे में होती है। पर आजकल युवा, बच्चे, अधेड़, बुजुर्ग सभी इस बीमारी से ग्रस्त हैं। कोई कब तक इलाज करेगा और कराएगा। पूरा समाज ही दिग्भ्रमित है। कुछ सचमुच भूल जाते हैं और कुछ भूलने का बहाना करते हैं।

तभी कहा जाता है कि बातें हैं, बातों का क्या? क्या पता कब कहाँ क्या मूड बन जाए और जुबान फिसल जाए। लोग दवा की तरह कान में बात भी डाल देते हैं, जो कभी अपना भरपूर असर दिखाती है और कभी बेकार की गल्प बनकर रह जाती है।

बातें भी खूब बनती हैं, छनती भी हैं, गोया पकौड़ियाँ हों। अब बात है तो बनाने के लिए या बताने के लिए ही। इसमें कुछ भी जमा खर्च नहीं होता। बस जरा नमक-मिर्च के साथ परोस दो। अपना तो अपना, पड़ोसियों का जायका भी बदल जाएगा। चटपटी बातें चटखारे लेकर कही और सुनी जाती हैं। बेशक चटखारे के चक्कर में लाखों का नफा-नुकसान हो जाता है। कानाफूसी कर बात किसी को न बताने का वायदा कपूर की तरह उड़कर अपनी सुगंध या बू फैला देता है। इतना बोलो कि बात का बतंगड़ न बने। ऐसे लोग कान के कच्चों की जमात में आते हैं और अपने बड़बोलेपन के कारण लोगों से दूरी बनाये रखते हैं।

अब बातों में से बात निकली है तो मैं भी एक बात बता दूँ। जरा ध्यान से सुनना। कुछ लोग केवल बातों का खाते हैं, यानि उनके पास कोई काम-धंधा ही नहीं होता। बात जरा इधर-उधर सरकाई कि पौ बारह। लगाई-बुझाई वाले भी इसी श्रेणी में आते हैं। पर इन्हें सटौरिए कहना ज्यादा समीचीन होगा। कुछ लोग कचहरी में झूठी गवाही देकर गीता-रामायण की कसम खाकर पेट पालते हैं। पापी पेट का सवाल है, कैसे भी भरे।

जवानी जमा-खर्च से करोड़ों-अरबों के बारे-न्यारे हो जाते हैं। हाथ कंगन को आरसी क्या और पढ़े-लिखे को फारसी क्या? बात को परख कर देखिए। हींग लगेगी न फिटकरी - सब कुछ साफ हो जाएगा। बात की बात भी रह जाएगी और बात भी बन जाएगी। साँप भी मर जाएगा और लाठी भी न टूटेगी। बातों का भ्रम बना रहेगा।

जी हाँ, काना बाती या कनबतिया का भी खूब चयन है। लोग कान में फुसफुसाते रहते हैं। अब ज्यादातर मोबाइल पर फुसफुसाते हैं। लाखों मील दूर लोग फुसफुसा कर बातें कर लेते हैं। आजकल प्रेमी-प्रेमिका, बहू-बेटियाँ केवल फुसफुसा रही हैं और अपने परिवार का सत्यानाश कर रही हैं।

वक्त बदल गया, लेकिन चलन नहीं गया। मैं बातूनी नहीं हूँ। जो सच है, वही बता रही हूँ। पूरब के लोग बैंगन को भी 'बताऊ' कहते हैं। भला 'बैंगन' और 'बताऊ' का क्या संबंध?

खैर, मुझे क्या? मुझे तो अपनी बात कहनी थी। सो छाती ठोंक कर कह दी। कोई बुरा माने मेरे ठेंगे से। पर मैं ने कहा क्या, आपने समझा क्या, मुझे भी फुसफुसा कर बता देना। वरन् लोग बात ले उड़ेंगे और बात का बतंगड़ बनते देर नहीं लगेगी।

- 290-ए, कृष्णा नगर
बुलंद शहर-203001
मोबाइल: +91 9917869962

ढोल की तान

- श्री संदीप शर्मा -

'लोहड़ी का महीना है। यही महीना हमें अच्छी कमाई देता है। वरना अब किसे समय है ढोल की तान पर भंगड़ा करने का?' करतारे ने बिस्तर पर पड़े-पड़े सोचा। पिछली रात वह देर रात घर लौटा था, शराब के नशे में धुत्त होकर। किसी बड़े जमींदार के लड़के की शादी थी।

पहले तो घंटा भर बाहर ही खड़ा रहा, क्योंकि सभी नौजवान लड़के-लड़कियाँ डीजे की धुनों पर नाच-गा रहे थे। करतारा बेचारा छोटा सा मुँह करके बड़ी देर तक सिर्फ ताक रहा था। इस डीजे ने उसकी दुनिया उजाड़ रखा है। उसे सिर्फ अपनी दिहाड़ी और फिर शराब की सबसे सस्ती बोतल की चिंता थी, जिसे गटकने के लिए ही तो वह घंटों अपने गले में ढोल को लटकाए रखता है।

आखिर उसे आवाज पड़ ही गई। करतारे के ढोल में डीजे के गानों के बाद अब वह रंग नहीं रहा, फिर भी वह ढोल को पूरे दम से पीट रहा था। अगर लड़कों ने शराब के घूँट नहीं चढ़ाए होते, तो फिर उसकी दिहाड़ी भी न पड़ती। लड़के के बाप ने आखिर में करतारे को सौ की पत्ती दे गया और लड़कों ने तो सिर्फ दस-दस के दो-चार नोट दिखाए। चलो... सौ-डेढ़ सौ तो उसने बना ही लिया।

करतारा अपना सा मुँह लेकर अभी गली से निकला ही था कि डीजे की आवाज फिर गूँज उठी। इस आवाज ने मानो उसे भाले से फाड़ दिया हो। वह अतीत में चला गया, 'जब कभी जमींदारों के लड़के खुशी के मौकों पर खूब पीकर नाचते थे, तब फिर यह नहीं देखते थे कि जेब में से दस का नोट निकला या फिर पचास का। लेकिन अब ढोल के धुनों का डीजे ने सत्यानाश कर दिया है', विचार मंथन करते वह घर आ गया।

सत्तू की आवाज सुनकर करतारे के विचार बिखरे। सत्तू बड़ा सा स्टील का गिलास लिए सामने खड़ा था। सत्तू बोला, 'ले बापू चाय पी लै।' करतारा ने पूछा, 'सत्तू, अज तू स्कूल ता नहीं जाणां ना?' सत्तू ने जवाब दिया, 'लोहड़ी दी छुट्टी है बापू।' 'तां फिर अज मेरे नाल चल पैंणा, शहर अंबरसर मजे विच रहेगा।' करतारा चाय पीते-पीते बोला।

सत्तू खुशी से नाच उठा। उसे यह ख्याल ही नहीं रहा कि आज शाम उसे गाँव में अपने दोस्तों संग घर-घर लोहड़ी माँगने भी जाना है। सत्तू ने पीछे से माई की कुरती पकड़ कर कहा, 'माई अज में बापू नाल शहर जाणां है।' माई झट से बोल पड़ी, 'ओए पगला... न बे सत्तूआ! तू किथे भटकेगा शहर विच?' पर सत्तू कहाँ माना, 'मैं तां जरूर जाणा है माई।' और फिर वह अपनी बड़ी बहन गुड्डी को बताने दौड़ पड़ा।

सत्तू को मालूम था कि यदि वह यहाँ रहेगा तो जमींदारों के मोहल्ले में पूरा दिन घर-घर जाकर लोहड़ी माँगनी पड़ेगी। एक घर से रुपए-दो रुपए तब मिलते हैं, जब तक कि दस-बारह लोहड़ियाँ न सुना दें। वो आंटी जो दस लोहड़ियों के लिए दस रुपये दिए थे, वो शायद इस बार घर पर ना मिले। कई तो ऐसे ही लोहड़ियाँ गँवाते हैं और फिर बिना पैसों के ही टरका देते हैं। दो चार रेवड़ियाँ या मुट्ठी मूँगफलियों से दस-बारह लड़कों का भला क्या बनता है? रात तक हिस्से में दस-बारह रुपए ही आते हैं और उन्हें भी बड़े लड़के मिलकर ले जाते हैं। सत्तू ही बेचारा उमर में सबसे छोटा है और लोहड़ियाँ भी वही सबसे ज्यादा गाता है। क्योंकि लोहड़ियाँ भी सबसे ज्यादा उसे ही आती हैं। बापू ने सिखाई हैं उसे बहुत सारी। उसके बापू को तो पचासों लोहड़ियाँ आती हैं।

सत्तू अभी ख्यालों में ही खोया था कि बापू ढोल उठाकर बरामदे में उसकी रस्सियाँ कसने लगा। उसने जल्दी-जल्दी हाथ-मुँह धोया और वो कोट पहन लिया, जो उसकी मासी ने उसे पिछले साल दिया था। शायद मासड़ का बहुत पुराना कोट होगा? कोट ने तो उसे घुटनों तक ऐसा ढक रखा था, मानो अब पायजामे या पैंट की जरूरत ही न थी। पर सत्तू को भला कौन टोकता कि वह कोट में अच्छा नहीं लग रहा है।

> बस चलते ही सत्तू खिड़की के पास बैठ गया और शहर की रोशनियों को निहारने लगा। एक ओर रोशनियाँ उसे आकर्षित कर रही हैं तो दूसरी ओर माई और गुड्डी का प्यार खींच रहा था। वह मन ही मन सोच रहा था कि बस से उतरते ही वह तांगे में बैठेगा और जाते ही माई से लिपट जाएगा। गुड्डी तो मारे जलन के उससे थोड़ी देर तक बात ही नहीं करेगी और फिर धीरे से पास आकर पूछेगी, 'क्या-क्या देखा सत्तू शहर में? मेला कैसा था? हरमंदिर साहब कैसा है?' अब वह जवाब के चक्कर में फँस गया है।

सत्तू, बाप की नजर बचाकर जल्दी से जग्गू और मनिंदर को बताने निकल गया। वे दोनों लड़कों के झुंड में कंचे खेल रहे थे। सत्तू के पाँव जमीन पर पहले ही न थे। उसे कंचे कहाँ खेलने थे। उसे तो बस सबको यह बताकर हीरो बनना था कि वह आज

शहर जा रहा है, अमृतसर... और वह भी लोहड़ी के मेले में। उसकी बातें सुनकर जलन के मारे लड़के कंचे खेलना भूल सा गए। इधर सत्तू का छोटा सा ख्वाब बड़ा आकार लेने लगा। शहर में बड़े-बड़े घरों को देखेगा, बसें, कारें, रेलगाड़ी, चौड़ी सडकें, पुल, हरमंदिर साहब और लोहड़ी का मेला और न जाने क्या क्या।

वह अभी तक गया कहाँ था अमृतसर। माई कहती है कि जब वह छोटा था तो उसे हरमंदिर साहब नहलाने ले गए थे, पर सत्तू को कुछ भी याद नहीं। वह हर बार याद करने की कोशिश करता। लेकिन उसे कुछ याद नहीं आता। वह शहर की छवि को अपने मन में बनाता रहता है। लेकिन थक-हार कर कोई स्पष्ट छवि नहीं बना पाता। आज वह दिन आया है, जब वह अपने इस गाँव से बाहर कहीं निकलेगा।

लड़कों ने सत्तू को एक-दो बाजी खेलने के लिए उकसा ही लिया। पांच छ: कंचे थे उसकी जेब में, सब हार गया, वह भी दो-चार मिनटों में ही। आज उसका मन कंचे जीतने में नहीं लग रहा था। आज तो वैसे भी वह शहंशाह था। उसका तो मन कर रहा था कि अपने कंचों को ऐसे ही सब में बाँट दे। यही सत्तू कभी एक कंचे के लिए भी हाथापाई कर लेता था, वही आज जेब खाली करके जल्दी से घर लौट आया।

बापू खाना खा चुका था और दोपहर के लिए मोटे पराठे, जिन पर घी तो नहीं लगा था, पर हाँ माई ने उनमें अचार रखकर ढक दिया था, उन्हें कपड़ों में बांध रहा था। सत्तू ने एक पराठा थाली से उठाया और गटक गया। माई मुँह देखती रह गई, सत्तू हल्की मुस्कान बिखेर कर माँ को रीझ लिया। माई ने कहा, 'सुन लो जी सत्तू दे बापू! देखो सत्तू किन्ने चाव नाल चलया है। तुहाडे नाल जल्दी घर परत आवीं ते शराब नाल अपना मुँह काला न करीं, तैने सत्तू दी कसम है।'

करतारा उफन गया, 'तू मैंनू शराबी समझया है! अपने उपदेशां नू अपने कोल रख, चल भई सत्तू! चलिये शहर।' सत्तू ने पानी तक भी न पिया और चल पड़ा पीछे-पीछे। माई दूर तक सत्तू को जाते देखकर खुश होती रही।

इधर सत्तू के पाँव जमीन पर नहीं लग रहे हैं। वह बड़े दिनों के बाद तांगे पर बैठा था। उसका मन कह रहा था कि घोड़ा इतना तेज भागे कि वह जल्दी से शहर पहुँच जाए। उसे इस बात का ख्याल तक नहीं आया कि वह एक शराबी बाप के साथ काम पर जा रहा है। दो-तीन किलोमीटर का रास्ता पता ही नहीं चला कि कब खत्म हो गया। एक छोटा सा कस्बा आया। बीस-पच्चीस दूकानें होंगी वहाँ। यहाँ से अमृतसर के लिए बस मिलनी थी। 'यहाँ से सिर्फ दो घंटे का सफर है।' करतारा ने बातों ही बातों में सत्तू को बताया।

सत्तू को मनपसंद खिड़की वाली सीट मिल गई। वह बाहर झाँकने लगा। दूर-दूर तक फैले गेहूँ और सरसों के खेत दिखाई दे रहे थे, पर उसकी आँखें तो सिर्फ शहर के लिए तड़प रही थीं। थोड़ी ही देर में करतारा ने इशारा करते हुए सत्तू के ध्यान को बदला, 'वह देखो! बड़े-बड़े मकान व कोठियाँ..., अब अमृतसर आने वाला है।' फिर तो सिर्फ कोठियाँ ही कोठियाँ और लोग ही लोग दिख रहे थे।

बस अड्डे से उतर कर सत्तू के बापू ने बस अड्डे के साथ लगते मोहल्ले की ओर रास्ता नाप लिया। सत्तू समझा कि शायद यहाँ से हरमंदिर साहब का रास्ता सीधा है। उसने बापू से नहीं पूछा। एक एक कोठी को झाँकते हुए आगे बढ़ता रहा। सत्तू बस इस इंतजार में था कि बस अब हरमंदिर साहब आने ही वाला है।

दोपहर होने वाली थी। एक कोठी में काफी लोग जमा थे। करतारा झट से कोठी में घुस गया और ढोल बजाना शुरू कर दिया। पंजाबी लोग ढोल की तान से प्यार करते हैं, चाहे कोई भी बजाए, इसलिए सत्तू के बाप को कुल **50-60** रुपये लगे हाथ ही मिल गए। सत्तू बस देखता ही रहा। करतारा का चेहरा खिल गया था। उसके मुँह को रुपयों का खून लग गया था और इधर सतू ने अभी पानी का एक घूँट भी न पिया था। उसने कोठी वालों से मिले दो लड्डू खा तो लिए, पर पानी के बिना सूखे मुँह से वे निगले भी नहीं जा रहे थे।

बापू जल्दी ही एक और कोठी में घुस गया। वहाँ सिर्फ दस का ही नोट मिला। फिर तो एक के बाद एक, कई कोठियों में घुसते-निकलते रहे। सत्तू पीछे-पीछे चल रहा था, पर उसे यह समझ नहीं आ रहा था कि ये सब हो क्या रहा है? मानो उसका बापू ढोल बजाने के लिए पागल हो गया था। सत्तू के मन में रह-रह कर हरमंदिर साहब का ख्याल आ रहा था। लेकिन बापू की हरकतों को देखकर उसका मन रोने को हो रहा था। पीछे भागते हुए वह बापू...बापू... तो बोलता रहा, लेकिन बापू उसकी पुकार कहाँ सुन रहा, उसे तो रुपये इकट्ठे करने की पड़ी है। आज एक साल बाद यह सुनहरा मौका हाथ आया है। भला सत्तू की कौन सुनता? बापू को तो यह भी याद नहीं रहा कि पीछे-पीछे सत्तू भी भाग रहा है।

बीच-बीच में बापू ने लोहड़ी गाना भी शुरु कर दिया था, बड़ी बड़ी कोठियों में। बापू ने सत्तू को भी लोहड़ी गाने को कहा, 'ओए सतुआ लोहड़ी गा ले, इन घरों में तेरे को अलग से पैसे मिलेंगे। गाँव में तो पैसों के लिए तुम लोग रात तक भटकते फिरते हो।' उसने बापू की बात सुन तो ली, पर लोहड़ी गाने का उसका जरा भी मन नहीं किया। कभी वह एक रुपए के लिए **20-20** लोहड़ियाँ फट से गा देता था।

वह बोला 'बापू! हरमंदिर साहब वाले मेले कब चलना है? बड़ी देर हो गई।' 'हुण, बस कर पुत्तर, कुछ लोहड़ियाँ गा ले,

कुछ पैसा कमा ले, फिर मेले से कुछ खरीद लेना। वह बापू के बहकावे में आ गया। मेले के नाम पर सत्तू के गले से लोहड़ियों की माला निकलने लगी और जेब में कुछ नोट भी आ गए जो कोठी वालों ने उसे अलग से दिए।

कोई तीन चार बज गए होंगे सत्तू ने गली के सरकारी नल से पानी तो पी लिया, पर भूख के मारे वह तड़प रहा है। वह बापू को पकड़ कर चिल्लाया, 'मैंनू भुख लगी है बापू। मैंनू मेले जाणां है।' एक जोर का थप्पड़ उसके मुँह पर पड़ा, 'तैंनू दिखदा नहीं, अज चार पैसे कमाण दा मौका हथ आया है और तू सालया मेले दी गल करता है।' सत्तू जोर-जोर से रोने लगा। करतारा चिल्लाया, 'दो-चार घरों में कमा लेने दे, आगे अच्छे पैसे मिलने वाले हैं। तू अपना मुँह बंद कर, नहीं तो वापस घर चला जा। सत्तू अब भी सिसक रहा था।

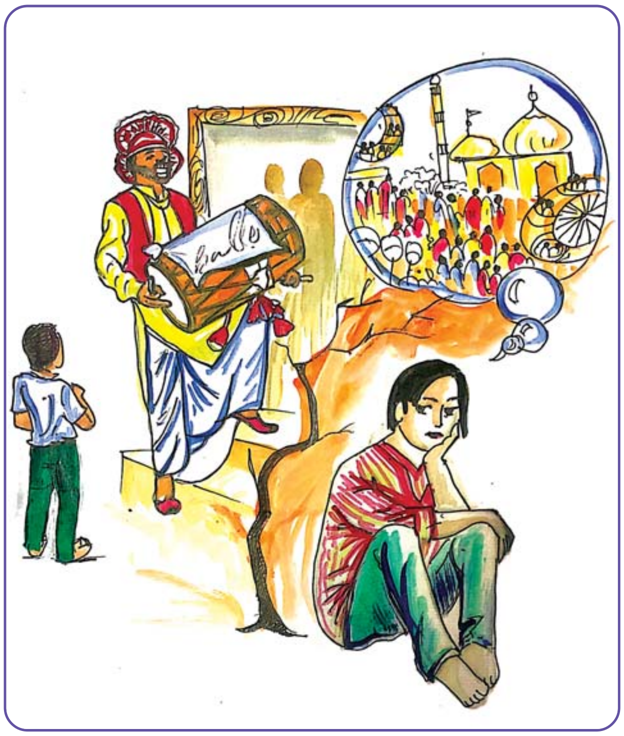

उसने गुस्से में पराठे वाला थैला नाली में फेंक दिया, फिर पड़ा उसे एक और थप्पड़। किसी ने पीछे से सत्तू के बापू को रोका 'क्यों मारदा ओए मरासिया नियाणे नू?' करतारे ने अपना हाथ रोक लिया। सत्तू की आँखें व चेहरा मलने के बाद भूतों जैसा हो गया था। बाप-बेटे एक दूसरे से खफा से हो गए। लेकिन बाजार में बिक रही मिठाइयाँ, जलेबियाँ, समोसे, छोले-भटूरे आदि की खुशबू से वह पागल हुआ जा रहा था।

उसने सारी मार भूल कर बापू का हाथ पकड़ लिया, 'बापू कुछ खिला दे बड़ी भूख लगी है।' करतारा ने पास की दूकान से उसे चने-समोसे और मिठाई दिला दी। सत्तू ने फटाफट जब गटक लिया। दूकानदार ने प्रसाद के रूप में दो जलेबियाँ भी दे दीं। सत्तू अब सारे दुख भूल गया। चलो! दोस्तों से कहने के लिए उसके पास यह तो है कि उसने शहर की सबसे बड़ी दूकान में समोसे और जलेबियाँ खाई है।

करतारा ने अपना सिलसिला जारी रखा। सत्तू सारी कहानी समझ गया था। अब क्या हरमंदिर साहब... क्या मेला...। अब न उसे शहर में कोई दिलचस्पी रही थी, न मेले में, न हरमंदिर साहब में और न ही बापू में। उसे तो अब सिर्फ अपना गाँव व अपनी माई याद आ रही है। वह बस यही सोच रहा है कि कोई उसे उड़ा कर ले जाए माई के पास, उसको अपने दोस्तों का ख्याल भी आ रहा था कि वे इस वक्त मजे से लोहड़ी माँग रहे होंगे और अब तक तो उनकी जेबें सिक्कों से भर गई होंगी? उनकी सिक्कों की खनक के आगे उसकी अपनी जेब में पड़े नोट, कम भारी लग रहे हैं।

पर करतारे पर अभी भी पैसों की धुन सवार थी। सत्तू ने बापू से कहा, 'बापू! रब वास्ते घर चल पड़ो, मुझसे अब नहीं चला जाता।' सत्तू की बात सुनते ही बापू गंदी गालियाँ बकने लगा। 'तेरे को क्या बीमारी है, अभी तो टाइम है दो पैसे कमाने का और तुझे घर की पड़ी है?' सत्तू सुबकने लगा। उसका मन कर रहा है बापू को यहीं छोड़कर घर की ओर भाग चले। रुपए तो हैं जेब में उसके, बस का किराया हो ही जाएगा। घर पहुँच कर माई के हाथों की रोटी खाएगा। लेकिन मारे डर के वह ऐसा भी न कर सका। क्योंकि पता नहीं बस अड्डा कहाँ पीछे छूट गया है। इसलिए वह चुपचाप चलता रहा।

दस-पंद्रह और घरों में ढोल बजाने के बाद बापू का नोटों का नशा खत्म हुआ। वह सत्तू के सिर पर हाथ रखकर बोला, 'चल हुण सत्तू घर चलिए।' सत्तू को एक खुशी का बड़ा प्यारा एहसास हुआ। उसे सारे दुख भागते दिखे तो वह चहक उठा। अब शहर की रोशनियाँ उसे बड़ी प्यारी लगने लगी हैं। उसे सिर्फ माई व बहन दिखाई दे रही है। पर वह क्या बताएगा अपनी कहानी में? पाँच-छः गलियों का जैसे पता ही नहीं चला।

बस लगी थी अड्डे में, शायद आखिरी ही थी। बस चलते ही सत्तू खिड़की के पास बैठ गया और शहर की रोशनियों को निहारने लगा। एक ओर रोशनियाँ उसे आकर्षित कर रही हैं तो दूसरी ओर माई और गुड्डी का प्यार खींच रहा था। वह मन ही मन सोच रहा था कि बस से उतरते ही वह तांगे में बैठेगा और जाते ही माई से लिपट जाएगा। गुड्डी तो मारे जलन के उससे थोड़ी देर तक बात ही नहीं करेगी और फिर धीरे से पास आकर पूछेगी, 'क्या-क्या देखा सत्तू शहर में? मेला कैसा था? हरमंदिर साहब कैसा है?' अब वह जवाब के चक्कर में फँस गया है। उसने इरादा बनाया कि गुड्डी को सब झूठ-झूठ बता देगा।

बस से उतरने के बाद एक मुसीबत उसका इंतजार कर रही थी, जिसका अंदाजा न करतारे को थी और न सत्तू को। बस स्टाप के चारों ओर अंधेरा था। सिर्फ दो-तीन दूकानें ही खुली

थीं। वहाँ पर चार-पाँच लोग बैठे थे।

सत्तू का बापू दूकानों की ओर चल पड़ा। सत्तू ने सोचा- शायद मिठाई लेनी होगी। उसने तब तक तांगे को ढूँढ़ना चाहा, लेकिन वहाँ कोई तांगा नहीं था। वह घबराने लगा, तीन चार किलोमीटर पैदल कैसे चलेगा? तांगे तो पहले ही जवाब दे चुकी हैं। पर माई, गुड्डी व घर पहुँचने की जल्दी में उसे थकावट की कोई परवाह नहीं रही। अभी वह सोच ही रहा था कि उसने देखा कि बापू मिठाई वाली दूकान पर चार-पाँच लोगों के बीच बैठ गया है और अपने सामने एक बोतल रख ली है।

सत्तू को लग गया कोई मुसीबत आने वाली है। 'ओए मोहण, देणा जरा मुंडे नू दो अंडे... खाण नू, दो-चार सानू भी दे दे ओए सतुआ! आजा ऐथे बैठ जा चलदे हां घर, जरा थकावट ता मिटा लइये।' बकते हुए बापू ने जल्दी से गिलास में शराब भरकर गटक ली। दूसरे आदमी तो न जाने कितने पी चुके थे।

सत्तू को अंडे जहर लग रहे थे। वह अंडे पसंद तो बहुत करता है, लेकिन जिस हालत में अभी वह है, उसमें कैसे उन्हें निगलता। भूख के मारे उसका हाल तो बुरा था। वह बोल पड़ा 'बापू हुण घर चल पड़ो।' करतारे ने विनम्र होकर कहा, 'ओए चलदे हां, तैंनू हुण बड़ी काहली पई है।'

सत्तू फिर खामोश हो गया। वह दूर अंधेरे को घूरता रहा। कभी-कभार सड़क से कोई गाड़ी पूरी रफ्तार से निकल जा रही थी। सत्तू सोचने लगा कि कोई गाड़ी उसके गाँव की ओर ही निकल पड़े तो फिर वह भी उसमें बैठ कर चुपचाप निकल जाए इस शराबी बापू को छोड़ कर।

बापू ने जल्दी ही आधी बोतल खत्म कर दी। सत्तू फिर उठा, 'बापू हुण चल पइए।' उसका बापू गुस्से में बोला, 'ओए चुपकर सालेया, थोड़ी जिही पीण दे हुण, घर किहड़ा बड़ा दूर है, ओए मोहण दे इहनू दो अंडे होर, इसदा मुँह चुप करा।' वह दो अंडे सत्तू के सामने फिर रख गया। उसने फिर बिना मन के अंडे निगल ही लिए। पल भर में ही सत्तू का बापू पूरी बोतल गटक गया।

अब सिर्फ दूकान वाला, सत्तू और उसका बापू ही बचे थे। जैसे ही उसका बापू उठा, वह पूरी तरह झूलते हुए गिरते-गिरते बचा। सत्तू डर के मारे काँप गया। उसका मन रोने को करने लगा। वह चल तो पड़ा बापू के पीछे। लेकिन अब गिरा... अब गिरा..., यही देखता रहा पीछे-पीछे। करतारे कोई पंजाबी गीत गाने लगा, लेकिन उसका गीत जैसे सत्तू के कानों में तलवार की तरह चुभ रहा था। वह इधर-उधर देखता। कच्ची सड़क के दोनों ओर की झाड़ियाँ जैसे उसे भूतों जैसी लगतीं। वह फिर तेज कदमों से बापू के साथ हो जाता। पत्थर की ठोकर खाकर सत्तू का बापू धड़ाम से नीचे गिर गया। उसने दो-तीन गालियाँ बकीं और फिर उठने की कोशिश करने लगा। लेकिन उससे उठा नहीं जा रहा था, ढोल दूर गिर गया।

वह घुटनों के बल उठता और फिर पसर जाता। सत्तू का सहारा भी उसे उठा नहीं पाया। सत्तू जोर-जोर से रोने लगा। वह रोते-रोते बापू को उठाने की कोशिश तो करता रहा, लेकिन एक बच्चा अधमरे शराबी के बोझ को कैसे उठाए। सत्तू अभी भी सुबक-सुबक कर रोए जा रहा था। वह काफी देर लगा रहा उठाने में, फिर बापू आखिर उठ ही पड़ा और लड़खड़ाते हुए दौड़ चला। ढोल बड़ी मुश्किल से सत्तू ने गले में लटका लिया। अभी दो-चार कदम ही चला था कि फिर गिर गया। सत्तू ने फिर से उठाने की जी भर कर कोशिश की। लेकिन बापू जैसे बेसुध सा पड़ गया था।

अब तो सत्तू पर जैसे पहाड़ गिर पड़ा। वह बापू को जोर-जोर से झकझोरने लगा, लेकिन बापू पर कोई असर नहीं हुआ। देसी शराब की खुमारी ने उसे किसी दूसरी दुनिया में पहुँचा दिया था। सत्तू ने अब तक अपना पूरा जोर एक शराबी बाप को उठाने में लगा दिया था। लेकिन अब तो करतारा एक अधमरी लाश बन गया था, सत्तू उसे कैसे उठाता? रात का सन्नाटा उसके रोने की आवाज को भी आगे बढ़ने नहीं दे रहा था। सभी देवताओं की गुहार लगाकर देख लिया था उसने। कोई देवता भी उसकी मदद को आगे नहीं आ रहा था, मानो वे भी किसी शादी की पहली लोहड़ी में कबाब उड़ाने गए हों।

सत्तू बेचारा रोने के सिवा और क्या कर सकता था? वह अधमरे बापू के साथ चिपक कर बैठ गया था। मारे डर के उसका सारा शरीर काँप रहा था। ठंड भी तो थी। एक अदना सा कोट ठंड से क्या मुकाबला करता।

उसे दुनिया के सारे डरावने व बुरे ख्याल ही आ रहे थे। उसकी नन्हीं सी जान जैसे मारे डर के शरीर के किसी कोने में छिप गई थी। चारों ओर उसे भूत ही भूत नजर आ रहे थे। सत्तू के सामने पड़ी ढोल भी अब खामोश थी, मानो करतारे की थाप न पाने की वजह से वह भी असहाय हो चुकी थी। सत्तू बड़ी देर तक उस ढोल को कातर दृष्टि से निहारता रहा, जिस ढोल की थाप पर उसका बापू भाव-विभोर हो जाता था, जिसकी शोहरत गाँव व शहर हर जगह थी। धूल-धूसरित रास्ते पर बिछे पड़े करतारे का शरीर ठंडा पड़ चुका था। पर डरा-सहमा बेचारा सत्तू इसे समझ नहीं पा रहा था। उसके कानों में करतारे की ढोल की तान पुनः गूँजने का आभास हुआ। उसने अपने कानों को अपनी बंद कर लिया।

- हाउस नं.618, वार्ड नं.1
कृष्णा नगर, हमीरपुर
हिमाचल प्रदेश-177001
मोबाइल: +91 9418178176

मंडूक

- डॉ दादूराम शर्मा -

मैं मंडूक हूँ - प्रकृति की नेमत, प्रकृति के जीवन के मूल स्रोत प्रावृट् का - वर्षा का अनथक चारण - समूह में रहकर प्रशस्तिगीत गाने वाला, स्वागत में अपने, अपने समस्त बंधुओं के साथ एकतार जयकार करने वाला, अपने भीतर के ही नहीं, धरती के अतल अमूर्त उल्लास को मूर्त कर देने वाला, निराकार का साकार विग्रह, सृष्टि रचयिता के मन का - उसकी सृजनेच्छा-सिसृक्षा का बाहर उछल पड़कर भीतर अगाध जलराशि में डूबकर - डुबकी लगाकर उसे सहस्त्र-सहस्त्र किंवा कोटि-कोटि नहीं, नहीं, अगणित रूपों में रूपायित कर देने वाला 'मंडूक'। 'ऋग्वेद' के मंत्रद्रष्टा ऋषि ने यही ध्वन्यात्मक नाम दिया है मुझे। हिंदी के 'मेंढक' का भी यही ध्वन्यात्मक अर्थ निकलता है, तो अंग्रेजी के Frog का अर्थ भी विशाल सामूहिक रूप में प्रकट होकर गतिशील सृजनशीलता का प्रकटीकरण ही होता है।

कोयल प्रकृति में ऋतुराज वसंत के रूप में प्रकट बाह्य उल्लास को अपने एकाकी स्वर में कूक द्वारा प्रकट करती है। कई कोयलें उल्लसित प्रकृति के साथ एक स्वर में झूमझूमकर गा उठती हैं। लेकिन अकेले-अकेले! वे समूह में एकसाथ एक स्वर में नहीं गातीं। कोयल मंजरित सौरभ की शाखाओं में बैठकर भी गाती है और वसंत के उल्लास और मादक प्रभाव से सर्वथा अछूते, सर्वदा नीरस, परपीड़क, परगात्रबेधक कंटकों से आवृत बबूल या करील पर भी बैठकर अपने भीतर हिल्लोलित हर्षातिरेक को अपनी कूकों से प्रकट करती है। वह औरों को क्या मिल रहा है, कितना मिल रहा है अथवा मिल भी पा रहा है या नहीं - इसकी परवाह किए बिना अपनी ही मौज में मस्त गा उठती है, अर्थात उसके आंतरिक उल्लास का संबंध बाह्य जगत् से होता भी है और नहीं भी होता। किंतु मैं तो तभी गाता हूँ, जब निराकार सृष्टि विधाता की सृजित साकार सृष्टि का पोर-पोर जीवन से लबालब भर जाता है तभी। अकेले तो बहुत कम, सबके साथ मिलकर एक साथ उल्लसित होकर उत्सव मनाते हुए गाता हूँ।

> हममें से कोई 'गोमायु' गाय की सी आवाज में टर्राता है, तो कोई 'अजमायु' - बकरे के से स्वर में टर्राता है, कोई भेड़, भैंस आदि की आवाज में टर्राते हैं। विविध ध्वनियों से अपने-अपने स्वरों को सजाते हुए यज्ञों में मंत्रोच्चारण करते हुए 'स्वाहा' के उद्घोष के साथ आहुति देने वाले 'होता' ब्राह्मणों के स्वर की तरह हमारा धीर-गंभीर घोष निनादित हो उठता है।

कई वर्षों से अवृष्टि या अल्पवृष्टि की पीड़ा झेल रही धरती ने इस वर्ष भरपूर वर्षा का तोहफा पाया है और परमात्मा के प्रति अपनी अशेष कृतज्ञता का प्रकटीकरण है हमारा यह समूह गान। शरद् ऋतु से लेकर वर्षभर वर्षा के लिए अपने बिलों में चुपचाप निश्चेष्ट पड़े समाधिस्थ हुए कठोर तपस्या (तप: साधना) में लीन रहकर आषाढ़ के प्रथम दिन जैसे ही सजल जलधर अनंत आकाश में दिखाई देते हैं और उनसे झरने वाली प्रथमोदक की सुधाप्लावित बूँदें आतपतप्त धरा का संस्पर्श करती हैं, हम सब समूह में एकत्र होकर 'पर्जन्यजिन्विता (मेघों की प्रिय या मेघों को प्रिय लगने वाली) वाणी से अपने अपार जलदान से धरा को परितृप्त कर देने वाले, याचका धरा के भिक्षापात्रों - कूपों, नदी-नालों और तालाबों को लबालब - छलकते तक भर देने वाले जलधर जलदों के प्रशस्ति-गीत गा उठते हैं:

> 'सम्वत्सरं शशयाना ब्राह्मणा व्रतचारिण:।
> वाचं पर्जन्य जिन्वितां प्र मण्डूका: अवादिषु:।।'
>
> - ऋग्वेद 10/14/1

हम वर्षा को मंडित करने वाले (मंडति मंडयंति इति मंडिता:) धरित्रि को मंडित करने के लिए - (मंडपिक) नवजीवन से समलंकृत करने के लिए भेजे गए सृष्टि-स्रष्टा के संकल्प के स्मारक प्रकट विग्रह हैं - मूर्त रूप हैं - 'एकोऽहं वहु स्याम प्रजेयम्' के परमात्मा के - परमसत्ता के सर्जक बीज (वीर्य) को धारण करने वाली प्रकृति रूपी महद्योनि (ब्रह्म) और परब्रह्म परमात्मा - 'तासां ब्रह्म महद्योविरहं बीजप्रद: पिता' (गीता) से जन्मे जगत के असंख्य जीवों के रूप में विस्तार के प्रत्यक्षीकरण को दर्शाने वाले परम पिता के अवदान के प्रति अशेष कृतज्ञता ज्ञापित करने वाले स्वर शब्द हैं। सम्राटों के भी सम्राट के बिना मोल खरीदे गए चरण हैं, बिना दाम के गुलाम हैं। हम वर्षा के अलंकार हैं, उसके स्वर संभार हैं, चराचर के उल्लसित कंठहार हैं, जगत् के संचार हैं, मृतकों को भी नवजीवन देने वाली सुधा धार हैं, म्रियमाणों में भी नवजीवन के संचार हैं, हम मंड हैं - सबकी खुशी के उफान और इजहार हैं। अवसाद, हताशा, हतवीर्यता के वारण हैं, सर्वजीवनदायिनी वर्षा के चारण हैं।

तुलसी ने अपने विश्वविश्रुत महाकाव्य 'रामचरितमानस' में वर्षा ऋतु वर्णन प्रसंग में लिखा है-

> 'दादुर ध्वनि चहुँ ओर सुहाई।
> वेद पढ़हिं जनु बटु समुदाई।।'

वर्षाकाल में जलप्लावित जलाशयों में टर्राते मेंढक-समुदाय

की वातावरण में - विशेष रूप से रात के सन्नाटे में - नीरव-निस्तब्ध प्रकृति को मुखर बना देने वाली, समयानुकूल-अवसरानुकूल सभी के मनों को उत्फुल्ल और हृदयों को हर्षित करने वाली सुंदर - सुरीली ध्वनि 'टर्राहट' नहीं, 'सुहाई', 'सुहानी' (अच्छी लगने वाली) ध्वनि सुनकर ऐसा प्रतीत होता है, मानो प्रकृतिरूपी 'गुरुकुल' में अध्ययनरत वटुसमुदाय - उपनयन संस्कार से संस्कारित ब्रह्मचारी छात्रगण समूह में मिलकर एकस्वर में वेदपाठ कर रहे हों।

जिन्होंने 'वेद' नहीं पढ़े थे, 'ऋग्वेद' का 'मण्डूकसूक्त' नहीं देखा था, वे सोच रहे थे कि गोस्वामीजी ने हमारी, हम मेंढकों की उपमा 'वेदपाठरत वटुसमुदाय' से देकर हमें बहुमान दिया है। किंतु हमें वैदिक युग में 'देवता' की श्रेणी में रखकर वर्षा के कारक, प्रकृति के उपकारक, वर्षा के अलंकार हमको पूर्व से ही प्राप्त सम्मान का उपमा के रूप में स्मरण किया है।

किंतु उसी तुलसी ने अपनी उत्तरकालीन प्रौढ़ कृति 'दोहावली' में - 'तुलसी पावस के समय धरी कोकिलन मौन, अब तो दादुर बोलिहैं, हमें पूछिहैं कौन?' लिखकर हमारे परंपरा प्राप्त सम्मान पर पानी फेर दिया है। परंतु जरा गंभीरता से विचार कीजिए कि यह कवि की एक कथन शैली है - 'अन्योक्ति' है, जिसमें 'कोकिलन'- कोयलें - सज्जनों की, सत्पुरुषों की प्रतीक है, जिनकी समाज में संख्या बहुत थोड़ी है और वे बिखरे हैं - समुदाय में नहीं रहते और समुदाय में हो भी तो भीड़ में अकेले ही होते हैं और 'दादुर' समुदाय में मिलजुलकर एकजुट रहते हैं, एक साथ बोलते हैं - प्रतिवाद करते हैं, जयकार या धिक्कार - जिंदाबाद या मुर्दाबाद - करते हैं, अर्थात जो भी करते हैं एकमतेन पूरी शक्ति और जोर लगाकर, इसीलिए सभी उनकी सुनते हैं। भले ही इनकी आवाज बेसुरी और कर्णकटु हो, तव कोयलों को तो चुप रहना ही पड़ता है। अत: इसमें हमारे अपमान की, हमारी शान के खिलाफ गुश्ताखी करने जैसी कोई बात है ही नहीं।

'ऋग्वेद' के दशम मंडल के चौदहवें सूक्त 'मंडूक' के मंत्रद्रष्टा महर्षि वशिष्ठ ने हमें 'देवता' की संज्ञा दी है। 'देवता' या 'देव' की परिभाषा या व्युत्पत्ति इस तरह की गई है - 'देवों दानाद् द्योतनाद् दीपनाद्वा' - अनपेक्ष या निरपेक्ष भाव से अर्थात् बिना प्रतिदान की अपेक्षा के दूसरों को देने वाला, जैसे मेघ, पृथ्वी द्योतित या प्रकाशित होने वाला जैसे सूर्य, अग्नि और प्रकाशित करने वाला जैसे सूर्य, विद्युत, अग्नि (अग्नि दीपक की लौ बनकर अंधकारित कक्ष को प्रकाशित करती है, अंधेरे में अदृश्य वस्तुओं को दृश्य बनाती है) अथवा व्यक्ति या वस्तुओं के अप्रकट या गुप्त गुणों को प्रकट करने - प्रकाश में लाने वाला 'देवता' है। मंत्रद्रष्टा महर्षि ने हमें 'देने वाला' होने के कारण 'देवता' कहा है। हम चराचर प्रकृति को - जगत् को नवजीवन का संदेश देते हैं, उनमें अभंग उत्साह का संचार करते हैं, उनकी 'जीजीविषा' को जगाते ही नहीं, उसे परिपुष्ट भी करते हैं, वर्षा के महद अवदान से उन्हें परिचित कराते हैं, उनके अप्रकट गुणों को प्रकट करते हैं और सबसे बड़ी बात यह कि प्रचंड-असह्य के आतप और 'ऊष्मा' उमस का - हमारे क्षेत्र की बोली में बेचैनी बढ़ाने वाली असहनीय गर्मी को 'ऊखम', जो कि 'ऊष्मा' का तद्भव रूप है, कहा जाता है - उसी तरह जैसे 'धर्म' का तद्भव रूप 'धाम' हो गया है - 'घाम हूमें चाँदनी की द्युति दमकति है'(-'सेनापति' का शिशिर वर्णन) से अभितप्त (झुलसे हुए) अभितप्तमयोऽपि भजते मार्दवम् - अत्यधिक तपाया गया 'अयरू' लोहा, फौलाद भी 'मार्दव' (मृदुता, कोमलता) लेता है, और 'संतप्त' (गर्मी से बेचैन, बेहाल, बुरी तरह तपाए गए पदार्थ या जीवित चराचर प्राणी - 'संतप्तानां त्वमसि शरणं पयोद' - (मेघदूत, कालिदास) होने के कारण मृतप्राय प्रकृति के कण-कण को, पोर-पोर को 'नवजीवन' से संपृक्त कर देते हैं, अवसाद को अमित उल्लास में बदल देते हैं, घोर निराशा को अभंग आशा और उल्लास में रूपायित कर देते हैं। 'पर्जन्य' देवता द्वारा मुक्तहस्त से प्रदत्त जलराशि के संजीवन संस्पर्श से 'सूखी मसक' (चमड़े से बनी 'मोट' जो कुँए से बैलों की सहायता से सिंचाई के लिए पानी निकालती है या चमड़े की बड़ी थैली, जिसमें भिश्ती पानी भरकर लाते थे और लोगों को पिलाते थे) के समान शुष्क जलाशयों में निर्जीव - जैसे पड़े हम लोगों में जैसे पुनर्जीवन का संचार हो जाता है, 'वत्सिनी' (वत्सवती अर्थात बछड़े वाली) गौएँ जैसे अपने बछड़ों के साथ रंभाती अन्य सवत्सा रंभाती गायों से मिलकर हर्षोत्फुल्ल होकर उच्च तार स्वर करती हैं। उसी तरह हमारा - वर्षा के स्वागत में उसके प्रशस्ति-गीत गाने से हम मेंढकों का गंभीर घोष समस्त भूमंडल में परिव्याप्त हो जाता है। प्रथम वर्षेदिक-क्लिन्न (पहली सवर्षा के जल से = इसे हमारी क्षेत्रीय बोली में दोंगरा कहते हैं।) मलिक मोहम्मद जायसी ने 'पद्मावत' महाकाव्य में 'दवँगरा' - 'दृष्टि दवँगरा मेरवहु आनी' कहा है। दोंगरा से भींगे चितकवो, हो आदि 'विविध वर्णी' हम मंडूक प्रकृति को अपने-अपने गंभीर घोष वर्षा के जयनाद, वर्षा के जयगान से वायुमंडल को आपूरित कर देते हैं। हममें से कोई 'गोमायु' गाय की सी आवाज में टर्राता है, तो कोई 'अजमायु' - बकरे के से स्वर में टर्राता है, कोई भेड़, भैंस आदि की आवाज में टर्राते हैं। विविध ध्वनियों से अपने-अपने स्वरों को सजाते हुए यज्ञों में मंत्रोच्चारण करते हुए 'स्वाहा' के उद्घोष के साथ आहुति देने वाले 'होता' ब्राह्मणों के स्वर की तरह हमारा धीर-गंभीर घोष निनादित हो उठता है। मंत्रद्रष्टा ऋषि हम गोमायु, अजमायु हरिव और प्रश्नि मेंढकों से अपने लिए अपनी समस्त सृष्टि के लिए समृद्धि और विकास माँग रहा है, आरोग्यवर्धक ओषधियाँ माँग रहा है, 'घटोहनी' (घड़े जैसे

बड़े ओभा) वाली, 'ओभा' दूध की थैली, जिस में दूध भरा रहता है, जिसे थनों से निकाला जाता है, दुग्धवती, दुग्धस्रावी गाएँ माँग रहा है -

'गोमायुरदाद् अजमायुरदात् प्रश्निरदाद्धरितो नोवसूनि।
गवां मंडूका ददतः शतानि सहस्त्रावे प्र तिरन्त आयुः।।
- 'ऋग्वेद' 10/14/10

हे धरापुत्र मनुष्यों! महर्षि वेदव्यास ने 'नहि मानुषात् श्रेष्ठतरं हि किंचित्' कहकर तुम्हें त्रिलोक में विधाता की सर्वश्रेष्ठ संरचना बताया है। 'सृजन' तुम्हारी मूल प्रकृति है, निर्माण तुम्हारा स्वभाव है। फिर मोहवश उसे भूलकर तुम विनाश और विध्वंस में क्यों प्रवृत्त हो गए? 'माता भूमिः पुत्रोऽहं पृथिव्यः' की उद्घोषणा करके धरती में जितने भी चर-अचर या चेतन-अचेतन, दृश्य-अदृश्य प्राणी हैं, सतत सृजनशील प्रकृति है, सभी को तुमने अपना सहोदर स्वीकारा है - भाई-बहन माना है। तुम्हारा ही तो आत्मीय परिवार है यह सब। यह सतत सृजनशील और नित्य नूतन श्रृंगार करने वाली प्रकृति भी तो तुम्हारी सहोदरा है। उसका निर्मम दोहन कर उससे केवल ले-लेकर, किंतु बदले में उसे कुछ न देकर तुम उसके शत्रु बन बैठे हो। तुम उसका संरक्षण-पोषण और संवर्धन करते तो वह स्वयं 'जीवन हीन' होती हुई तुमसे तुम्हारा जीवन क्यों छीनती? क्यों अवृष्टि और अनावृष्टि का तांडव होता? - सूखा और अकाल पड़ता? अभी भी समय है, चेत जाओ मेरे बंधुओं! अन्यथा निरंतर निकट आते सर्वनाश से कोई तुम्हें बचा नहीं पाएगा। तब तो यह धरती ही कहाँ रह जाएगी? इसलिए सतत वृक्षारोपण करके इस धरती को हरी-भरी बनाओ और घनघोर वर्षा होने दो। जल संग्रहण करके जलाशयों को हमारे आवास योग्य बनाओ, ताकि हम जीवन के जयनाद से वायुमंडल को निनादित करते रहें।

- महाराज बाग, भैरवगंज
जिला - सिवनी
मध्य प्रदेश
मोबाइल: +91 8839475245

वृद्धाश्रम

- डॉ सीताराम गुप्ता -

घर बहुत बड़ा नहीं तो छोटा भी नहीं था, लेकिन अब छोटा लगने लगा था। बच्चे बड़े होने लगे थे और माता-पिता और अधिक बूढ़े। वैसे भी यदि मन में जगह न हो तो कितना ही बड़ा महल क्यों न हो छोटा ही पड़ता है। पिता की मृत्यु हुई तो लगा, उनकी जगह बाकी लोगों को मिल जाएगी। सबके लिए थोड़ा-थोड़ा स्पेस तो बढ़ ही जाएगा। लेकिन माँ और बाबूजी के कमरे में तो ऐसी कोई जगह दिखलाई ही नहीं पड़ी, जिसका बाकी लोग इस्तेमाल कर सकें। पता नहीं, माँ और बाबूजी दोनों कैसे रहते थे इतनी कम जगह में? बच्चे बड़े हो रहे थे, अतः उनकी उपेक्षा संभव नहीं थी। तय पाया कि माँ को किसी अच्छे से वृद्धाश्रम में भेज दिया जाय। इस तरह के अच्छे फैसलों की तामीर में समय भी कम लगता है। अतः फौरन माँ का सामान पैक करके उन्हें रुखसत कर दिया गया। ये मत जानिए कि उनकी रुखसती के वक्त घर के लोगों को दुःख नहीं हुआ, पर मजबूरी थी। हाँ, सबसे ज्यादा दुःख माँ को था परिवार से दूर जाने का, अपने पोते-पोती से अलग होने का। लेकिन उसने कोई शिकायत नहीं की। बेटा भला था, अतः बीच-बीच में समय निकाल कर माँ से मिल आता था। माँ इसी से प्रसन्न रहने का प्रयास करतीं।

कुछ समय के बाद एक दिन वृद्धाश्रम से फोन आया कि 'माँ की तबीयत ठीक नहीं है, जल्दी आइए।' बेटा वृद्धाश्रम पहुँच तो पाया कि माँ की तबीयत बहुत ही खराब है। वह मरणासन्न अवस्था में थी। बेटा यह देखकर बहुत दुःखी हुआ। उसने माँ से गर चलने की विनती की। लेकिन माँ ने कहा कि वह यहीं ठीक है।

बेटे ने माँ से पूछा, 'माँ यदि तुम्हारी कोई इच्छा है तो बताओ, मैं पूरी करने की कोशिश करूँगा।' माँ ने कहा, 'बेटा! यहाँ वृद्धाश्रम में कुछ पंखे लगवा दो।' बेटे ने दुःखी होकर कहा, 'माँ यहाँ पंखे नहीं थे तो तुमने पहले क्यों नहीं बताया? इतने दिनों तक नाहक परेशान रहीं।'

माँ ने कहा, 'बेटा मैंने तो ये कष्ट सह लिया, लेकिन जब तुम्हारा बेटा तुम्हें यहाँ छोड़कर जाएगा तो तुम यह कष्ट नहीं सहन कर सकोगे। तुम्हें बचपन से ही पंखे, कूलर और ए.सी. में रहने की आदत है। यदि यहाँ वृद्धाश्रम में पंखे नहीं लगे तो मैं तुम्हारे कष्ट के बारे में सोच-सोचकर बेचैन रहूँगी और आराम से मर भी नहीं पाऊँगी।'

- ए.डी.-106 सी, पीतम पुरा
दिल्ली-110034
मोबाइल: +91 9555622323

आओ भाषा सीखें

वर्तमान में जल संकट गंभीर समस्या बनी हुई है। इस वर्ष देश के लगभग सभी राज्यों में भूमिगत जल स्तर की कमी महसूस की गई है। इस समस्या से निजात पाने के लिए लगभग सभी स्तरों पर ठोस उपाय किये जा रहे हैं। पहले की अपेक्षा जनमानस भी इस दिशा में जागृत हुआ है। 'सुगंध' के वर्तमान अंक में भी इसी विषय को लेकर निम्नलिखित संवाद बनाया गया है। आशा है कि पाठक हमारे इस प्रयास से संतुष्ट होंगे।

गोलू : अरे मोलू! यह क्या बना रहे हो?

గోలూ : అరే మోలూ! యహ్ క్యా బనా రహే హో?

గోలూ : అరే మోలూ! ఏం చేస్తున్నావు?

गोलू : अरे मोलू! एम् चेस्तुन्नावु?

Golu : Hey Molu! what are you doing?

मोलू : वही, बरसाती पानी को बचाने के लिए गड्ढा।

మోలూ : వహీ, బర్‌సాతీ పానీ కో బచానే కే లియే గడ్ఢా.

మోలూ : అదే, ఇంకుడు గొయ్యి.

मोलू : अदे, इंकुडु गोय्यि।

Molu : I am making a pit for rain water harvesting.

गोलू : इन गड्ढ़ों में जब बरसाती पानी पहुँचेगा तो भूमिगत जलस्तर बढ़ेगा।

గోలూ : ఇన్ గడ్ఢోఁ మేఁ జబ్ బర్‌సాతీ పానీ పహుంచేగా తో భూమిగత్ జల్‌స్తర్ బఢేగా.

గోలూ : వర్షపు నీరు ఈ ఇంకుడు గొయ్యలలోకి చేరితే భూగర్భ జల స్థాయి పెరుగుతుంది.

गोलू : वर्षपु नीरु ई इंकुडु गोय्यललोकि चेरिते भूगर्भ जल स्थायि पेरुगुतुंदि।

Golu : When the rain water is filled in this pit, the ground water level would improve.

मोलू : गोलू! क्या ये गड्ढ़े हर साल साफ करवाते रहना है?

మోలూ : గోలూ! క్యా యే గడ్ఢే హర్ సాల్ సాఫ్ కర్‌వాతే రహ్‌నా హై?

మోలూ : గోలూ! ఇంకుడుగొయ్యలు ప్రతి సంవత్సరం శుభ్రం చేయిస్తూ ఉండాలా?

मोलू : गोलू! इंकुडुगोय्यलु प्रति संवत्सरम् शुभ्रम् चेयिस्तू उंडाला?

Molu : Golu! whether these pits are to be cleaned every year.

गोलू : हाँ, इससे पानी ठीक से छनकर नीचे तक पहुँचेगा।

గోలూ : హాఁ, ఇస్‌సే పానీ ఠీక్ సే ఛన్‌కర్ నీచే తక్ పహుంచేగా.

గోలూ : అవును, అప్పుడు నీరు బాగా ఫిల్టరయి కిందికి చేరుతుంది.

गोलू : अवुनु, अप्पुडु नीरु बागा फिल्टरयि किंदिकि चेरुतुंदि।

Golu : Yes, then only the water gets filtered and reaches to the bottom levels of earth.

मोलू : तब चलो, बाकी लोगों को भी इसके प्रति जागरूक करेंगे।

మోలూ : తబ్ చలో, బాకీ లోగోఁ కో భీ ఇస్‌కే ప్రతి జాగరూక్ కరేంగే.

మోలూ : అయితే పద, మిగిలిన వాళ్ళల్లో కూడా దీనిపట్ల అవగాహన పెంచుదాం.

मोलू : अयिते पद, मिगिलिन वाल्लल्लो कूडा दीनिपट्ल अवगाहन पेंचुदाम्।

Molu : Ok then, let's spread awareness amongst remaining people.

गोलू : चलो!

గోలూ : చలో!

గోలూ : పద!

गोलू : पद!

Golu : Let's go.

सुगंध का नया अंक मिला। देखने में अच्छा लगा। पाठ्य सामग्री भी बहुत अच्छी है। परंतु परफेक्ट बाइंडिंग की वजह से पत्रिका पठन-मैत्री नहीं है। पढ़ते समय पकड़ कर न रखा जाए तो स्वतः बंद हो जाती है।

- *श्री संजय कुमार जायसवाल,* विशाखपट्टणम

आंध्र के हिंदी रचनाकारों के नाम समर्पित 'सुगंध' का अंक प्राप्त हुआ। हिंदी भाषा के गौरवमयी विकास यात्रा में तेलुगुभाषी रचनाकारों की भूमिका को रेखांकित करना बेहद सुखमय लगा। इस अनुकरणीय कार्य से देश व हिंदी साहित्य में आंध्र के हिंदी सेवियों का इतिहास स्थापित तो हुआ ही है, साथ ही हिंदी भाषा व उसके साहित्य के दायरे का फैलाव भी हुआ है। अच्छी कहानियों व कविताओं से भी रुबरु होने का मौका मिला। आभार।

- *श्री एस पापा राव,* विशाखपट्टणम

आंध्र के हिंदी सेवियों को समर्पित 'सुगंध' का अंक बहुत अच्छा लगा। भारत के दिग्गज लेखकों की सुंदर छवियों से सजे मुखपृष्ठ से ही यह बहुत आकर्षित करता है। सामग्री के विषय में तो क्या लिखूँ? बहुत से कारणों से यह अंक मात्र पठनीय ही नहीं, बल्कि संग्रहणीय भी हो गया है। इस अंक से तेलुगु भाषी हिंदी साहित्यकारों से परिचय भी हुआ और अटल जी, नीरज एवं प्रेमचंद पर केंद्रित लेख भी बहुत अच्छे लगे। 'मारीशस में हिंदी का महाकुंभ' लेख ने वहाँ की यादों को ताजा कर दिया। संपादकीय में 'कृत्रिमता एक बोझ' का आपका संदेश घर-घर तक पहुँचे, यही कामना है।

- *श्रीमती क्रांति कनाटे,* वड़ोदरा

आपके संपादन में पत्रिका निरंतर निखर रही है, विभिन्न प्रकार की सामग्री, नयनाभिराम मुखपृष्ठ एवं रोचक पाठ्य सामग्री से पत्रिका की छवि बढ़ी है। संपादकीय संदेश मननीय है। 'सुगंध हमेशा नयापन लिए होता है। संपादकीय टीम को बधाई।

-श्री चक्रधर शुक्ल, कानपुर

आपके कुशल व यशस्वी संपादन में प्रकाशित प्रतिष्ठित पत्रिका 'सुगंध' का अंक 16/2 प्राप्त हुआ, एतदर्थ हार्दिक धन्यवाद। इस अंक का संपादकीय आलेख आपके गहन चिंतन का जागृत जीवन दर्शन है। वस्तुतः इसमें सहज-सरल जीवन जीने का संदर्शन-संदेश है। सत्य तो यह है कि सहज, सरल होना सबसे कठिन कार्य है, किंतु वही देवत्व का प्रथम सोपान है। अंक के सभी शोध-बोधपरक, ज्ञानवर्धक आलेख, रोचक-प्रेरक-उद्‌बोधक कहानियाँ एवं रचनाएँ इसे पठनीय ही नहीं बल्कि संग्रहणीय भी बनाते हैं। डॉ सत्यलता का आलेख 'तेलुगुभाषी हिंदी साहित्यकारों की गौरवगाथा' इस अंक की विशेष उपलब्धि है।

- *डॉ भानुदत्त त्रिपाठी, 'मधुरेश',* अंबेड्करनगर

स्मरण रखने व पत्रिका भेजने के लिए हार्दिक आभार। काफी खूबसूरत अंक है यह। इसमें छपी तकनीक से जुड़ी सामग्री काफी ज्ञानवर्धक व सामयिक हैं। यह अंक पठनीय के साथ-साथ संग्रहणीय है। संपादक मंडल को बधाई।

डॉ वीरोत्तमा पातर, राँची

सुगंध का नया अंक बेहद खूबसूरत है। इसका संपादकीय विशेष जानकारी एवं विमर्श पूर्ण है। चूँकि तकनीक से थोड़ा कम परिचित हूँ, इसलिए तकनीकी लेखों पर मेरा टिप्पणी करना उचित नहीं है। साहित्यिक विधा के अंतर्गत छापे गए लेख, कविताएँ व कहानियों की संख्या कम हैं, पर जो हैं उनमें दम है।

डॉ रामप्यारे प्रजापति, सुल्तानपुर

आवरण पृष्ठ पर साहित्य के ध्रुवतारों को देखते ही पत्रिका पढ़ने की उत्सुकता पैदा हो गई। साथ में भारतेंदु हरिश्चंद्र का हिंदी भाषा का महत्व दर्शाता दोहा संकेत कर रहा था कि अंक में हिंदी भाषा पर विशेष सामग्री होगी और यह बात आगे अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक के संदेश में सिद्ध भी हो गई। उनकी एक बात से सहमत हुआ जा सकता है कि यदि पूरे देश में एक संपर्क भाषा न होती तो शायद आजादी की लड़ाई और लंबी लड़नी पड़ती तथा देश की राष्ट्रीय एकता मजबूत न हो पाती। इस मजबूती के सूत्रधार रहे आरिगपूडि रमेश चौधरी, काजा वेंकटेश्वर राव, बालशौरि रेड्डी जी, जिन्होंने अपने साहित्यक अवदान से हिंदी और हिंदीतर के भेद को मिटाने का भरपूर प्रयास किया। 'संपादकीय' पढ़कर तो ऐसा लगा, जैसे हम गद्य नहीं पद्य पढ़ रहे हैं। किसी विभाग की पत्रिका इतनी साहित्यिक हो सकती है, सोचा न था। लेकिन इस पत्रिका में जिस तरह साहित्यिक सामग्री आई है, वह उस भ्रम को तोड़ रही थी। हिंदी सिनेमा में अपने गीतों की अमिट छाप छोड़ने वाले, कवि सम्मेलनों में श्रोताओं पर जादू-सा असर डालने वाले गोपाल दास नीरज का सुंदर चित्रण, पढ़ना सुखद आनंद से भर गया। डॉ ओमप्रकाश 'मंजुल' के लेख में अटल जी और नीरज जी के इस लौकिक संसार से अलविदा की भविष्यवाणी सत्यसिद्ध होना, विस्मृत कर गई।

डॉ लक्ष्मी शर्मा के लेख को पढ़ने पर पाया कि नुकीले बाणों से सत्ता, व्यवस्था और रूढ़ संस्था पर प्रहार करने वाले हरिशंकर परसाई अपने व्यंग्यात्मक लेखों में जलते परिवेश को बचाने की बात करते हैं। यह लेख एक साहित्यकार के दायित्वों का बोध कराता है। कृष्णवीर सिंह सिकरवार ने अपने लेख में प्रेमचंद पर इतनी जानकारी जुटाई है जितनी शायद आज किसी साहित्यकार के पास हो। डॉ मंजू शर्मा का अमृता प्रीतम पर लिखा लेख तो पढ़ते हुए इतना डूब गया कि मन चाह रहा था, लेख समाप्त ही न हो। हिंदी भाषा पर आपके विभाग द्वारा करवाए गए कार्यक्रमों के चित्र व रिपोर्ट पढ़कर इतना ही कहा जा सकता है कि आप हिंदी भाषा के प्रति पूर्णतः समर्पित हैं और इसके उत्थान के लिए प्रतिबद्ध। पत्रिका के सुंदर अंक हेतु संपादन मंडल को बधाई एवं भविष्य के लिए मंगल कामनाएँ।

- *श्री राधेश्याम भारतीय,* करनाल

अक्षय ऊर्जा विशेषांक के रूप में प्रस्तुत इस अंक में ऊर्जा की बढ़ती माँग और ऊर्जा उत्पादन के पारंपरिक स्रोतों में तेजी से हो रही गिरावट के संबंध में व्यक्त की गई चिंताओं एवं प्रदान की गई विभिन्न प्रकार की रोचक जानकारियों से परिपूर्ण लेख प्रकाशित हैं। प्रकाशित अन्य सामग्री भी पठनीय हैं। यह अंक संग्रहणीय भी है। आशा करता हूँ कि 'सुगंध' के आगामी अंकों में भी विभिन्न विषयों पर रोचक जानकारी हासिल करने का अवसर मिलेगा। उत्कृष्ट कार्य के लिए आपकी टीम को बधाई।

- *कमोडोर (सेवानिवृत्त), बी बी नागपाल,* गोवा शिपयार्ड

लौह व इस्पात उत्पादन को समर्पित सुगंध पत्रिका के सृजनात्मक स्तंभ के लेख एक से बढ़कर एक हैं। 'व्यर्थ से अर्थ कमाता इस्पात उद्योग' लेख ने अत्यंत प्रभावित किया। 'अक्षय ऊर्जा भविष्य का भविष्य' और ऊर्जा की बढ़ती माँग एवं उत्पादन के प्रति अवगत कराने का भरपूर प्रयास किया गया है, यह अत्यंत सराहनीय है। 'सच्चे धुन के हिंदी सेवी' लेख अच्छा लगा। श्री राजेंद्र तिवारी और चक्रधर शुक्ल की 'गजलें और कविताओं' ने मन मोह लिया। 'आओ भाषा सीखें' ज्ञानवर्धक, बहुत ही ज्ञानवर्धक है।

- *एस के गोराई,* बैंगलूर

जरा गौर करें

बात 1902 की है। एक किशोरी ने जब अच्छे अंकों के साथ मैट्रिक की परीक्षा पास करके आगे इंटरमीडिएट में पढ़ने के लिए मद्रास के महाराजा कॉलेज में दाखिला हेतु आवेदन भेजा, तो जन आंदोलन होने लगे। वह तो अच्छा हुआ कि तत्कालीन महाराज ने दूरदर्शिता दिखाते हुए सारे आंदोलनों को दरकिनार कर दिया और उस किशोरी को न सिर्फ उच्च शिक्षा प्राप्त करने की अनुमति दी, बल्कि छात्रवृत्ति भी मंजूर कर दी।

चिकित्सा विज्ञान की अपनी पढ़ाई पूरी करने के बाद वह किशोरी चेन्नई की महिलाओं और बच्चों के एक अस्पताल में हाऊस सर्जन बन गई। बाद में भारतीय महिला संघ के अनुरोध पर मद्रास विधान परिषद की अध्यक्ष बनीं। इसके बाद वह मद्रास विधान परिषद की उपाध्यक्ष भी बनीं, जहाँ उसके विशेष प्रयासों के कारण लड़कियों की शादी की न्यूनतम उम्र 16 तथा लड़कों की 21 वर्ष तक बढ़ी। हालाँकि यह काम इतना आसान नहीं था। इसके लिए उसे कई विरोध सहने पड़े थे।

अब वह लड़की देश व समाज की एक सम्मानित महिला थी। उन्हें राज्य समाज कल्याण सलाहकार बोर्ड का सदस्य बनाया गया। तत्पश्चात उन्हें मद्रास कार्पोरेशन में 'एल्डर वुमन' के रूप में चयनित किया गया। उनके प्रयासों से देवदासी प्रथा पर प्रहार किया गया और अनैतिक यौनाचारों को रोकने हेतु वेश्यालयों को बंद करने का काम किया गया। हालाँकि सामाजिक पूर्वाग्रहों एवं दबावों के कारण उन्हें काफी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा था। देवदासियों की भलाई के लिए उन्होंने अडयार में अपने घर से ही 'अव्वै होम' की शुरुआत करके समाज को एक नई दिशा देने का प्रयास किया।

उनकी बहन की मृत्यु कैंसर की वजह से हो गई, इससे उन्हें भारी सदमा लगा। फिर सन् 1954 में उन्होंने कैंसर के मरीजों के लिए अडयार में एक कैंसर संस्थान की स्थापना कराई। आज भी यह अडयार कैंसर संस्थान अपनी सेवाएँ देश को प्रदान कर रहा है। उन्होंने महिला कल्याण व समाज सेवा के खातिर अपना जीवन समर्पित किया।

इसीलिए जब देश आजाद हुआ और लालकिले पर तिरंगा फहराया गया, तब तिरंगा फहराने वालों की सूची में उनके नाम को भी शामिल किया गया। सन् 1956 में उन्हें पद्मभूषण की उपाधि से सम्मानित किया गया। सन् 1968 में उनकी मृत्यु हो गई।

इस महान व्यक्तित्व की धनी महिला का नाम डॉ मुत्तुलक्ष्मी रेड्डी था। डॉ रेड्डी के पिता का नाम नारायण स्वामी अय्यर था, जो महाराज कॉलेज के प्रिंसिपल थे। इनकी माता का नाम चंद्रम्मा था, जो एक देवदासी थीं।

डॉ मुत्तुलक्ष्मी रेड्डी न केवल देश की पहली महिला डॉक्टर थीं, बल्कि वे देश की पहली महिला सर्जन भी थीं। वे भारत में ब्रिटिश शासन के दौरान पहली महिला विधायी सदस्य भी थीं। उन्होंने समाज के दकियानूसी विचारों को धता बताते हुए एक स्वस्थ समाज की रचना में बहुत महत्वपूर्ण योगदान दिया। तमिलनाडु में उनके जन्मदिन 30 जुलाई को 'हॉस्पिटल दिवस' के रूप में मनाने की प्रथा है।

हिंदी पखवाड़े की झलकियाँ

समापन समारोह में पुरस्कार प्रदान करते हुए अध्यक्ष-सह-प्रबंध निदेशक श्री पी के रथ

उद्घाटन समारोह में अध्यक्ष महोदय के संदेश का विमोचन करते हुए निदेशक (परियोजना) श्री के के घोष

कार्यान्वयन दिवस के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान करते हुए निदेशक (वित्त) श्री वी वी वेणुगोपाल राव

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड की धमन भट्टी-3 का विहंगम दृश्य

राष्ट्रीय इस्पात निगम लिमिटेड RASHTRIYA ISPAT NIGAM LIMITED VIZAG STEEL Pride of Steel

- 3800 घनमीटर उपयोगी आयतन
- 2.5 मिलियन टन की वार्षिक क्षमता
- बी एल टी सहित अद्यतन प्रौद्योगिकी सुविधाएँ
- चूर्णित कोयला प्रेषण प्रणाली
- डी सी एस स्वचालन